Registered with the Registrar of Newspaper for India
R.N.I. Regd. No.: MPHIN/2006/16946
94251-01132

Supported by:
Kisaan Helpline
+91-7415538151

मध्य भारत कृषक भारती

हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली मासिक पत्रिका

READ FOR ONLINE EDITION
Website: www.krishakbharti.in
E-mail: bhartikrishak75@gmail.com

ISSN-2582-5976

वर्ष-20 अंक-08 ग्वालियर, नवम्बर -2025 मूल्य 30 रुपए

छत्तीसगढ़
बस्तर में कृषि क्रांति

25 वर्षों में फसल क्षेत्र दोगुना, बीज वितरण 10 गुना बढ़ा

- खेती का रकबा 1.58 लाख से बढ़कर 2 लाख हेक्टेयर
- बीज वितरण 10 गुना, सिंचाई क्षेत्र 7 गुना बढ़ा
- धान का दाम ₹510 से ₹3,100 प्रति क्विंटल
- किसानों की आय व खुशहाली में उल्लेखनीय वृद्धि
- बस्तर बन रहा नया "धान का कटोरा"
- सरकार की योजनाओं से खेती में आई नई ऊर्जा

मध्यप्रदेश: ग्रीन-एजी परियोजना के तहत कांटारहित कैक्टस खेती सीखने अमलाहा पहुंचे किसान

किसान कल्याण तथा कृषि विकास विभाग द्वारा खाद्य एवं कृषि संगठन की ग्रीन-एजी परियोजना के अंतर्गत मध्यप्रदेश के श्योपुर जिले के किसानों का एक दल डॉ. नीलम बिसेन पवार, राज्य तकनीकी समन्वयक, श्रीमती मिली मिश्रा, संचार अधिकारी और पशुपालन विशेषज्ञ अमृतेश वशिष्ठ के साथ सीहोर स्थित आईसीएआरडीए केंद्र, अमलाहा पहुँचा। इस दौरे का उद्देश्य किसानों को कांटारहित कैक्टस की खेती और उसके विविध उपयोगों के बारे में जानकारी देना था।

श्री गणेशाय नमः

श्री सॉवलिया सेठ

किसान कृषि सेवा केन्द्र

Gmail
Kisankrishisevakendramanasa@gmail.com
7692967419 9109726855

हमारी सेवाएँ:-

सभी तरह के उन्नत बीज- अश्वगंधा, अकरकरा, कलौंजी, तुलसी, केमोमाईल, चिया, जीरा, हल्दी, सौप, सर्पगंधा, तरबूज एवं सभी प्रकार की सब्जिया एवं फुलो के बीज, कृषि दवाईया, उर्वरक, वर्मी कम्पोस्ट यूनिट, अजोला यूनिट, किसान के घर पर तैयार वर्मी कम्पोस्ट, जैविक खेती से संबंधित सभी कार्य, सभी फसलो के फोरोमेन ट्रेप, सोयाबीन स्पाईरल ग्रेडर, कृषि एवं किसान संबंधित समस्त प्रकार के ऑर्डर की विश्वास पूर्ण, पूर्ति करना हमारा परम ध्येय है।

कृषि विभाग एवं उद्यानिकी विभाग संबंधित सभी योजनाओं के पंजियन किए जाते है।

उन्नत किस्म के नर्सरी के पौधे, मासिक, साप्ताहिक कृषि साहित्य सभी प्रकार की पत्रिका उपलब्ध है।

स्थान- पुराना टॉकीज, एल.आई.सी. ऑफिस के सामने, रामपुरा रोड़ मनासा जिला नीमच (म.प्र.) 458110

An ISO 9001:2008 Certified Company

कृषि दर्शन®
खेत-खलिहान का राजा

1988

सुदर्शन इण्डस्ट्रीज

विक्रम नगर मौलाना, बड़नगर, जिला-उज्जैन-456771 (म.प्र.)
फोन : 07367-262235, मोबा.: 09827078882
वेब : www.krishidarshan.com, ई-मेल : krishidarshan@rediffmail.com

जहरीली हवा में घुटती सांसें

दशकों से मीडिया व पर्यावरण संरक्षण से जुड़े लोग तथा संगठन, जिस प्रदूषण संकट के प्रति चेताते रहे हैं, उसके घातक परिणाम अब साफ सामने नजर आने लगे हैं। विडंबना यह है कि देश की राजधानी व राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र ही नहीं, अब देश के तमाम बड़े-छोटे शहरों से भी जानलेवा प्रदूषण की खबरें आ रही हैं। इस घातक व मारक संकट की पुष्टि बहुचर्चित मेडिकल जर्नल लैंसेट की हालिया रिपोर्ट करती है। रिपोर्ट दावा करती है कि देश की हवा में 2010 की तुलना में साल 2022 तक प्रदूषणवाहक पीएम 2.5 कणों की मात्रा में 38 फीसदी तक का बढ़ावा हुआ है। जिसका घातक प्रभाव यह है कि करीब सत्रह लाख लोग असमय काल-कवलित हो चले हैं। इससे होने वाला आर्थिक नुकसान अलग है। यह कहना कठिन है कि अंतर्राष्ट्रीय पत्रिका के आंकड़े कितने विश्वसनीय हैं। बहुत संभव है कि सरकारें इन आंकड़ों पर सहमति न जताएं, लेकिन दीपावली के बाद दिल्ली व राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र समेत देश के विभिन्न शहरों में प्रदूषण जिस घातक स्तर तक पहुंचा है, वह हालात के गंभीर होने की ओर इशारा तो करता ही है। एक अंतर्राष्ट्रीय एजेंसी ने दिल्ली को दुनिया के सबसे ज्यादा प्रदूषित शहर का खिताब भी दिया है। इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि अस्पतालों में प्रदूषणजनित रोगों का उपचार कराने वाले लोगों की संख्या में अप्रत्याशित वृद्धि देखी गई है। जीवन के संघर्ष में रोजी-रोटी की कवायद में जुटे लोगों को यह अहसास भी नहीं होता है कि वे दिन में कितनी जहरीली हवा निगल रहे हैं। हमारे शहर केंद्रित विकास की विसंगितयां भी शहरों में प्रदूषण का दायरा बढ़ा रही हैं। शहरों में उगते कंक्रीट के जंगल न केवल हवा के प्राकृतिक प्रवाह को बाधित कर रहे हैं बल्कि वाहनों के सैलाब को भी बढ़ावा दे रहे हैं। विडंबना यह है कि इसके बावजूद राजनीतिक दलों व सरकारों में वह इच्छाशक्ति नजर नहीं आती, जो इस संकट के कारगर समाधान की राह दिखाती हो।

निश्चित तौर पर प्रदूषण संकट की यह जानलेवा स्थिति हमें शर्मसार करने वाली है। यह हमारी सामूहिक विफलता की तसवीर भी उकेरती है। सर्दियों का मौसम आते ही दिल्ली व निकटवर्ती शहरों में जो प्रदूषण का बड़ा संकट दिखायी देता है, आखिर उसे साल भर सतर्कता के साथ क्यों नहीं देखा जाता। देश में आर्थिक असमानता व गरीबी के चलते लाखों लोग व बच्चे उन अस्वस्थकारी परिस्थितियों में काम करने को बाध्य हैं, जो कालांतर जानलेवा रोगों का सबब बनती हैं। देश में करोड़ों बाल श्रमिक पटाखा, कालीन और अन्य सांस के रोगों का संकट बढ़ाने वाले उद्योगों में काम कर रहे हैं। व्यवस्था का भ्रष्टाचार नियामक एजेंसियों को हिलने तक नहीं देता। दरअसल, यह प्रदूषण मौसमी बदलाव, पटाखों या पराली जलाने से ही नहीं पैदा होता।

भावान्तर योजना से किसानों के चेहरों पर आ रही मुस्कान

इन्दौर। मध्यप्रदेश शासन द्वारा किसानों को सोयाबीन की फसल का उचित लाभ देने के लिए भावान्तर योजना लागू की गई है। इस योजना का

वास्तविक रूप से क्रियान्वयन प्रारम्भ हुआ। पहले दिन इंदौर संभाग की मंडियों में किसानों और व्यापारियों में खासा उत्साह नजर आया है। सोयाबीन फसल विक्रय करने आए किसानों का फूलमाला पहनाकर स्वागत किया गया। मुहूर्त भाव में कृषि उपज मंडी समिति इंदौर के लक्ष्मीबाई नगर मुख्य मंडी प्रांगण में ग्राम रोजडी जिला इंदौर के कृषक श्री बलदेव का सोयाबीन 7001 रूपये प्रति क्विंटल के भाव से विक्रय हुआ। इसी प्रकार इंदौर जिले के ग्राम सनावदा, तहसील देपालपुर के कृषक श्री कल्याण सिंह पिता कालू सिंह का सोयाबीन 4775 रूपये प्रति क्विंटल के भाव पर विक्रय हुआ है, जो भावांतर योजना अंतर्गत पंजीकृत किसान है। सोयाबीन का भाव अच्छा मिलने से किसानों में खुशी का माहौल देखने में आ रहा है। इंदौर जिले की गौतमपुरा देपालपुर उपमंडी में सबसे अधिक कुल 407.99 टन सोयाबीन की आवक हुई, जो कि पूरे प्रदेश में सर्वाधिक है। इसी तरह गौतमपुरा मण्डी में 380.33 टन की आवक हुई, जो कि प्रदेश में सर्वाधिक आवक वाली टॉप 10 मंडियों में शामिल हैं।

सदस्यता ग्रहण करने एवं विज्ञापन प्रकाशन हेतु निम्न प्रतिनिधियों से सम्पर्क करें

छिंदवाड़ा (म.प्र.)
रामप्रकाश रघुवंशी
98272-78063

***

नरसिंहपुर (म.प्र.)
नवीन शुक्ला: 89894-36330

मुंगावली (म.प्र.)
भगवानदास चौबे
96854-88453

बलिया (उ.प्र.)
आर.एन. चौबे-94535-77732

पश्चिम बंगाल
राजेश नायक-98831-57482

उड़ीसा
समीर रंजन नायक
70422-31678

***

हापुड़ (उ.प्र.)
मयंक गौड़: 83848-66823

Online मंगाएं साहित्य

मध्यप्रदेश एवं छत्तीसगढ़ में अत्यंत लोकप्रिय हिन्दी मासिक समाचार पत्रिका **मध्य भारत कृषक भारती** द्वारा प्रकाशित कृषि साहित्य अब आप ऑनलाइन भी खरीद सकते हैं। हमारी वेबसाइट **www.krishakbharti.in** पर जाकर **Purchase** को क्लिक करके ऑनलाइन ऑर्डर कर सकते हैं।

वैज्ञानिक/लेखकों के लिए सूचना

प्रत्येक माह की 20 तारीख तक प्राप्त समाचार/लेख/फोटो फीचर को प्रिंट एडिशन में स्वीकार किया जाता है तथा 21 से 30 तारीख तक प्राप्त समाचार/लेख/फोटो फीचर को डिजीटल एडिशन में सम्मिलित किया जाना संभव हो सकेगा। लेख में मोबाइल नम्बर होना अनिवार्य है।

–संपादक

मध्य भारत कृषक भारती में प्रकाशित पाठ्य सामग्री में व्यक्त विचार वैज्ञानिकों/लेखकों के हैं। सम्पादक की सहमति अनिवार्य नहीं है। किसी त्रुटि शंका या समाधान के लिये वैज्ञानिकों/लेखकों के पते प्रकाशित किये जाते हैं जिस पर संपर्क किया जा सकता है। सभी प्रकार के विवादों के लिये न्याय क्षेत्र ग्वालियर होगा। सभी पद मानसेवी हैं।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in

मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

सदस्यता एवं विज्ञापन के लिए सम्पर्क करें
0751-4070802
▪ वार्षिक ₹ 400 ▪ द्विवार्षिक ₹ 750
▪ पंचवार्षिक ₹ 1800

▪ वर्ष 20 ▪ अंक 08 ग्वालियर, नवंबर 2025 मूल्य ₹ 30/-

: सम्पादक मण्डल :

प्रधान सम्पादक
राजू गुर्जर (MJC)
94251-01132
94245-22090
❖
प्रसार/मार्केटिंग टीम
डी.के. बरार
91791-85002, 70247-93010
महेश अहिरवार: 94251-48365

: तकनीकी मार्गदर्शन/वैज्ञानिकगण :

डॉ. व्ही.एस. तोमर (पूर्व कुलपति)
राजमाता विजयाराजे सिंधिया
कृषि विश्वविद्यालय
***
डॉ. अर्पिता श्रीवास्तव
(Assistant Professor)
पशु चिकित्सा एवं पशुपालन
महाविद्यालय रीवा (म.प्र.)
***
डॉ. आर.के.एस. तोमर
राजमाता विजयाराजे सिंधिया कृषि वि.वि.
ग्वालियर (म.प्र.)
***
डॉ. अनिल कुमार सिंह (उद्यान वैज्ञानिक)
कृषि विज्ञान केन्द्र, पीपराकोठी (पूर्वी चम्पारण),
डॉ.रा.प्र.के.कृ.वि.वि.,पूसा, समस्तीपुर

प्रो. (डॉ.) के. आर. मौर्य
पूर्व कुलपति, राजेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय
पूसा (बिहार), एवं महात्मा ज्योति राव फूले
विश्वविद्यालय जयपुर (राजस्थान)
***
डॉ. रंजु कुमारी (स.प्रा. सह कनीय वैज्ञानिक)
पादप प्रजनन एवं अनुवांशिकी विभाग, नालन्दा
उद्यान महाविद्यालय, नूरसराय (नालन्दा), बिहार
कृषि वि.वि.,सबौर, भागलपुर
***
डॉ. भागचन्द जैन
प्राध्यापक एवं प्रचार अधिकारी
कृषि महाविद्यालय, इंदिरा गांधी कृषि
विश्वविद्यालय रायपुर (छ.ग.)
***
डॉ. विश्वनाथ सिंह कंसाना
कृषि विज्ञान केन्द्र दतिया (म.प्र.)

डॉ. विनीता सिंह, अध्यक्ष
अनुवांशिकी एवं पौध प्रजनन विभाग
AKS विश्वविद्यालय, सतना (म.प्र.)
***
तपस्या तिवारी पीएचडी शोधार्थी, मृदा विज्ञान और
कृषि रसायन विज्ञान विभाग, चंद्रशेखर आज़ाद कृषि
और प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प्र.)
***
बसंत कुमार दादरवाल
इंस्टीट्यूट ऑफ एग्रीकल्चर साइंस बनारस
हिन्दू यूनिवर्सिटी वाराणसी (उ.प्र.)
***
श्रीमती रिया ठाकुर (वैज्ञानिक उद्यानिकी)
कृषि विज्ञान केन्द्र, चंदनगांव, छिंदवाड़ा (म.प्र.)
मोबाइल: 9907279542
***
डॉ. मोहब्बत सिंह जमरा (असिस्टेंट प्रोफेसर)
पशु चिकित्सा विज्ञान एवं पशुपालन
महाविद्यालय, महू, (म.प्र.)

अंदर के पन्नों पर

मध्यप्रदेश/छत्तीसगढ़

- मसूर की वैज्ञानिक उत्पादन तकनीक 07
- ट्रांसजेनिक फसलें: कृषि नवाचार पर एक वैश्विक .. 08
- प्राकृतिक खेती 09
- अरहर में बांझपन मोजैक रोग एवं इसका प्रबंधन 10
- रंग और स्वाद का संगम: टमाटर केचप 11
- चिया बीज: सेहत का खजाना 12
- किसान क्रेडिट कार्ड : किसानों की आर्थिक रीढ़ 13
- पॉलीहाउस: जलवायु अनुकूल उन्नत कृषि तकनीक 14
- आंवला की क्षमता का दोहन: बेहतर फल उत्पादन हेतु समाधान 15
- डेयरी पशुओं में बाह्य परजीवियों का संक्रमण एवं निदान 16
- मुर्गी पालन में रानीखेत और बर्ड फ्लू .. 17
- लहसुन की आधुनिक वैज्ञानिक खेती 18
- फसल विविधीकरण और आर्थिक लाभ 19
- कृषि का पुनर्जागरण: जलवायु परिवर्तन के दौर.. 20
- जिंक-युक्त हरी मटर: कुपोषण के खिलाफ.. 21
- श्रीअन्न खेती में उद्यमिता संवर्द्धन के अवसर 22
- फूलों की भाषा 23
- पशुओं में गलघोंटू रोग की लक्षण एवं उपचार 24
- छ.ग. के 25 वर्ष और कृषि विज्ञान का विकास 25

उत्तर प्रदेश

- जलवायु परिवर्तन अनुकूलन 26
- संदेश: बंगाल की प्रसिद्ध पारंपरिक मिठाई 27
- महिलाओं के लिए स्वास्थ्यवर्धक सुपरफूड है 'सहजन' 28
- फसल अवशेष प्रबन्धन का मृदा में प्रभाव 29
- भारत में चावल की खेती: प्रकार, जलवायु .. 30
- भारत की प्रमुख फसल प्रणाली 31
- पूर्वी उत्तरप्रदेश में अक्टूबर माह में उगाई जाने वाली फसलें.. 32
- कृषि में ड्रोन तकनीक: समय और संसाधन की बचत 33
- मिलेट्स के स्वास्थ्य लाभ: भारतीय किसानों के लिए एक वरदान 34
- अच्छे स्वास्थ्य और किसानों की आय बढ़ाने हेतु- सहजन .. 35
- जलवायु परिवर्तन का कृषि पर प्रभाव और उसके बचाव के उपाय 36
- कृषि वानिकी में सुदूर संवेदन का महत्व 37
- बीज उपचार, करने की विधियां और महत्व 38
- लेजर लेवलर तकनीक से पानी की बचत एवं उपज में बढ़त 39
- जलवायु परिवर्तन और किसान की चुनौती 40
- उत्तरप्रदेश के तराई क्षेत्रों में केले की खेती.. 41

राजस्थान

- पशुपालन और कानूनी ढांचा :.. 42
- दलहनी फसलों की मृदा सुधार एवं पर्यावरण .. 42
- राजस्थान की जलवायु क्षेत्रों में जीरा की उन्नत खेती 44
- सरसों की वृद्धि और विकास में पादप वृद्धि नियामकों .. 45
- राजस्थान के शुष्क क्षेत्रों की मिट्टियों में.. 46
- रासायनिक से बेहतर जैविक खेती 47

हरियाणा

- किचन गार्डनिंग: अपने आंगन में उगाएं सेहत और सुख 48
- पौधों और पशुओं में जीनोम एडिटिंग: .. 49

हिमाचल प्रदेश

- सब्ज़ी का जूस: जीवनदायी पेय या सॉफ्ट ड्रिंक.. 50

बेंगलुरु

- मिट्टी का रसायन: फसलों की जीवनरेखा 51

बिहार

- गुणवत्तापूर्ण हरे चारे हेतु रिजका की वैज्ञानिक खेती 52

झारखण्ड

- बेकरी इकाई: ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्र के लिए.. 53
- आलू चिप्स प्रसंस्करण इकाई: ग्रामीण तथा.. 55

उत्तराखण्ड

- लोबिया के प्रमुख रोग एवं उनका प्रबंधन 56

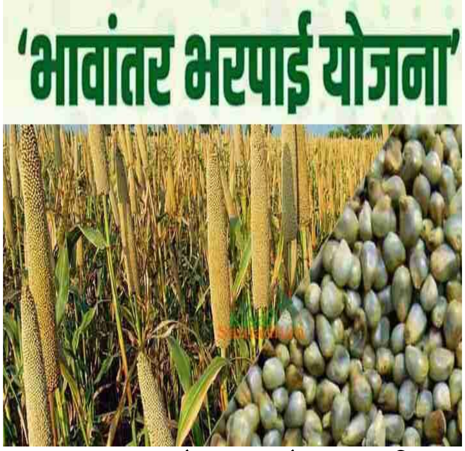

भावांतर योजना में समर्थन मूल्य के अंतर की राशि का भुगतान राज्य सरकार करेगी

भोपाल

किसान कल्याण एवं कृषि विकास मंत्री श्री एदल सिंह कंषाना ने कहा है कि भावांतर भुगतान योजना भारत सरकार की प्रधानमंत्री अन्नदाता आय संरक्षण अभियान अंतर्गत प्राईस डिफिसिट स्कीम के तहत संचालित की जा रही है। प्रदेश के किसानों की खरीफ 2025 में उत्पादित सोयाबीन उपज मंडियों में नीलामी प्रक्रिया के माध्यम से विक्रय होने पर विक्रय दर/मॉडल प्राईस से प्राप्त राशि एवं न्यूनतम समर्थन मूल्य के अंतर की राशि की प्रतिपूर्ति मध्यप्रदेश शासन द्वारा की जाना है। इस योजना के अंतर्गत समर्थन मूल्य तथा मॉडल प्राईस की भावांतर की राशि का भुगतान भारत सरकार / राज्य सरकार द्वारा किया जायेगा। मंडी समिति में किसानों द्वारा अपनी सोयाबीन उपज नीलामी किये जाने के उपरांत व्यापारी द्वारा राशि का भुगतान उसी दिन किसान को किया जायेगा।

किसानों को शासन द्वारा देय भावांतर राशि का भुगतान समय-सीमा में करने के लिए मंडी बोर्ड द्वारा अस्थाई रूप से ऋण की व्यवस्था की जायेगी, जिसकी प्रतिपूर्ति भारत सरकार / राज्य सरकार द्वारा निर्धारित समय अवधि में की जायेगी। इस योजना के तहत मंडी बोर्ड पर किसी तरह का अतिरिक्त व्यय-भार नहीं आयेगा। किसान कल्याण एवं कृषि विकास मंत्री श्री कंषाना ने कहा है कि भावांतर योजना के संबंध में शासन द्वारा लिए गए निर्णय सर्वमान्य और किसान हित में है।

जनजातीय समुदाय की समृद्धि के लिए संकल्पित राज्य सरकार

भोपाल। मुख्यमंत्री डॉ. मोहन यादव ने कहा है कि राज्य सरकार जनजातीय समुदाय की समृद्धि के लिए संकल्पित है। सरकार के रणनीतिक प्रयासों से विकास के हर क्षेत्र में जनजातीय समुदाय आगे बढ़ रहा है। जनजातीय कल्याण की योजनाओं के लिए बजट बढ़ाकर 47 हजार 295 करोड़ किया गया है जो पिछले वर्ष से 6,491 करोड़ रूपये ज्यादा है। सरकार के सतत् प्रयासों से मध्यप्रदेश आज जनजातीय कल्याण के क्षेत्र में देश का अग्रणी प्रदेश बनकर उभर रहा है। मुख्यमंत्री डॉ. यादव ने कहा कि जनजातीय समुदायों को आर्थिक विकास के भरपूर अवसर दिए जा रहे हैं। उन्होंने कहा कि 'सबका साथ-सबका विकास' दर्शन अपनाते हुए जनजातीय समुदायों योजनाओं का लाभ दिलाने के साथ उन्हें समाज की मुख्यधारा से जोड़कर आत्मनिर्भर बनाया जा रहा है। मुख्यमंत्री डॉ. यादव ने कहा कि विशेष रूप से पिछ्डी और कमजोर जनजातियों (पीवीटीजी) के समग्र विकास और कल्याण के लिए मध्यप्रदेश सरकार ने कई ऐतिहासिक प्रयास और नवाचार किए हैं। जनजातीय समुदाय के जीवन स्तर को गुणवत्तापूर्ण बनाने और देशज संस्कृति को संरक्षित रखने के लिए समर्पित प्रयास किए गए हैं। परिणामस्वरूप जनजातीय समुदाय को न केवल अपने अधिकार मिले हैं, बल्कि संस्कृति की भी रक्षा हुई है। मुख्यमंत्री डॉ. यादव ने कहा कि शिक्षा के लोकव्यापीकरण के जरिए जनजातीय युवाओं को चयन प्रतिस्पर्धाओं में भाग लेने के अवसर दिए जा रहे हैं। उन्हें आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनने के लिए आजीविका के नए-नए विकल्प और जरूरी साधन भी दिए जा रहे हैं। आदि संस्कृति को आजीविका से जोड़ने की पहल की गई है। जनजातीय समुदायों के जन, जल, जंगल, जमीन और वन्यप्राणियों की नैसर्गिक सुरक्षा के अधिकार से लेकर वन अधिकार पत्र और इनकी आजीविका, शिक्षा, स्वास्थ्य, सांस्कृतिक संरक्षण के लिए भी सरकार ने व्यापक दृष्टिकोण अपनाया है।

पेसा नियमों से सशक्त हुई ग्राम सभाएं

मध्यप्रदेश में पेसा नियमों के प्रभावी क्रियान्वयन से जनजातीय ग्राम सभाओं को अपने जैविक संसाधनों, भूमि, जल, वन और पारम्परिक व्यवस्थाओं पर अधिकार प्राप्त हुए हैं। अब ग्राम सभाएं विकास योजनाओं में निर्णायक भूमिका निभा रही हैं, जिससे जनजातीय अंचलों में स्वशासन की दिशा में एक सशक्त आधार स्थापित हुआ है। वे अपने गांवों की विकास योजनाएं खुद बना रही हैं।

शीतला कृषि सेवा केन्द्र
बंटी सिंह गुर्जर (बामौर वाले)
99267-31867, 83055-69923
खाद, बीज एवं कीटनाशक दवाओं के थोक एवं खेरिज विक्रेता

हमारे यहां धान, गेहूँ, सोयाबीन, सरसों, तिली एवं सब्जियों के बीज, खाद एवं उच्चकोटि की कीटनाशक दवाईयां उचित मूल्य पर मिलती है।
पता : पशु अस्पताल के सामने, भितरवार रोड, डबरा ग्वालियर (म.प्र.)
01/205-26

मध्यप्रदेश की क्षेत्रीय साझेदारियों से खुलेगा विकास का द्वार

राम वन पथ गमन से टाइगर कॉरिडोर तक, मध्यप्रदेश की क्षेत्रीय पहल से मध्य भारत बनेगा पर्यटन हब

भोपाल

पर्यटन राज्य मंत्री (स्वतंत्र प्रभार) श्री धर्मेन्द्र भाव सिंह लोधी ने कहा है कि पर्यटन का भविष्य साझेदारी में निहित है। उन्होंने कहा कि सांस्कृतिक, आध्यात्मिक और पारिस्थितिक ताने-बाने से जुड़े हमारे राज्य मिलकर ऐसे संयुक्त पर्यटन परिपथ और अनुभव गढ़ने का प्रयास कर रहे हैं, जो न केवल घरेलू बल्कि अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भी मध्य भारत को एक नई पहचान देंगे। पर्यटन मंत्री श्री लोधी मध्यप्रदेश ट्रेवल मार्ट के दूसरे दिन फॉस्टरिंग इन्टर स्टेट टूरिज्म कोलेबरेशन विषय चर्चा कर रहे थे। मध्यप्रदेश न केवल भौगोलिक रूप से, बल्कि सांस्कृतिक रूप से भी भारत का केंद्र है। हमें यह समझना होगा कि अकेले आगे बढ़ने की बजाय मिलकर चलना ज्यादा प्रभावी होता है।

अपर मुख्य सचिव पर्यटन व संस्कृति एव प्रबंधन संचालक मध्यप्रदेश टूरिज्म बोर्ड श्री शिवशेखर शुक्ल ने कहा कि मध्यप्रदेश अब एक विविधतापूर्ण, बहुआयामी और ऑफबीट पर्यटन गंतव्य के रूप में राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर अपनी अलग पहचान बना रहा है। यहां विरासत, वन्यजीवन, रोमांच, संस्कृति, कला, हस्तशिल्प और पाक-परंपराओं का अनूठा संगम देखने को मिलता है। उन्होंने कहा कि मध्यप्रदेश की सीमा से लगे अन्य राज्य जैसे छत्तीसगढ़ से राम वन पथ गमन सर्किट, महाराष्ट्र के साथ ज्योतिर्लिंग सर्किट जैसे संयुक्त कार्यों पर काम किया जा सकता है। उन्होंने कहा कि इसके अतिरिक्त टाइगर कॉरिडोर, फिल्म पर्यटन और ईको टूरिज्म के साझा विकास की संभावना भी तलाशी जा सकती है।

मध्यप्रदेश टूरिज्म बोर्ड के उप संचालक श्री युवराज पड़ोले ने बताया कि मध्यप्रदेश में राज्य पुरातत्व विभाग द्वारा संरक्षित 498 स्मारक हैं, भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण द्वारा संरक्षित 290 स्मारक, स्थायी यूनेस्को विश्व धरोहर 3 स्थल, यूनेस्को की संभावित सूची में शामिल 15 स्थल हैं। यूनेस्को द्वारा मान्यता प्राप्त रचनात्मक शहर की श्रेणी में संगीत के लिए ङ्क ग्वालियर, साहित्य के लिए भोपाल का चुना गया है। मांडू, ओरछा, चंदेरी, बुरहानपुर और खजुराहो जैसे ऐतिहासिक शहरों की मध्यकालीन भव्यता दर्शकों को मंत्रमुग्ध करती है।

मध्य प्रदेश में निवेशकों के लिए हैं सर्वाधिक अनुकूल वातावरण

भोपाल। मध्यप्रदेश ट्रैवल मार्ट के दूसरे दिन पर्यटन की संभावनाओं पर केंद्रित पहले पैनल डिस्कशन में "मध्यप्रदेशः हिडन जेम से ग्लोबल आइकन तक" विषय पर विशेषज्ञों ने माना कि म.प्र. उत्कृष्ट पर्यटन की दिशा में आगे बढ़ा है। इस सत्र में राज्य की धरोहर, वन्य जीवन, इको-टूरिज्म और उत्सवों पर विचार साझा किए। अपर मुख्य सचिव, पर्यटन व संस्कृति एवं प्रबंध संचालक, मध्यप्रदेश टूरिज्म बोर्ड श्री शिवशेखर शुक्ला ने कहा कि मध्यप्रदेश का लक्ष्य एक ऐसे सशक्त और गतिशील इकोसिस्टम को विकसित करना है जो पर्यटन और व्यापार को एकीकृत करे और 'फ्रॉम हिडन जेम टू ग्लोबल आइकॉन' की थीम को साकार रूप दे। राज्य अब एक उत्कृष्ट पर्यटन गंतव्य के रूप में विकसित हो चुका है, जो विरासत, वन्यजीव, संस्कृति और आतिथ्य के अद्वितीय अनुभव प्रदान करता है। नई नीतिगत रूपरेखा के माध्यम से हम हॉस्पिटैलिटी सेक्टर की नींव को और मजबूत कर रहे हैं।

12/2025-26

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in

मसूर की वैज्ञानिक उत्पादन तकनीक

डॉ. अजय सिंह बी.टी.एम. (आत्मा) किसान कल्याण तथा कृषि विकास, विखं-जौरा, जिला-मुरैना (म.प्र.)

जयदीप सिंह भदौरिया कृषि विस्तार अधिकारी किसान कल्याण तथा कृषि विकास विकासखंड जौरा जिला मुरैना (म.प्र.)

श्रीमती सुजाता राजावत ग्रामीण उद्यान विस्तार अधिकारी, उद्यानिकी एवं खाद्य प्रसंस्करण विभाग, विखं-जौरा, जिला-मुरैना (म.प्र.)

रबी की दलहनी फसलों में मसूर का प्रमुख स्थान है। यहां की एक बहुप्रचलित एवं लोकप्रिय दलहनी फसल है जिसकी खेती प्रायः हर राज्य में की जाती है। कृषि वैज्ञानिकों का ऐसा मानना है कि धान के कटोरे में दलहन की खेती की भी अपार संभावनाएं हैं। इसकी खेती प्रायः असिंचित क्षेत्रों में धान के फसल के बाद की जाती है। उन्नतशील उत्पादन तकनीकों का प्रयोग करके मसूर की उपज में बढ़ोतरी की जा सकती है।

जलवायु: मसूर के लिए समशीतोष्ण जलवायु की आवश्यकता होती है। ऊष्ण-कटिबंधीय व उपोष्ण-कटिबंधीय क्षेत्रों में मसूर शरद ऋतु की फसल के रूप में उगाई जाती है। विभिन्न स्थानों पर विभिन्न प्रकार की जलवायु में मसूर की फसल समुद्री सतह से लगभग 3500 मीटर की ऊंचाई तक उगाई जाती है। पौधों की वृद्धि के लिए अपेक्षाकृत अधिक ठंडी जलवायु की आवश्यकता होती है। अतः भारत में मसूर की फसल रबी की ऋतु में उगाई जाती है। उन सभी स्थानों पर 80-100 सेंमी तक वार्षिक वर्षा होती है। मसूर की फसल बिना वर्षा के भी उगाई जा सकती है। जहां परन्तु कम वर्षा वाले स्थानों पर सिंचाइयों की सुविधा उपलब्ध होना अतिआवश्यक है। अधिक वर्षा फसल के लिए हानिकारक होती है।

भूमि का चयन: मसूर की खेती के लिए दोमट मिट्टी काफी उपयोगी होती है। नमीयुक्त मटियार खेत में धान की अगेती फसल के बाद या फिर खाली पड़े खेत में मसूर की खेतीबारी आसानीपूर्वक की जा सकती है।

खेत की तैयारी: मसूर की खेती के लिए खेत को 2-3 बार देशी हल अथवा कल्टीवेटर से जुताई कर मिट्टी को भुर-भुरी बना देते हैं। बीज की बुआई जीरो टिलेज मशीन से करने के बाद कल्टीवेटर या रोटावेटर से जुताई कर खेत भुरभुरा करना पड़ता है।

मसूर बोने का समय: दलहन की बुआई के लिए वैसे तो असिंचित क्षेत्र में 15 से 31 अक्टूबर के बीच का समय उपयुक्त माना गया है। किन्तु सिंचित इलाकों में इसकी बुआई का समय 15 नवम्बर तक निर्धारित किया गया है। मसूर की उन्नत प्रजातियां को 15 अक्टूबर से 25 नवम्बर के बीज बुवाई कर देनी चाहिए।

मसूर की छोटे दाने की प्रजातियां

पंत के 639: यह प्रजाति 135-140 दिन में तैयार हो जाती है। यह जड़ सड़न एवं उकठा रोग के लिए प्रतिरोधी मानी जाती है।

पी.एल. 406: यह प्रभेद 140-145 दिन में तैयार होती है। इसमें रस्ट, बिल्ट एवं अट रोग से लड़ने की क्षमता होती है।

एच.यू.एल. 57: यह प्रजाति 120-125 दिन में परिपक्व हो जाती है तथा इसमें भी जड़ सड़न एवं उकठा रोग से लड़ने की क्षमता है।

के.एल.एस. 218: यह प्रजाति 120-125 दिन में तैयार हो जाती है।

मसूर की बड़े दाने वाली प्रजातियां

पी.एल. 77-12 (अरूण): यह प्रभेद 115-120 दिन में परिपक्व हो जाती है। रस्ट एवं इकठा रोग से लड़ने की क्षमता होती है।

के. 75 (मल्लिका): यह 130-135 दिन में तैयार होता है। उकठा रोग के लिए यह प्रतिरोधी मानी जाती है।

बीज की मात्रा एवं बोने की विधि: छोट दानों वाले किस्मों के लिए एक हेक्टेयर क्षेत्रफल में बुवाई के लिए 35-40 किलोग्राम बीज की जरूरत पड़ती है। जबकी बड़े दानों वाले किस्मों के लिए 50-55 किलोग्राम बीज की आवश्यकता होती है। बुवाई के समय किस्मों के आधार पर कतार से कतार एवं पौधे से पौधे की दूरी क्रमशः 25 से.मी. व 10 से.मी. रखनी चाहिए।

बीजोपचार: प्रारंभिक अवस्था के रोगों से बचाने के लिए बुवाई से पहले मसूर के बीजों को सही उपचार करना जरूरी होता है। इसके लिए ट्राइकोडर्मा विरीडी 5 ग्राम प्रति किलों बीज या कार्बेन्डाजिन 2.0 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचारित करना चाहिए। बीजोपचार में सबसे पहले कवकनाशी तत्पश्चात् कीटनाशी एवं सबसे बाद में राजोबियम कल्चर से उपचारित करने का क्रम अनिवार्य होता है।

उर्वरकों का प्रयोग: मिट्टी परीक्षण के आधार पर ही उर्वरकों का प्रयोग आवश्यकतानुसार करना चाहिए। सामान्य परिस्थिति में 20 किलो नत्रजन, 40 किलोग्राम स्फूर एवं 20 किलोग्राम गंधक प्रति हेक्टेयर उपयोग करना चाहिए। प्रायः असिंचित क्षेत्रों में स्फूर की उपलब्धता घट जाती है। इसके लिए पी.एस.बी. का भी प्रयोग कर सकते हैं। 4 किलो पी.एस.बी. (जैविक उर्वरक) को 50 किलोग्राम कम्पोस्ट में मिलाकर खेतों में बुवाई पूर्व व्यवहार करें।

सिंचाई: जिन खेतों के नमी की कमी पाई जाती है। वहां एक सिंचाई (बुवाई के 45 दिन बाद) अधिक लाभकारी होती है। खेतों में पानी का जमाव नहीं होना चाहिए, इससे फसल प्रभावित हो जाती है।

खरपतवार नियंत्रण: इस फसल में बोनी के बाद 50 दिनो तक खरपतवारों को नियंत्रण में रखना चाहिए, नहीं तो इसकी बढ़वार में दुष्प्रभाव पड़ेगा। मसूर में खरपतवार की समस्या सिंचित फसल या मावट की वर्षा होने पर हो सकती है। ऐसी स्थिति में 'हो यंत्र' एवं 'हो साइकिल यंत्र' चलाकर खरपतवार नियंत्रण करना चाहिए। इससे गुड़ाई भी हो जाएगी। भूमि में वायु संचार बढ़ेगा जो कि स्वास्थ के लिए अति आवश्याक है।

कटाई एवं गहाई: परिपक्व अवस्था में मसूर की फसल हरे से भूरे रंग की होने लगती है। तब फसल की कटाई सुबह जब थोड़ी ठंड एवं नमी रहती है, तब करना चाहिए जिससे बीज कम झड़ते हैं। फसल को काटकर खलिहान में अच्छे से सुखाना चाहिए। फिर डंडों से पीटकर एवं बैलों से गहाई करवाकर पंखे से साफ करना चाहिए। दांतों के बीज को रखकर काटने से यदि कट की आवाज आए तो भण्डारण के लिए उचित मानना चाहिए।

उपज : कृषि की उन्नत तकनीकों को अपनाकर मसूर फसल से विपुल उत्पादन प्राप्त कर सकते हैं। किस्म के अनुसार बारानी क्षेत्रों में 8-10 क्विंटल व सिंचाई करने पर 15-16 क्विंटल मसूर की उपज प्रति हेक्टेयर प्राप्त होती है।

पौध सुरक्षा

रोग-उकठा रोग: रोग का प्रकोप होने पर फसल की जड़ें गहरे भूरे रंग की हो जाती हैं तथा पत्तियां नीचे से ऊपर की ओर पीली पड़ने लगती हैं तथा बाद में सम्पूर्ण पौधा सूख जाता है। किसी-किसी पौधे की जड़ें शिरा सड़ने से छोटी रह जाती है।

कालर राट या पद गलन: यह रोग पौधे पर प्रारंभिक अवस्था में होता है। पौधे का तना भूमि सतह के पास सड़ जाता है जिससे पौधा खिचने पर बड़ी आसानी से निकल आता है। सड़े हुए भाग पर सफेद फफूंद उग आती है जो सरसों की राई के समान भूरे दाने वाले फफूंद के स्कलेरोशिया है।

जड़ सड़न: यह रोग मसूर के पौधो पर देरी से प्रकट होता है। रोग ग्रसित पौधे खेत में जगह जगह टुकड़ों में दिखाई देते हैं व पत्ते पीले पड़ जाते हैं तथा पौधे सूख जाते हैं। जड़े काली पड़कर सड़ जाती है तथा उखाड़ने पर अधिकतर पौधे टूट जाते हैं व जड़ें भूमि में ही रह जाती है।

रोग प्रबंधन

* गर्मियों में गहरी जुताई करें। ठु खेत में पकी हुई गोवर की खाद का ही प्रयोग करें।
* संतुलित मात्रा में खाद एवं उर्वरकों का प्रयोग करे।
* बीज को 2 ग्राम थाइरम +1 ग्राम कार्बेन्डाजिम से एक किलोग्राम बीज या कार्बोक्सिन 2 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित कर बोआई करनी चाहिए
* उक्टा निरोधक व सहनशील जातियां जैसे जे.एल 3,जे.एल 1, नूरी, आई.पी.एल 81, आर.व्ही.एल 31 का प्रयोग करें।

गेरूई रोग: इस रोग का प्रकोप जनवरी माह से प्रभावित होता है तथा संवेदनशील किस्मों में इससे अधिक क्षति होती है। इस रोग का प्रकोप होने पर सर्वप्रथम पत्तियां तथा तनों पर भूरे अथवा गुलाबी रंग के फफोले दिखाई देते हैं जो बाद में काले पड़ जाते हैं रोग का भीषण प्रकोप होने पर संपूर्ण पौधा सूख जाता है।

रोग का प्रबंधन: प्रभावित फसल में 0.3% मेन्कोजेब एम-45 का 15 दिन के अंतर पर दो बार अथवा हेक्जाकोनाजोल 0.1% की दर से छिड़काव करना चाहिए।

कीट नियंत्रणः मसूर की फसल में मुख्य रूप से माहू तथा फलीछेदक कीट का प्रकोप होता है। माहू का नियंत्रण इमिडाक्लोरपिड 150 मिलीलीटर/ हे. एवं फलीछेदक हेतु इमामेक्टीन बेजोइट 100 ग्रा. प्रति हे. की दर से छिड़काव करना चाहिए।

ट्रांसजेनिक फसलें: कृषि नवाचार पर एक वैश्विक और भारतीय परिप्रेक्ष्य

कार्तिकेय पांडेय (शोध छात्र) पादप रोग विज्ञान, जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

पावन चौकसे (शोध (छात्र) पादप जैव प्रौद्योगिकी, जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

रवलीन कौर बडवाल शोध छात्रा, अनुवांशिकी एवं पादप प्रजनन, जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय जबलपुर

श्रद्धा परमार (शोध छात्रा) कीट विज्ञान, राजमाता विजयाराजे सिंधिया कृषि विश्वविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)

बढ़ती वैश्विक आबादी, जलवायु परिवर्तन की बढ़ती चुनौतियाँ, कीटों का व्यापक प्रकोप और कृषि योग्य भूमि की घटती उपलब्धता, कृषि उत्पादकता में एक मौलिक बदलाव की आवश्यकता को दर्शाती है। इस महत्वपूर्ण मोड़ पर, ट्रांसजेनिक फसलें, जिन्हें अक्सर बोलचाल की भाषा में आनुवांशिक रूप से संशोधित फसलें कहा जाता है, एक शक्तिशाली, हालांकि विवादास्पद, जैव-तकनीकी हस्तक्षेप के रूप में उभरी हैं। इन फसलों को अन्य जीवों से आनुवांशिक सामग्री के सटीक प्रवेश के माध्यम से नए गुणों को व्यक्त करने के लिए इंजीनियर किया जाता है, जो खाद्य सुरक्षा बढ़ाने, पोषण मूल्य में सुधार करने और टिकाऊ कृषि पद्धतियों को बढ़ावा देने की अपार संभावनाएँ रखती हैं। 1970 के दशक में रिकॉम्बिनेंट डीएनए प्रौद्योगिकी के आगमन ने आनुवांशिक इंजीनियरिंग के लिए मूलभूत आधार तैयार किया, जिससे एक जीव के जीनोम के सटीक हेरफेर को सक्षम किया गया। पहली व्यावसायिक जीएम फसल, देरी से पकने वाली फ्लेवर सैवर टमाटर, 1994 में पेश की गई थी। तब से, ट्रांसजेनिक फसलों का परिदृश्य नाटकीय रूप से विस्तारित हुआ है, जो मुख्य रूप से खरपतवारनाशक सहिष्णुता और कीट प्रतिरोध प्रदान करने वाले गुणों से प्रेरित है। फसलों में बैसिलस थुरिंगिएंसिस (Bt) जीन डालने का अग्रणी कार्य इस परिवर्तनकारी क्षमता का एक उदाहरण है। यह इस तरह काम करता है क्योंकि (Bt) जीन एक विशेष प्रोटीन बनाता है जो एक 'सुप्त' रसायन की तरह काम करता है। जब कोई विशिष्ट कीट, जैसे कि बॉलवर्म, पौधे को खाता है, तो यह 'सुप्त' रसायन केवल उस कीट की अनूठी पेट की परिस्थितियों में सक्रिय होता है, जिससे कीट की आंत में छोटे-छोटे छेद हो जाते हैं, जो उसे खाने से रोकता है और अंततः उसकी मृत्यु का कारण बनता है। महत्वपूर्ण रूप से, यह विशेष प्रोटीन मनुष्यों, पशुधन और अन्य लाभकारी कीटों के लिए सुरक्षित है, क्योंकि यह केवल अपने लक्षित कीटों के विशिष्ट पेट के वातावरण में सक्रिय होता है। यह तकनीकी विकास कृषि उन्नति के लिए आणविक जीव विज्ञान का उपयोग करने के लिए एक निरंतर वैज्ञानिक प्रयास को दर्शाता है। ट्रांसजेनिक फसलों को वैश्विक स्तर पर अपनाने में उनके प्रारंभ के बाद से एक उल्लेखनीय वृद्धि देखी गई है। 2024 में, दुनिया भर में लगभग 20.98 करोड़ हेक्टेयर जीएम फसलों की खेती की गई, जिसमें संयुक्त राष्ट्र अमेरिका, ब्राजील, अर्जेंटीना, कनाडा और भारत इस क्षेत्र के एक बड़े हिस्से का प्रतिनिधित्व करते हैं। विश्व स्तर पर खेती की जाने वाली प्रमुख जीएम फसलों में सोयाबीन, मक्का, कपास और कैनोला शामिल हैं, जिन्हें मुख्य रूप से खरपतवारनाशक सहिष्णुता और कीट प्रतिरोध के लिए इंजीनियर किया गया है। इस व्यापक अपनाने के पीछे के लाभ बहुत लुभावने हैं: कीटों, बीमारियों और सूखे जैसे पर्यावरणीय तनावों के प्रति बढ़ी हुई प्रतिरोधक क्षमता के कारण बढ़ी हुई उत्पादकताय सिंथेटिक कीटनाशकों पर निर्भरता कम होने से किसानों के लिए निविष्टि लागत में कमी और अधिक स्थिर व विश्वसनीय पैदावार के माध्यम से खाद्य सुरक्षा और गरीबी उन्मूलन में प्रत्यक्ष योगदान। इसके अलावा, खरपतवारनाशक-सहिष्णु किस्में बिना जुताई वाली या कम जुताई वाली खेती को सुविधाजनक बनाती हैं, जो अधिक टिकाऊ कृषि पद्धतियों में योगदान करती हैं। भारत में ट्रांसजेनिक फसलों की सबसे प्रमुख सफलता की कहानी Bt कपास है। 2002 में व्यावसायिक खेती के लिए अनुमोदित, ठज कपास ने कपास उद्योग को तेजी से बदल दिया। इसने विनाशकारी कपास बॉलवर्म के खिलाफ प्रभावी नियंत्रण प्रदान किया, जिससे कीटनाशकों का उपयोग काफी कम हुआ और पैदावार बढ़ी।

बदलती धारणाएँ: भारत द्वारा कृषि जैव-प्रौद्योगिकी को अपनाना: भारतीय वैज्ञानिक समुदाय, एक लंबे समय से, कृषि जैव-प्रौद्योगिकी का एक मजबूत समर्थक रहा है, जो अपनी विशाल और बढ़ती आबादी के लिए खेती में क्रांति लाने और खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने की अपनी गहन क्षमता को पहचानता है। देश भर के शोधकर्ता सक्रिय रूप से अत्याधुनिक जैव-तकनीकी अनुसंधान में लगे हुए हैं, कीटों, बीमारियों और सूखे व लवणता जैसे पर्यावरणीय तनावों के प्रति प्रतिरोधी नई फसल किस्में विकसित कर रहे हैं। यह सक्रिय जुड़ाव पारंपरिक प्रजनन विधियों की सीमाओं की गहरी समझ से उपजा है, जो जटिल कृषि समस्याओं से निपटने में अकेले अक्षम हैं। वे इन तकनीकों को पारंपरिक प्रथाओं के प्रतिस्थापन के रूप में नहीं, बल्कि शक्तिशाली पूरक उपकरणों के रूप में देखते हैं जो फसल सुधार को गति दे सकते हैं और ऐसी तरीकों से उत्पादकता बढ़ा सकते हैं जिनकी पहले कल्पना भी नहीं की जा सकती थी। वैज्ञानिक सर्वसम्मति काफी हद तक इन हस्तक्षेपों की सुरक्षा और प्रभावकारिता का समर्थन करती है, बशर्ते कि वे कठोर नियामक निरीक्षण के अधीन हों। जबकि आनुवांशिक रूप से संशोधित फसलों के संबंध में भारत में सार्वजनिक धारणा ऐतिहासिक रूप से सावधानी और, कभी-कभी, कड़े विरोध से चिह्नित रही है जैसा - कि ठज बैंगन पर स्थगन के साथ देखा गया था - स्वीकृति और समझ की दिशा में एक स्पष्ट और बढ़ता बदलाव है। यह बदलाव आंशिक रूप से ठज कपास की अखंडनीय, जमीनी स्तर पर मिली सफलता के कारण है, जिसने कीटनाशकों के उपयोग को कम करके और पैदावार बढ़ाकर लाखों कपास किसानों की आजीविका में उल्लेखनीय सुधार किया है। जिन किसानों ने इन प्रत्यक्ष लाभों का पितेजींदक अनुभव किया है, वे अक्सर प्रौद्योगिकी के शक्तिशाली समर्थक बन जाते हैं।

ट्रांसजेनिक दृष्टिकोणों के माध्यम से गुणवत्तापूर्ण खाद्य उत्पादन को बढ़ाना: केवल पैदावार बढ़ाने और जैविक और अजैविक तनावों के प्रति प्रतिरोध प्रदान करने से परे, ट्रांसजेनिक दृष्टिकोणों में खाद्य उत्पादन की गुणवत्ता में उल्लेखनीय सुधार करने की अपार क्षमता है। यह केवल मात्रा से बढ़कर उपभोक्ताओं को अधिक पौष्टिक, सुरक्षित और यहां तक कि अधिक आकर्षक भोजन प्रदान करने तक फैला हुआ है, जिससे छिपी हुई भूख और उपभोक्ता वरीयताओं को संबोधित किया जा सके।

पोषण वृद्धि (बायोफोर्टिफिकेशन): ट्रांसजेनिक प्रौद्योगिकी मुख्य फसलों की पोषण सामग्री को गहनता से बढ़ा सकती है, सीधे लाखों लोगों को प्रभावित करने वाली व्यापक सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी को संबोधित कर सकती है। एक प्रमुख उदाहरण गोल्डन राइस है, जिसे बीटा-कैरोटीन, विटामिन ए का एक महत्वपूर्ण अग्रदूत, का उत्पादन करने के लिए इंजीनियर किया गया है। इसका उपयोग विटामिन ए की कमी से लड़ सकता है, जो कई विकासशील देशों में एक बड़ी सार्वजनिक स्वास्थ्य समस्या है, जिससे अंधापन और कमजोर प्रतिरक्षा प्रणाली हो सकती है। इसी तरह, लौह और जस्ता जैसे आवश्यक खनिजों के स्वाभाविक रूप से उच्च स्तर वाली फसलों, और महत्वपूर्ण अमीनो एसिड के बेहतर प्रोफाइल वाली फसलों को विकसित करने पर सक्रिय शोध केंद्रित है, जिससे विशिष्ट मुख्य खाद्य पदार्थों पर भारी निर्भर आबादी के लिए समग्र आहार गुणवत्ता में वृद्धि हो सके।

कम एलर्जीजनकता: गंभीर खाद्य एलर्जी वाले व्यक्तियों के लिए, ट्रांसजेनिक दृष्टिकोण एलर्जी पैदा करने वाले यौगिकों को काफी कम या पूरी तरह से समाप्त करने वाली फसलों को विकसित करने का एक आशाजनक मार्ग प्रदान करते हैं। वैज्ञानिक मूंगफली या सोयाबीन जैसी आम एलर्जी वाली फसलों में विशिष्ट एलर्जी पैदा करने के लिए जिम्मेदार जीनों की सटीक पहचान और उन्हें शांत कर सकते हैं, जिससे इन खाद्य पदार्थों को संवेदनशील व्यक्तियों द्वारा उपभोग के लिए सुरक्षित बनाया जा सके और आहार विकल्पों का विस्तार किया जा सके।

बेहतर शेल्फ लाइफ और कम कटाई के बाद नुकसान: ट्रांसजेनिक संशोधन पकने में देरी करके या खराब होने की प्रक्रिया को धीमा करके अत्यधिक खराब होने वाले उत्पादों की शेल्फ लाइफ को प्रभावी ढंग से बढ़ा सकते हैं। फ्लेवर सैवर टमाटर, उदाहरण के लिए, फल नरम करने में शामिल एक महत्वपूर्ण एंजाइम की गतिविधि को कम करके इसे प्राप्त करना चाहता था। इस तरह की प्रगति कटाई के बाद होने वाले भारी नुकसान को कम करने के लिए महत्वपूर्ण है, जो कई कृषि आपूर्ति श्रृंखलाओं में एक व्यापक चुनौती है, यह सुनिश्चित करते हुए कि अधिक भोजन अच्छी स्थिति में उपभोक्ताओं तक पहुंचता है और भोजन की बर्बादी को काफी कम करता है।

बढ़ी हुई प्रसंस्करण गुणवत्ताएँ: ट्रांसजेनिक फसलों को विशेष रूप से ऐसी बेहतर विशेषताओं हेतु इंजीनियर किया जा सकता है जो खाद्य प्रसंस्करण उद्योगों के लिए अत्यधिक फायदेमंद हैं। उदाहरण के लिए, आलू को एक संभावित कार्सिनोजेन, एक्रिलामाइड-गठन यौगिकों के कम स्तर हेतु संशोधित किया जा सकता है जो उच्च तापमान पर खाना पकाने के दौरान बन सकता है। इसी तरह, सोयाबीन को स्वस्थ उपभोग या विशिष्ट औद्योगिक अनुप्रयोगों हेतु उपयुक्त तेल प्रोफाइल हेतु इंजीनियर किया जा सकता है।

स्वाभाविक रूप से होने वाले विषाक्त पदार्थों को हटाना: कुछ फसलें स्वाभाविक रूप से ऐसे यौगिक बनाती हैं जो विषाक्त हो सकते हैं या बड़ी मात्रा में सेवन करने पर पोषण विरोधी गुण हो सकते हैं। जैव प्रौद्योगिकी इन अवांछनीय यौगिकों को कम करने या खत्म करने का एक सटीक तरीका प्रदान करती है, जिससे भोजन स्वाभाविक रूप से सुरक्षित और मानव उपभोग के लिए अधिक स्वादिष्ट हो जाता है।

स्वच्छ उपज के लिए रोग प्रतिरोधक क्षमता: जबकि ट्रांसजेनेसिस के माध्यम से रोग प्रतिरोधक क्षमता प्रदान करने का प्राथमिक उद्देश्य अक्सर उपज की सुरक्षा होता है, यह अप्रत्यक्ष रूप से खाद्य गुणवत्ता में भी महत्वपूर्ण योगदान देता है। फंगल, जीवाणु या वायरल रोगों के प्रति प्रतिरोधी फसलें न केवल स्वस्थ और अधिक मजबूत होती हैं, बल्कि उन्हें आमतौर पर रासायनिक फफूंदनाशकों या जीवाणुनाशकों के कम अनुप्रयोगों की भी आवश्यकता होती है। इससे कम कीटनाशक अवशेषों वाली स्वच्छ उपज प्राप्त होती है, जो उपभोक्ताओं और नियामक निकायों दोनों के लिए बढ़ती चिंता का विषय है।

प्राकृतिक खेती

डॉ. अजय सिंह बी.टी.एम. (आत्मा) किसान कल्याण तथा कृषि विकास, विखं-जौरा, जिला-मुरैना (म.प्र.)

जयदीप सिंह भदौरिया कृषि विस्तार अधिकारी किसान कल्याण तथा कृषि विकास विकासखंड जौरा जिला मुरैना (म.प्र.)

श्रीमती सुजाता राजावत ग्रामीण उद्यान विस्तार अधिकारी, उद्यानिकी एवं खाद्य प्रसंस्करण विभाग, विखं-जौरा, जिला-मुरैना (म.प्र.)

इस तकनीक को "शून्य बजट" के नाम से जाना जाता है प्राकृतिक खेती" (ZNBF) में फसलों की खेती शामिल है उर्वरकों या कीटनाशकों के उपयोग के बिना बाहरी स्रोत. "शून्य बजट" शब्द का वर्णन करता है कोई भी फसल जिसकी उत्पादन लागत शून्य हो। ZBNF का टिकाऊ कृषि पद्धतियों के प्रति सलाह मिट्टी की उर्वरता बनाए रखने में सहायता करें, रसायन-मुक्त कृषि, और कम उत्पादन लागत (शून्य लागत) किसानों की आय बढ़ती है. सीधे शब्दों में कहें तो ZBNF है एक कृषि पद्धति जो फसल उगाने पर ध्यान केंद्रित करती है। पर्यावरण के साथ संतुलन में. सरकार के तहत जैविक खेती को बढ़ावा दे रहा है परम्परागत कृषि विकास योजना (पीकेवीवाई) पहल। यह कार्यक्रम रसायन मुक्त को बढ़ावा देता है शून्य बजट सहित सभी प्रकार की कृषि पद्धतियाँ प्राकृतिक खेती.

जीरो बजट (Zero Budget) खेती से सम्बंधित जानकारी

अपने स्वास्थ्य को बेहतर बनाये रखनें के लिए लोग खाने-पीने की चीजों पर विशेष ध्यान देते हैं। खासकर ऐसे लोग उन उत्पादों को वरीयता देते है, जिनके उत्पादन में किसी भी प्रकार के केमिकल्स का उपयोग न किया गया हो। वहीं दूसरी तरफ किसान भी अपनी भूमि की उर्वरता को बनाये रखनें के लिए जीरो बजट (Zero Budget) खेती की तरफ अग्रसर हो रहे हैं। यहाँ तक कि हमारे देश के कई राज्यों के किसान भाइयों नें जीरो बजट खेती करना शुरू कर दिया है जीरो बजट खेती के अंतर्गत किसानों द्वारा सिर्फ उनके द्वारा निर्मित खाद्य पदार्थ और अन्य चीजों का उपयोग खेती के दौरान किया जाता है। जीरो बजट फार्मिंग में किसी प्रकार के केमिकल युक्त खाद और कीटनाशकों का उपयोग करनें की आवश्यकता नही होती है। जीरो बजट के अंतर्गत उगाई गई फसले हमारे स्वास्थ्य के लिए लाभकारी होती है।

शून्य बजट -प्राकृतिक खेती: शून्य बजट खेती से ही आप समझ रहे होंगे कि यह शून्य लागत में होने वाली खेती है। तो यह बिल्कुल सही है। शून्य बजट प्राकृतिक खेती (जीरो बजट प्राकृतिक खेती) का मतलब है किसान नारियल खेती में एक भी पैसा खर्च करने की जरूरत नहीं है और ना ही किसान इस खेती में किसी तरह के रसायन और रसायन का उपयोग करना जरूरी है।

उद्देश्य: * खेती की लागत कम करके अधिक लाभ लेना। * मिट्टी की उर्वरा शक्ति को बढ़ाना। * रासायनिक खाद एवं कीटनाशकों के प्रयोग में कमी लाना। * कम पानी व सिंचाइ सें अधिक उत्पादन लेना। * किसानों की बाजार निर्भरता में कमी लाना।

शून्य बजट प्राकृतिक खेती के सिद्धांत

शून्य बजट प्राकृतिक खेती के प्रमुख विचार

* कोई बाहरी इनपुट नहीं * पौधे जो पूरे वर्ष तक जमीन को ढक सकते हैं (जीवित जड़)। * मिट्टी में न्यूनतम व्यवधान। * बायोस्टिमुलेंट: महत्वपूर्ण उत्प्रेरक एजेंट। * मिश्रित कृषि में देशी बीज का प्रयोग करें। * बारी-बारी से फसल काटना। * संपत्ति में पेड़ों को शामिल करना। * जल एवं नमी का संरक्षण।* कृषि कार्यों में पशुओं को शामिल करें। * मिट्टी के उपयोग में कार्बनिक पदार्थ की वृद्धि कीट प्रबंधन के लिए पौधों का अर्क। * कोई सिंथेटिक उर्वरक, शाकनाशी या कीटनाशक नहीं।

शून्य बजट प्राकृतिक खेती के लाभ

इनमें से कुछ मुख्य निम्नलिखित हैं शून्य बजट पर प्राकृतिक खेती के लाभ

* ZBNF तकनीक में 50-60% कम पानी का उपयोग होता है सभी के लिए गैर-जेडबीएनएफ तकनीकों की तुलना में फसलें। * ZBNF मीथेन उत्सर्जन को काफी कम कर देता है अनेक वातनों के माध्यम से। * अवशेषों को जलने से रोकना भी संभव है मल्चिंग लगाना. * ZBNF में खेती का खर्च कम हो जाता है। बाहरी आदानों (बीज, उर्वरक, कीटनाशक और शाकनाशी) है किसान कर्ज और आत्महत्या का मुख्य कारण. अनुसार राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण कार्यालय से डेटा के लिए (एनएसएसओ), लगभग 70% घर कृषि उद्योग कमाई से अधिक खर्च करता है, और आधे से अधिक किसान कर्ज में डूबे हुए हैं।

* क्योंकि इसमें पैसे देने या लेने की कोई जरूरत नहीं है

* **ZBNF के तहत बाहरी आपूर्ति के लिए ऋण, कृषि बन सकती है "शून्य बजट"**

* उद्यम और आउटपुट लागत को कम किया जा सकता है। * चूँकि ZBNF किसी भी रसायन का उपयोग नहीं करता है, इसलिए यह सुरक्षित है पर्यावरण के लिए और जैविक उपज प्रदान करता है जो किसानों के लिए सामान्य से अधिक धन लाता है कृषि उपज होती है. * जैविक भोजन खाने से बीमारियों से बचाव होता है पहले गैर-जैविक भोजन द्वारा लाया जाता था, जिससे अंततः लोगों के स्वास्थ्य में सुधार होगा और स्वास्थ्य देखभाल प्रणाली पर तनाव को कम करें पूरा। * यह हर फसल के साथ अच्छा काम करता है कृषि जलवायु क्षेत्र

शून्य बजट प्राकृतिक खेती के 4 स्तंभ

जीरो बजट फार्मिंग के अंतर्गत खेती के दौरान 4 तकनीकों का प्रयोग किया जाता है, जो इस प्रकार है-

* **जीवामृत:** जीवामृत जीरो बजट खेती का पहला और महत्वपूर्ण स्तंभ है। जीवामृत की सहायता से भूमि को पोषक तत्वों को प्राप्ति होती है और यह उत्प्रेरक एजेंट की भांति कार्य करता है जिससे भूमि में सूक्ष्मजीवों की गतिविधियां बढ़ जाती है और फसलों का उत्पादन बढ़ जाता है। इसके अलावा जीवामृत की सहायता से पेड़-पौधों को कवक और अन्य प्रकार के रोगों से बचाया जा सकता है।

जीवामृत कैसे बनाया जाता है: जीवामृत बनानें के लिए सबसे पहले एक बड़े बर्तन में 200 लीटर पानी लें। इसके बाद पानी में लगभग 10 किलो गाय का ताजा गोबर और वृद्ध गाय का मूत्र 8 से 10 लीटर तक, 2 किलो पल्स का आटा, 2 किलो ब्राउन शुगर और मट्टी को मिला दें। यह सभी चीजे मिलाने के बाद इस मिश्रण को 45 से 48 घंटों के लिए छाया में रख दें। इसके बाद आप इस मिश्रण का इस्तेमाल कर सकते हैं।

बीजामृत : बीजामृत जीरो बजट खेती का दूसरा स्तंभ है। यह तंबाकू, हरी मिर्च और नीम के पत्तों के गूदे का मिश्रण है, जिसका उपयोग कीड़ों और कीट नियंत्रण के लिए किया जाता है। इसका उपयोग बीजों के उपचार के लिए किया जाता है, और यह बीजों को प्राकृतिक सुरक्षा प्रदान करता है।

बीजमृत का इस्तेमाल कैसे किया जाता है : फसलों के बीजो को खेत में बोनें से पहले सभी बीजों में बीजामृत को अच्छी तरह से लगा दें और उन्हें सूखनें के लिए छोड़ दें। जब बीजों पर लगा बीजामृत का मिक्स्चर पूरी तरह से सूख जाएँ, तब आप इन बीजों को खेतों में बो सकते हैं।

अच्चादान-मल्चिंग: अच्छादाना (मल्चिंग) जीरो बजट खेती का तीसरा स्तंभ है। यह मिट्टी में नमी की मात्रा को बनाए रखने में मदद करता है। यह स्तंभ मिट्टी की खेती के आवरण की रक्षा करने में मदद करता है और इसे जुताई करके बर्बाद नहीं करता है। **मल्चिंग 3 प्रकार की होती है, इसका विवरण इस प्रकार है-**

स्ट्रॉ मल्च- कृषि कार्यों के दौरान मिट्टी की ऊपरी सतह (Upper surface) को किसी प्रकार की हानि न पहुंचे, इसके लिए मृदा मल्च का उपयोग किया जाता है। इसके साथ ही मिट्टी के आसपास और मिट्टी को एकत्र कर रखा जाता है, ताकि मिट्टी की जल प्रतिधारण क्षमता (Water retention capacity) को और बेहतर बनाया जा सके।

स्ट्रॉ मल्च: स्ट्रॉ अर्थात भूसा सबसे अच्छी मल्च सामग्री में से एक है और भूसे मल्च का प्रयोग सब्जियों के पौधों को उगानें में अधिक किया जाता है। किसान भाई धन और गेंहूँ के भूसे का उपयोग सब्जी की खेती के दौरान कर सब्जियों की अच्छी फसल उगा सकते हैं।

लाइव मल्चिंग- लाइव मल्चिंग प्रक्रिया के अंतर्गत आप एक खेत में विभिन्न प्रकार के पौधों को उगा सकते हैं। सबसे खास बात यह है, कि यह सभी पौधे एक दूसरे पौधों की वृद्धि में सहायक होते है। उदाहरण के तौर पर जैसे- कॉफी और लौंग के पौधों को बढनें के लिए पूर्ण रूप से सनलाइट की आवश्यकता नहीं होती है। जबकि गेहूं, गन्ना और मक्के के पौधे को बढनें के लिए फुल सनलाइट की आवश्यकता होती है। लाइव मल्चिंग प्रोसेस के अंतर्गत एक साथ 2 ऐसे पौधों को लगाया जाता है, जिसमें से कम धूप लेने वाले पौधों को अपनी छाया प्रदान करते हैं।

व्हापासा (भाप): पालेकर जी के द्वारा लिखित पुस्तकों में स्पष्ट रूप से कहा गया है, कि पौधों की ग्रोथ के लिए अधिक जल की आवश्यकता नही होती है और पौधे व्हापासा अर्थात भाप की सहायता से ग्रोथ कर सकते है। व्हापासा एक ऐसी स्थिति होती है, जिसमें हवा अणु है और जल के अणु मिट्टी में मौजूद होते है और इन दोनों अणुओं की सहायता से पौधे का विकास हो जाता है।

डॉ. निधि प्रजापति (वैज्ञानिक)
डॉ. विशाल मेश्राम वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं प्रमुख
डॉ. एस.आर. शर्मा वैज्ञानिक
डॉ. विजय सिंह सूर्यवंशी तकनीकी सहायक
कृषि विज्ञान केन्द्र, नरसिंहपुर (म.प्र.)

अरहर में बांझपन मोजैक रोग एवं इसका प्रबंधन

अरहर दलहनी फसलों में क्षेत्रवार एवं उत्पादन की दृष्टि से चना के बाद दूसरा स्थान है। इसके मुख्य उत्पादक राज्य- महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश, कर्नाटक, मध्य प्रदेश, गुजरात, आंध्र प्रदेश एवं बिहार है। अरहर की फसल अनेक प्रकार के रोगों से ग्रसित होती है, जिसमें बांझपन मोजैक रोग (Sterility Mosaic Disease) मुख्य है। इस रोग से अरहर की उत्पादन में कमी, इस बात पर निर्भर करता है कि पौधों में रोग का संक्रमण फसल की किस अवस्था में हुआ है।

पौधों में संक्रमण बुआई के 45 दिन से पहले होने पर उत्पादन में कमी 95-100% तक होता है जबकि बुआई के 45 दिन के बाद उत्पादन में कमी, प्रभावित शाखाओं में संक्रमण पर निर्भर करती है और 26-97% तक होती है। देर से संक्रमण होने पर, पौधों के कुछ हिस्सों में रोग के लक्षण दिखाई देते हैं जिसे हम आंशिक बाँझपन (Partial Sterility) कहते हैं। आंशिक रूप से प्रभावित पौधों से उत्पादित बीज सूखे, मुड़े-तुड़े एवं हल्के रंग के होते हैं जो अंकुरित नहीं हो सकती है। गंभीर रूप से प्रभावित पौधे पूरी तरह से बाँझ (Sterility) होते है। भारत वर्ष में रोग का आपतन बिहार, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, तमिलनाडु, एवं कर्नाटक में नोट किया गया है।

रोग के लक्षण

बांझपन मोजेक रोग का सबसे सामान्य लक्षण पौधों में पत्तियों का छोटा होने के साथ, हल्के पीले एवं गहरे हरे रंग का मोजेक हरे-पीले धब्बेदार का होता है। पौधे अनेक शाखाओं (Profuse branching) में बंटी होती है एवं इसका विकास रूक (Strunted growth) जाता है और फूल नहीं लगते है। यदि इक्का-दुक्का फूल बन भी जाते हैं तो इसमें फल एवं बीज नहीं बनते है। देर की अवस्था में बाझपन रोग आने पर पौधे की कुछ शाखायें प्रभावित होती हैं।

रोग के कारक

बांझपन मोजेक रोग एक विषाणु जनक रोग है जो कि अरहर बांझपन मोजैक विषाणु (Pigeonpea Sterility Mosaic Virus,(PPSMV) से होता है। इस रोग का प्रसारण इरियोफिड माइट के द्वारा होता है। ये पौधों के कोमल शाखाओं पर दूधिया सफेद रंग के अंडे देती हैं। इसके निम्फस् पत्रक में लपेटे हुए पाए जाते हैं। एरिओफ्यिड माइट अतिवृष्टि एवं काफी हद तक अरहर एवं अपने जंगली रिश्तेदारों जैसे कि कजनस सकरबइओइड्स एवं कजनस कजनिफोलियस इत्यादि पर पाया जाता है। इसके व्यस्क की लम्बाई 200-250 मिलीमीटर होता है। इसका जीवन चक्र बहुत छोटा एवं दो हफ्तों का होता है जिसमें अंडे और दो भ्रूण स्थिति आते है। अरहर बांझपन मोजाइक विषाणु से संक्रमित पौधों पर माइट हमेशा पत्रक के निचले सतह पर और ग्रसित पत्तियों पर मुख्य रूप से पाया जाता है।

बांझपन मोजाइक विषाणु ग्रसित क्षेत्रों में अरहर की फसल में नियमित रूप से प्रकट होते हैं और उपयुक्त परिस्थितियों में महामारी का रूप ले लेता है। इस रोग के जानपदिक के लिए, इसके विषाणु (PPSMV), एरिओफ्इड माइट (vector), अरहर की देशी किस्में, विविध कृषि प्रणाली तथा आप्रत्याषित पर्यावरण का होना है। जब मौसम में 60% सापेक्ष आद्रता तथा 10-25°C और 25-35°C का तापमान रहता है तब खेतों में एरिओफ्इड माइट की संख्या बढ़ने लगती है। सिंचाई के तहत या सिंचित क्षेत्रों में जल्दी से इसका संक्रमण हो जाता है। एरिओफ्इड माइट गर्मियों के महीनों में बारहमासी अरहर पर जीवित रहता है। यह हवा के बहाव के द्वारा पौधे से पौधे मे संक्रमण फैलाता है। अरहर बाँझपन मोजाइक विषाणु के भारत में पाँच संस्करण (variant), पाये जाते है जिसमें कर्नाटक संस्करण अधिक संक्रमण वाला है। सही संस्करण की जानकारी ना होने के कारण इस रोग के प्रबंधन में कठिनाई हो रही है।

प्रबंधन

1. अरहर की बुआई रिजवेड विधि से मेड़ों पर करे व साथ ही कतार से कतार की दूरी तीन फीट व पौध से पौध की दूरी 2.0 से 3.0 फीट रखे।
2. पानी के उचित निकासी के प्रबंधन के साथ ही खरपतवार नियंत्रण अवश्य करें।
3. रोग ग्रसित पौधों को खेत से निकालकर नष्ट करें।
4. रोग प्रसारित इरिओफीड माइट के नियंत्रण हेतु एसिटामीप्रीड 150 ग्राम या इमिडाक्लोप्रीड 150 मिली. या थायोमेथाक्जाम 150 ग्राम 500 लीटर पानी के साथ छिड़काय करें।

जैन बीज भण्डार एवं पशु आहार
मैन बाजार, चीनोर रोड,
छीमक जिला-ग्वालियर (म.प्र.)
प्रो. मुकेश जैन, मोबाइल: 9977638510
04/2025-26

माजिद खान
शेख सदफ, आलोक डोरस
छात्र, बी.एससी. (ऑनर्स) कृषि, SAST&R कृषि संकाय, सरदार पटेल विश्वविद्यालय, डोंगरिया, बालाघाट (म.प्र.)

डॉ. नीरज नाथ परिहार,प्रकाश घोड़ेसवार
सहायक प्राध्यापक, SAST&R सरदार पटेल विश्वविद्यालय डोंगरिया बालाघाट (म.प्र.)

अवधेश सिंह चौधरी विभागाध्यक्ष, SAST&R सरदार पटेल विश्वविद्यालय, बालाघाट

रंग और स्वाद का संगम: टमाटर केचप

परिचय: टमाटर केचप एक लोकप्रिय और स्वादिष्ट सॉस है, जो मुख्य रूप से टमाटर, चीनी, सिरका और मसालों से तैयार किया जाता है। इसका स्वाद मीठा और हल्का खट्टा होता है, जो खाने के स्वाद को और भी बढ़ा देता है। टमाटर केचप का उपयोग सैंडविच, बर्गर, फ्राई, नूडल्स और अन्य स्नैक्स में किया जाता है, जिससे यह बच्चों और बड़ों दोनों के लिए बेहद पसंदीदा बन जाता है। आधुनिक जीवनशैली में टमाटर केचप ने हर रसोई में अपनी विशेष जगह बना ली है। यह न केवल खाने को स्वादिष्ट बनाता है, बल्कि इसे घर पर आसानी से बनाया जा सकता है। साथ ही, यह पोषण का भी अच्छा स्रोत है क्योंकि इसमें टमाटर के स्वास्थ्यवर्धक गुण मौजूद होते हैं। टमाटर केचप की लोकप्रियता यह दर्शाती है कि सरल सामग्री से भी कैसे स्वादिष्ट और बहुउपयोगी उत्पाद तैयार किया जा सकता है।

टमाटर केचप का इतिहास: टमाटर केचप का इतिहास 19वीं सदी में यूरोप और अमेरिका में शुरू हुआ। पहले इसे मछली या सोया आधारित सॉस के रूप में तैयार किया जाता था, लेकिन धीरे-धीरे टमाटर को मुख्य सामग्री के रूप में इस्तेमाल करना शुरू किया गया।

टमाटर केचप के फायदे

एंटीऑक्सीडेंट का स्रोत: टमाटर में लाइकोपीन नामक एंटीऑक्सीडेंट होता है, जो शरीर में फ्री रेडिकल्स को कम करने में मदद करता है और हृदय रोग और कैंसर जैसी बीमारियों के जोखिम को घटा सकता है।

खाने का स्वाद बढ़ाता है: टमाटर केचप खाने में खट्टा-मीठा स्वाद जोड़ता है, जिससे बच्चों और बड़ों दोनों को भोजन अधिक पसंद आता है।

आसानी से पचता है: यह हल्का और आसानी से पचने वाला सॉस है, जो भोजन के स्वाद को बढ़ाने के साथ पाचन में भी सहायक होता है।

ऊर्जा का थोड़ी मात्रा में स्रोत: टमाटर केचप में थोड़ी मात्रा में शुगर और कार्बोहाइड्रेट्स होती हैं, जिससे यह तुरंत थोड़ी ऊर्जा प्रदान कर सकता है।

भोजन को आकर्षक बनाता है: लाल रंग और गाढ़ी बनावट के कारण यह भोजन को देखने में आकर्षक और खाने में रुचिकर बनाता है।

टमाटर केचप बनाने हेतु विभिन्न प्रकार की सामग्रियों की आवश्यकता होती है जो कि इस प्रकार है:-

टमाटर फल, मसाले, सिरका, चीनी, चाकू, मिक्सर ग्राइंडर, पल्पर, क्रशर, फिल्टर, स्टील के बर्तन, सूती का कपड़ा, कांच की बोतलें।

10 किलो टमाटर से केचप बनाने की विधि एवं आवश्यक सामग्री

टमाटर	10 किग्रा	लौंग	2 ग्राम
चीनी	750 ग्राम	जीरा	5 ग्राम
नमक	130 ग्राम	इलायची (बड़ी)	8 ग्राम
लहसुन कटा हुआ	25 ग्राम	जावित्री (जाएपत्री)	2 ग्राम
प्याज कटा हुआ	250 ग्राम	दालचीनी	10 ग्राम
अदरक	25 ग्राम	सिरका	600 मि.ली
लाल मिर्च पाउडर	10 ग्राम	सोडियम बेंजोएट	2 ग्राम

टमाटर केचप के लिए प्रवाह(फ्लो चार्ट)

* फलों का चयन * फलों की धुलाई * फलों को काटना * पल्पिंग * मसाला बैग की तैयारी * मसाला बैग के साथ खाना बनाना * मसाले की थैली को हटाना * चीनी, नमक और सिरका मिलाना * बोतलों में गर्म भरना * पास्चुरीकरण * भंडारण

प्रक्रिया

फलों का चयन: टमाटर केचप के लिए पूरी तरह पके, लाल और रसीले टमाटरों का चयन किया जाता है। कच्चे या सड़े हुए टमाटर स्वाद और गुणवत्ता दोनों को प्रभावित करते हैं। इसलिए केवल स्वस्थ, ताजे और चमकदार टमाटरों का ही प्रयोग करना चाहिए।

फलों की धुलाई: चयनित टमाटरों को साफ पानी से कई बार धोया जाता है ताकि मिट्टी, धूल और कीटनाशकों के अंश पूरी तरह हट जाएँ। यह स्वच्छता प्रक्रिया उत्पाद की गुणवत्ता को बनाए रखती है।

फलों को काटना: धुले हुए टमाटरों को छोटे-छोटे टुकड़ों में काटा जाता है ताकि उन्हें आसानी से पकाया और पल्प किया जा सके।

पल्पिंग: कटे हुए टमाटरों को पकाकर उनका गूदा (पल्प) निकाला जाता है। इस प्रक्रिया में बीज और छिलके को छानकर अलग कर दिया जाता है। शुद्ध टमाटर पल्प ही आगे केचप बनाने के लिए प्रयोग किया जाता है।

मसाला बैग की तैयारी: केचप में स्वाद लाने के लिए लौंग, दालचीनी, इलायची, काली मिर्च, तेजपत्ता आदि मसालों को सूती कपड़े में बाँधकर मसाला बैग बनाया जाता है। यह बैग स्वाद और सुगंध प्रदान करता है।

मसाला बैग के साथ खाना बनाना: टमाटर पल्प को मसाला बैग डालकर धीमी आँच पर उबाला जाता है। इससे मसालों का रस और सुगंध मिश्रण में अच्छे से घुल जाती है। यह प्रक्रिया लगभग 30-45 मिनट तक चलती है।

मसाले की थैली को हटाना: जब मसालों का पूरा स्वाद टमाटर पल्प में मिल जाए, तब मसाला बैग को निकाल लिया जाता है।

चीनी, नमक और सिरका मिलाना: मिश्रण में स्वादानुसार चीनी, नमक और सिरका मिलाया जाता है। सिरका एक प्राकृतिक प्रिजर्वेटिव की तरह काम करता है, जो केचप को लंबे समय तक खराब होने से बचाता है। मिश्रण को तब तक पकाया जाता है जब तक यह गाढ़ा न हो जाए।

बोतलों में गर्म भरना: तैयार गर्म केचप को तुरंत साफ, सूखी और स्टरलाइज्ड कांच की बोतलों में भरा जाता है। यह ध्यान रखा जाता है कि कोई हवा अंदर न रहे ताकि उत्पाद खराब न हो।

पास्चुरीकरण: भरी हुई बोतलों को गर्म पानी के स्नान में लगभग 85-90° तापमान पर 20-30 मिनट तक रखा जाता है। इससे सभी जीवाणु नष्ट हो जाते हैं और केचप की शेल्फ लाइफ बढ़ जाती है।

भंडारण: पास्चुरीकरण के बाद बोतलों को ठंडा करके लेबल लगाकर सूखी, ठंडी और अंधेरी जगह पर रखा जाता है। इस तरह तैयार टमाटर केचप 6-8 महीनों तक सुरक्षित रह सकता है।

निष्कर्ष: टमाटर केचप आज हर रसोई का आवश्यक हिस्सा बन चुका है। यह न केवल भोजन के स्वाद को बढ़ाता है, बल्कि खाने को आकर्षक भी बनाता है। इसका खट्टा-मीठा स्वाद हर उम्र के लोगों को पसंद आता है, खासकर बच्चों को यह बहुत लुभाता है। टमाटर केचप का निर्माण एक सरल प्रक्रिया है, जिसमें मुख्य रूप से पके हुए टमाटर, मसाले, चीनी, नमक और सिरका का उपयोग किया जाता है। यह प्रक्रिया स्वच्छता, तापमान और गुणवत्ता नियंत्रण के साथ की जाए तो घर पर भी शुद्ध और स्वादिष्ट केचप तैयार किया जा सकता है। उद्योगिक स्तर पर इसका उत्पादन आधुनिक तकनीकों की सहायता से किया जाता है, जिससे इसकी गुणवत्ता और टिकाऊपन बढ़ जाती हैसही विधि और स्वच्छता के साथ तैयार किया गया टमाटर केचप न केवल स्वादिष्ट होता है, बल्कि लंबे समय तक बिना खराब हुए उपयोग में लाया जा सकता है। यह फास्ट फूड, स्नैक्स, सैंडविच, पिज्जा, नूडल्स और अन्य कई व्यंजनों का स्वाद बढ़ाने वाला प्रमुख घटक है।अतः यह कहा जा सकता है कि टमाटर केचप एक पौष्टिक, स्वादिष्ट और बहुउपयोगी उत्पाद है, जो टमाटर के संरक्षण और खाद्य प्रसंस्करण उद्योग में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। आने वाले समय में इसके उत्पादन और उपयोग में और भी वृद्धि होगी, जिससे किसानों, उपभोक्ताओं और खाद्य उद्योग सभी को लाभ प्राप्त होगा।

चिया बीज : सेहत का खजाना

✍ वर्षा मोरे (प्रक्षेत्र विस्तार अधिकारी)
जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय (म.प्र.)

✍ उपासना डिर्से पीएचडी रिसर्च स्कॉलर

आज की तेज़-रफ़्तार ज़िंदगी में जहाँ लोग सेहत के प्रति अधिक जागरूक हो रहे हैं, वहीं 'चिया बीज' एक सुपरफूड के रूप में लोकप्रिय हो गए हैं। छोटे-छोटे इन बीजों में इतनी बड़ी मात्रा में पोषक तत्व छिपे हैं कि इन्हें 'सेहत का खजाना' कहा जाता है।

चिया बीज क्या हैं?

चिया बीज Salvia hispanica नामक पौधे के बीज हैं, जो पुदीने के परिवार से संबंध रखते हैं। इसका मूल स्थान मेक्सिको और ग्वाटेमाला माना जाता है, जहाँ प्राचीन माया और एज़्टेक सभ्यताओं में इसे ऊर्जा का प्रमुख स्रोत माना जाता था। "चिया" शब्द का अर्थ ही है – शक्ति (Strength)।

चिया बीज के पोषक तत्व

चिया बीज बेहद पौष्टिक होते हैं। इनमें निम्नलिखित पोषक तत्व प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं —

* **ओमेगा-3 फैटी एसिडः** हृदय को स्वस्थ रखते हैं।
* **प्रोटीन :** मांसपेशियों के निर्माण में मदद करता है।
* **फाइबर (रेशा) :** पाचन तंत्र को दुरुस्त रखता है।
* **कैल्शियम, आयरन, मैग्नीशियम, जिंक :** हड्डियों और रक्त स्वास्थ्य के लिए लाभकारी।
* **एंटीऑक्सिडेंट्सः** शरीर को मुक्त कणों (free radicals) से बचाते हैं।

चिया बीज के स्वास्थ्य लाभ

1.हृदय स्वास्थ्य में सुधार

चिया बीज में मौजूद ओमेगा-3 फैटी एसिड रक्तचाप को नियंत्रित करते हैं और हृदय रोगों के खतरे को कम करते हैं।

2.वज़न नियंत्रण

इनमें मौजूद फाइबर पेट को लंबे समय तक भरा रखता है, जिससे अधिक खाने की आदत कम होती है।

3.ब्लड शुगर नियंत्रण

* यह बीज रक्त में शर्करा के स्तर को स्थिर रखता है, जिससे मधुमेह रोगियों के लिए फायदेमंद होता है।

4.हड्डियों को मज़बूती

* कैल्शियम, फॉस्फोरस और मैग्नीशियम से भरपूर होने के कारण ये हड्डियों और दाँतों को मज़बूत बनाते हैं।

5.त्वचा और बालों की सुंदरता

* एंटीऑक्सिडेंट्स त्वचा की उम्र बढ़ने की प्रक्रिया को धीमा करते हैं और बालों को पोषण प्रदान करते हैं।

चिया बीज का सेवन कैसे करें?

चिया बीज को कई तरीकों से खाया जा सकता है —

* एक गिलास पानी या दूध में रातभर भिगोकर सुबह पी सकते हैं।
* स्मूदी, जूस या दही में मिलाकर।
* सलाद, ओट्स या हल्के नाश्ते में मिलाकर।
* ठंडाई या नींबू पानी में मिलाकर गर्मियों में सेवन करना बहुत लाभकारी होता है।

सावधानियां

* अधिक मात्रा में सेवन से पेट फूलना या गैस की समस्या हो सकती है।
* गर्भवती महिलाएँ या दवाइयाँ लेने वाले व्यक्ति चिकित्सक की सलाह से इसका सेवन करें।

निष्कर्ष

* चिया बीज एक प्राकृतिक सुपरफूड है जो आधुनिक जीवनशैली से जुड़ी अनेक स्वास्थ्य समस्याओं का समाधान प्रदान करता है। नियमित और संतुलित मात्रा में इसका सेवन शरीर को ऊर्जावान, हृदय को स्वस्थ और मन को प्रसन्न रखता है।

01/2025-26

किसान क्रेडिट कार्ड : किसानों की आर्थिक रीढ़

उदय पटेल एमएससी (कृषि विस्तार)
एम.जी.सी.जी. वि. वि. चित्रकूट सतना (म.प्र.)

अंकित सोनी (कृषि अर्थशास्त्र) एम.जी.सी.जी. वि. वि. चित्रकूट सतना (म.प्र.)

डॉ डीपी. राय डीन कृषि संकाय एम.जी.सी.जी. वि वि.चित्रकूट सतना (म.प्र.)

मुदित राठौर एमएससी (कृषि विस्तार)
एम.जी.सी.जी. वि. वि. चित्रकूट सतना (म.प्र.)

प्रस्तावना : भारत की अर्थव्यवस्था की नींव कृषि पर टिकी हुई है। देश की आधी से अधिक आबादी आज भी खेती-किसानी से अपनी आजीविका चलाती है। ऐसे में किसानों को समय पर वित्तीय सहायता उपलब्ध कराना केवल उनकी जरूरत ही नहीं, बल्कि राष्ट्रीय विकास की शर्त भी है। लंबे समय तक किसान साहूकारों और गैर-औपचारिक स्रोतों से कर्ज लेने पर मजबूर थे, जिससे वे ऊँचे ब्याज दरों के बोझ तले दब जाते थे। इसी समस्या के समाधान के लिए वर्ष 1998-1999 में किसान क्रेडिट कार्ड (KCC) योजना की शुरुआत की गई। इस योजना ने ग्रामीण भारत की तस्वीर बदलने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। किसान अब बैंकिंग प्रणाली से सीधे जुड़कर फसल की बुवाई, खाद-बीज की खरीद, सिंचाई और अन्य आवश्यकताओं के लिए कम ब्याज दर पर ऋण प्राप्त कर सकते हैं। इतना ही नहीं, आज KCC के दायरे को बढ़ाकर पशुपालन, डेयरी और मत्स्य पालन जैसे क्षेत्रों को भी शामिल किया गया है। यह योजना न केवल किसानों की आर्थिक सुरक्षा की गारंटी है, बल्कि आत्मनिर्भर भारत के सपने की दिशा में भी एक अहम कदम है।

उद्देश्य * किसानों को सस्ती दर पर ऋण सुविधा उपलब्ध कराना। * कृषि निवेश (बीज, खाद, कीटनाशक, मशीनरी आदि) के लिए समय पर वित्तीय सहायता सुनिश्चित करना। * ग्रामीण किसानों को सहज और लचीला ऋण माध्यम उपलब्ध कराना। * समय पर ऋण चुकाने वाले किसानों को ब्याज में छूट (Subvention + Incentive) प्रदान करना।

किसान क्रेडिट कार्ड प्राप्त करने की प्रक्रिया

1. आवेदन पत्र भरना : किसान नजदीकी बैंक शाखा (राष्ट्रीयकृत बैंक, ग्रामीण बैंक, सहकारी बैंक) में जाकर KCC का आवेदन पत्र भर सकते हैं।

2. दस्तावेज़ जमा करना: आवश्यक दस्तावेज़ों में भूमि का रिकॉर्ड, पहचान पत्र, आधार कार्ड, निवास प्रमाण पत्र और पासपोर्ट साइज फोटो शामिल हैं।

3. बैंक द्वारा जांच: बैंक भूमि और किसान की योग्यता की जांच करता है और क्रेडिट लिमिट तय करता है।

4. कार्ड जारी करना: स्वीकृति के बाद किसान को चष्टि प्रदान किया जाता है, जिसे डेबिट कार्ड की तरह प्रयोग किया जा सकता है।

5. उपयोग: किसान इस कार्ड से सीधे कृषि कार्यों के लिए ऋण राशि का उपयोग कर सकते हैं।

नवीनीकरण (Renewal) की प्रक्रिया * KCC की वैधता सामान्यतः 3-5 वर्ष तक होती है। * प्रत्येक वर्ष किसान को अपनी क्रेडिट लिमिट के नवीनीकरण हेतु बैंक से संपर्क करना पड़ता है। * नवीनीकरण के समय किसान को अपनी फसल, भूमि की स्थिति और पिछले ऋण के पुनर्भुगतान का ब्यौरा देना होता है। * समय पर नवीनीकरण कराने से किसान को ब्याज पर सब्सिडी और अन्य सरकारी लाभ लगातार मिलते रहते हैं।

ब्याज दर : * किसान क्रेडिट कार्ड योजना के अंतर्गत किसानों को अल्पावधि ऋण पर विशेष ब्याज दर का लाभ मिलता है। * 3 लाख तक के ऋण पर ब्याज दर 7% प्रति वर्ष निर्धारित है। * यदि किसान समय पर ऋण का भुगतान करता है, तो उसे अतिरिक्त 3% की छूट (Prompt Repayment Incentive) मिलती है। * इस प्रकार प्रभावी ब्याज दर केवल 4% प्रति वर्ष रह जाती है। * वहीं ?3-5 लाख से अधिक राशि पर ब्याज दरें बैंक की नीतियों के अनुसार तय होती हैं, जो अलग-अलग बैंकों में भिन्न हो सकती हैं।

NABARD की भूमिका : NABARD (National Bank for Agriculture and Rural Development) किसान क्रेडिट कार्ड योजना के सफल संचालन में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। * NABARD इस योजना हेतु नीतिगत दिशा-निर्देश तैयार करता है और बैंकों को KCC ऋण वितरण हेतु वित्तीय सहयोग उपलब्ध कराता है। * यह संस्था ब्याज सबवेंशन (Interest Subvention) और Prompt Repayment Incentive जैसी सुविधाओं के क्रियान्वयन में केंद्र और राज्य सरकार के साथ समन्वय करती है। * NABARD समय-समय पर परिपत्र (Circulars) जारी करके बैंकों को ब्याज दर, सबवेंशन दर और ऋण सीमा के बारे में अपडेट प्रदान करता है। * साथ ही यह ग्रामीण और सहकारी बैंकों को KCC योजना हेतु पर्याप्त पुनर्वित्त (Refinance) सुविधा उपलब्ध कराता है, जिससे किसानों तक सस्ती दर पर ऋण पहुँच सके

मध्यप्रदेश की स्थिति : * वर्ष 2023-24 तक देशभर में लगभग 7.5 करोड़ किसान KCC योजना से लाभान्वित हो चुके हैं। * मध्यप्रदेश में *60 लाख से अधिक सक्रिय KCC खाते हैं (NABARD और कृषि मंत्रालय की रिपोर्ट अनुसार)। * प्रदेश सरकार भी समय-समय पर ब्याज दरों में राहत और क्रेडिट लिमिट बढ़ाने की पहल करती है।

किसानों का अनुभव : हरदा जिले के एक प्रगतिशील किसान ने बताया "KCC से मुझे समय पर बीज और खाद खरीदने के लिए पैसे मिल जाते हैं। अब साहूकार से महंगे ब्याज पर कर्ज लेने की जरूरत नहीं पड़ती।"

लाभ

1.कम ब्याज दर व सब्सिडी: केंद्र सरकार Modified Interest Subvention Scheme के तहत KCC ऋणों पर ब्याज सब्सिडी देती है। समय पर पुनर्भुगतान करने पर अतिरिक्त प्रोत्साहन मिलता है।

2.संबद्ध (Allied) गतिविधियों में विस्तार: पशुपालन और मत्स्यपालन जैसे कृषि-संबद्ध गतिविधियों को भी KCC का लाभ मिलना शुरू हो गया है. इससे किसान अपनी आय के विविध स्रोत बना पा रहे हैं। मध्यप्रदेश में पशुपालन KCC वाली गतिविधियों का बकाया ऋण और कार्ड संख्या इस विस्तार को दर्शाते हैं।

3.स्थानीय बैंक तथा सहकारी समितियों से आसान पहुँच: गांव-गाँव बैंक शाखाएँ, सहकारी समितियाँ अक्सर KCC आवेदन और वितरण प्रक्रिया में मध्यस्थ होती हैं, जिससे दूरी व लेन-देन का समय कम होता है।

सुझाव / सुधार

1.जागरुकता अभियान: ग्राम पंचायतों, कृषि विभाग की शाखाओं और स्वयं-सहायता समूहों द्वारा जागरुकता शिविर लगाना चाहिए कि चष्टि कैसे लें, डॉक्यूमेंट क्या-क्या चाहिए।

2.प्रक्रिया को सरल बनाना: कम कागज़ात, डिजिटल कड्ढष्ट, मोबाइल एप्लीकेशन, एक-खिड़की सेवा (one-window system) लागू होनी चाहिए।

3. ऋण सीमा का पुनर्मूल्यांकन: कृषि लागत बढ़ी है; पशुपालन-मत्स्यपालन सहित अन्य आलाय गतिविधियों के लिए उच्च ऋण सीमा की आवश्यकता है।

4.ऋण वापसी के लिए लचीलापन: प्राकृतिक आपदाएँ, विपरीत मौसम आदि के समय पुनर्भुगतान में समय विस्तार व मोचन मिलना चाहिए।

निष्कर्ष: किसान क्रेडिट कार्ड केवल एक वित्तीय साधन नहीं, बल्कि किसानों के लिए आत्मनिर्भरता और सम्मान की गारंटी है। यह योजना किसानों को महंगे साहूकारी ऋण से बचाकर उन्हें समय पर और सस्ता ऋण उपलब्ध कराती है। मध्यप्रदेश जैसे कृषि प्रधान राज्य में चष्टि का विस्तार किसानों की आर्थिक मजबूती और राज्य की समृद्धि के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है।

संदर्भ (References)

1. कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार [agri-coop.gov.in](https://agricoop.gov.in)

2. भारतीय रिज़र्व बैंक (RBI) – Annual Reports

3. NABARD (National Bank for Agriculture and Rural Development) – State Focus Paper 2023-24

4.NABARD Circular No.106 /DoR-23 /2024-25

5.Press Information Bureau (PIB), “Modified Interest Subvention Scheme (MISS)”

5.RBI – Master Circular on Kisan Credit Card Scheme (rbi.org.in)

02/2025-26

पॉलीहाउस: जलवायु अनुकूल उन्नत कृषि तकनीक

डॉ. मोहम्मद वामिक (सहायक प्राध्यापक)
SAST&R, सरदार पटेल विश्वविद्यालय, बालाघाट (म.प्र.)

अवधेश सिंह चौधरी विभागाध्यक्ष, SAST&R, सरदार पटेल विश्वविद्यालय, बालाघाट

माजिद खान बी.एससी. (ऑनर्स) कृषि छात्र, SAST&R, सरदार पटेल विश्वविद्यालय, बालाघाट

परिचय: भारत को एक कृषि प्रधान देश के रूप में जाना जाता है और यहाँ के अधिकतर लोग कृषि के माध्यम से ही अपना जीवन यापन करते है, हालाँकि यहाँ फसलों का उत्पादन प्राकृतिक मानसून पर निर्भर होता है, जिसके कारण यहाँ कभी-कभी पैदावार काफी अच्छी हो जाती है और कभी-कभी उत्पादन बिल्कुल न के बराबर होता है, इस गंभीर समस्या से निजात पाने के लिए वर्तमान में किसानों द्वारा पॉली हाउस के माध्यम से तकनीकी रूप से कृषि करने लगे हैं। पॉलीहाउस आधुनिक कृषि तकनीकों में से एक महत्वपूर्ण तकनीक है, जिसमें फसलों की खेती एक विशेष संरचना में की जाती है जो पारदर्शी पॉलीथीन शीट से ढकी होती है। इस संरचना के अंदर तापमान, आर्द्रता, प्रकाश और हवा जैसी पर्यावरणीय परिस्थितियों को नियंत्रित किया जा सकता है। पॉलीहाउस खेती के माध्यम से फसलें वर्षभर उगाई जा सकती हैं, जिससे मौसम पर निर्भरता कम होती है। यह तकनीक विशेष रूप से सब्जियों, फूलों और उच्च मूल्य वाली फसलों के उत्पादन हेतु उपयोगी है। पॉलीहाउस खेती से किसानों को अधिक उत्पादन, बेहतर गुणवत्ता और ऊँची आय प्राप्त होती है, साथ ही यह जल व भूमि उपयोग की दृष्टि से भी प्रभावी है।

पॉलीहाउस के उद्देश्य और महत्व: पॉलीहाउस का उद्देश्य और महत्व बेहतर उपज, साल भर खेती और गुणवत्ता वाली फसलें प्राप्त करना है, क्योंकि यह फसलों को बाहरी मौसम और कीटों से बचाकर एक नियंत्रित वातावरण प्रदान करता है। इसके मुख्य लाभों में पानी और कीटनाशकों का कम उपयोग, फसल की गुणवत्ता में सुधार, और उच्च पैदावार (5-10 गुना तक) शामिल हैं। पॉलीहाउस किसानों को मांग के अनुसार विभिन्न प्रकार की फसलें उगाने और अपनी आय बढ़ाने में भी मदद करता है।

पॉलीहाउस के उद्देश्य

नियंत्रित वातावरण बनाना: तापमान, आर्द्रता और प्रकाश को नियंत्रित करके पौधों के विकास हेतु एक आदर्श वातावरण प्रदान करना।

साल भर खेती: मौसम की परवाह किए बिना साल भर फसलें उगाने की क्षमता देना, जिससे किसानों को हमेशा मुनाफा हो सके।

फसल की सुरक्षा: फसलों को अत्यधिक गर्मी, ठंड, बारिश और तेज हवाओं जैसे प्रतिकूल मौसम से बचाना।

उत्पादकता बढ़ाना: प्रति इकाई क्षेत्र में फसल की उपज को अधिकतम करना।

पॉलीहाउस का महत्व

उच्च गुणवत्ता वाली फसलें: बेहतर गुणवत्ता (आकार, रंग, पोषण मूल्य) वाली फसलें उगाना, जिनकी बाजार में अच्छी कीमत मिलती है।

कम संसाधन उपयोग: ड्रिप सिंचाई जैसी तकनीकों का उपयोग करके पानी और उर्वरकों की खपत कम करना।

कीट और रोग नियंत्रण: संरक्षित वातावरण प्रदान करके कीटों और रोगों के जोखिम को कम करना, जिससे रसायनों पर निर्भरता कम होती है।

आर्थिक लाभ: उच्च उत्पादन और गुणवत्ता से किसानों की आय में वृद्धि होती है और संभावित रूप से 5-10 गुना अधिक उपज मिलती है।

विविधता: बाज़ार की मांग के अनुसार विभिन्न प्रकार की फसलें, जैसे सब्जियां, फल और फूल, उगाना संभव हो जाता है।

पॉलीहाउस की संरचना: पॉलीहाउस एक ऐसी संरचना होती है जो पारदर्शी या अर्ध-पारदर्शी प्लास्टिक शीट से ढकी होती है। इसका उद्देश्य पौधों को प्रतिकूल मौसम, कीटों और बीमारियों से बचाना और नियंत्रित वातावरण प्रदान करना होता है ताकि अधिक उपज प्राप्त की जा सके।

पॉलीहाउस की संरचना के मुख्य भाग इस प्रकार हैं-

फ्रेम: * यह पॉलीहाउस का ढांचा होता है जिस पर पूरा ढकाव टिका रहता है। * इसे जीआई पाइप, स्टील, एल्युमिनियम, या बांस से बनाया जाता है।

कवरेज सामग्री :* पॉलीहाउस को ढकने के लिए यूवी स्टेबलाइज्ड पॉलीथिन शीट का प्रयोग किया जाता है। * इसकी मोटाई सामान्यतः 200 माइक्रोन होती है।

बेस या नींव : * यह पॉलीहाउस को मजबूती प्रदान करती है। * पाइप या खंभों को ज़मीन में गाड़कर कंक्रीट से फिक्स किया जाता है।

दरवाजे और वेंटिलेशन : * अंदर आने-जाने के लिए दरवाजे बनाए जाते हैं। * तापमान और आर्द्रता नियंत्रित करने के लिए साइड वेंटिलेशन या रूफ वेंटिलेशन दिया जाता है।

शेड नेट या इनर कवर : * अधिक धूप से बचाव के लिए 35%–50% शेड नेट लगाया जाता है।

ड्रिप सिंचाई प्रणाली: * पानी और खाद देने के लिए ड्रिप सिस्टम लगाया जाता है जिससे जल की बचत होती है।

तापमान एवं आर्द्रता नियंत्रण उपकरण: * आधुनिक पॉलीहाउस में फैन, कूलिंग पैड, और सेंसर सिस्टम भी लगाए जाते हैं।

फर्श या भूमि : * भूमि समतल और जलनिकासयुक्त होनी चाहिए ताकि पानी जमा न हो।

पॉलीहाउस के प्रकार: पॉलीहाउस को विभिन्न आधारों पर कई प्रकारों में बाँटा गया है।

1.तापमान नियंत्रण के आधार पर

* **साधारण पॉलीहाउस:** इसमें तापमान और आर्द्रता का नियंत्रण प्राकृतिक रूप से किया जाता है,हवा के प्रवाह के लिए साइड में नेट या वेंटिलेशन दिए जाते हैं यह सस्ता और छोटे किसानों हेतु उपयुक्त होता है।

नियंत्रित पॉलीहाउस: पर्यावरण नियंत्रित पॉलीहाउस एक उच्च तकनीक संरचना है जो तापमान, आर्द्रता, प्रकाश और कार्बन डाइऑक्साइड जैसी आंतरिक स्थितियों का सटीक प्रबंधन करने के लिए प्रौद्योगिकी का उपयोग करती है, जिससे फसलों की ऑफ-सीजन और साल भर खेती संभव हो पाती है।

2.संरचना के आधार पर

सिंगल स्पैन पॉलीहाउस: सिंगल स्पैन पॉलीहाउस एक ऐसी संरचना है जिसमें पूरी पॉलीहाउस छत एक ही स्पैन (एक ही चौड़ाई) की होती है, यानी बीच में कोई अतिरिक्त कॉलम या जॉइंट नहीं होता। यह छोटे और मध्यम आकार की खेती के लिए उपयुक्त होती है।

मल्टी स्पैन पॉलीहाउस: मल्टी स्पैन पॉलीहाउस एक ऐसी संरचना है जिसमें कई स्पैन (छतें) आपस में जुड़ी होती हैं। यानी इसमें कई सिंगल स्पैन पॉलीहाउस एक साथ जुड़े रहते हैं जिससे एक बड़ा पॉलीहाउस परिसर बनता है। यह बड़े पैमाने की व्यावसायिक खेती हेतु उपयुक्त होता है।

3.सामग्री के आधार पर:-

बाँस संरचित पॉलीहाउस: बाँस संरचित पॉलीहाउस एक प्रकार का पॉलीहाउस है जो बाँस के फ्रेम पर पॉलीथीन शीट से ढका होता है। यह एक कम लागत वाला और पर्यावरण अनुकूल विकल्प है जो किसानों को अपनी फसलों की सुरक्षा और उत्पादन में सुधार करने में मदद कर सकता है।

स्टील एवं जी.आई. पाइप संरचित पॉलीहाउस: स्टील या जी.आई. पाइप संरचित पॉलीहाउस वह पॉलीहाउस होता है जिसकी पूरी ढांचा गैल्वनाइज़्ड आयरन पाइप या माइल्ड स्टील पाइप से तैयार की जाती है। यह मजबूत, टिकाऊ और मौसम प्रतिरोधी संरचना होती है, जो लंबे समय तक खेती के लिए उपयुक्त रहती है।

उपयोग के आधार पर

नर्सरी पॉलीहाउस: नर्सरी पॉलीहाउस एक विशेष प्रकार का पॉलीहाउस होता

है जिसका उपयोग पौधों की नर्सरी तैयार करने हेतु किया जाता है। इसमें तापमान, आर्द्रता , प्रकाश और वेंटिलेशन को नियंत्रित करके पौधों के बीज अंकुरण और प्रारंभिक वृद्धि हेतु आदर्श वातावरण बनाया जाता है।

फसल उत्पादन पॉलीहाउस: पॉलीहाउस तापमान, नमी, प्रकाश और हवा को नियंत्रित करके फसलों की उच्च गुणवत्ता वाली और वर्षभर उत्पादन किया जाता है। इसमें पौधों को बाहरी मौसम, कीट और बीमारियों से सुरक्षा मिलती है जिससे उपज अधिक और गुणवत्तापूर्ण होती है।

पॉलीहाउस के लाभ

तापमान नियंत्रण: पौधों के अनुसार तापमान को नियंत्रित किया जा सकता है।

पानी की बचत: ड्रिप इरिगेशन से सिंचाई करने पर पानी की काफी बचत होती है।

हर मौसम में खेती: बाहरी मौसम पर निर्भर नहीं, सालभर फसल ली जा सकती है।

कीट एवं रोग नियंत्रण: पॉलीहाउस में पौधे कीटों और बीमारियों से सुरक्षित रहते हैं।

उपज में वृद्धि: खुले खेतों की तुलना में 2-3 गुना अधिक उत्पादन मिलता है।

गुणवत्तापूर्ण उत्पादन: एकसमान और उच्च गुणवत्ता की फसल प्राप्त होती है।

कम खाद और दवाओं की आवश्यकता: नियंत्रित वातावरण में पौधों को संतुलित पोषण दिया जाता है।

कम भूमि में अधिक उत्पादन: सीमित भूमि पर अधिक उपज प्राप्त होती है।

बीज अंकुरण बेहतर: तापमान और नमी नियंत्रण से बीज जल्दी और समान रूप से अंकुरित होते हैं।

नर्सरी और सब्जियों दोनों के लिए उपयोगी: पौध तैयार करने और उत्पादन दोनों में उपयोग।

पर्यावरण के अनुकूल खेती: कम रासायनिक उपयोग से पर्यावरण को हानि नहीं।

आर्थिक रूप से लाभदायक: कम समय में अधिक आय प्राप्त होती है।

फसल चक्र तेज़: नियंत्रित वातावरण में फसल जल्दी तैयार होती है।

निष्कर्ष: पॉलीहाउस खेती आज के बदलते कृषि परिवेश में एक अत्यंत उपयोगी और वैज्ञानिक पद्धति के रूप में उभरी है। परंपरागत खेती में जहां फसलें मौसम, कीट एवं रोगों के प्रभाव से प्रभावित होती हैं, वहीं पॉलीहाउस तकनीक किसानों को इन सभी प्राकृतिक सीमाओं से मुक्त करती है। इस संरचना में फसलों को नियंत्रित वातावरण प्रदान किया जाता है, जिससे पौधों की वृद्धि, फूल आने की प्रक्रिया, और उपज की गुणवत्ता में अत्यधिक सुधार होता है, पॉलीहाउस के माध्यम से किसान वर्षभर किसी भी मौसम में फसल उगा सकते हैं, जिससे उनकी आय स्थिर रहती है। यह तकनीक विशेष रूप से सब्जियों, फूलों और उच्च मूल्य वाली फसलों जैसे शिमला मिर्च, खीरा, टमाटर, गुलाब, जरबेरा आदि के लिए अत्यंत लाभकारी सिद्ध हुई है। इसके अतिरिक्त, पॉलीहाउस खेती में कम पानी, कम भूमि और कम कीटनाशक दवाओं की आवश्यकता होती है, जिससे यह पर्यावरण के लिए भी अनुकूल है, हालांकि इसकी प्रारंभिक लागत अधिक होती है, परंतु सरकार द्वारा दी जाने वाली अनुदान योजनाओं और तकनीकी सहायता से किसान इसे आसानी से अपनाकर दीर्घकालीन लाभ प्राप्त कर सकते हैं। इस तकनीक से न केवल उत्पादन बढ़ता है, बल्कि उत्पाद की गुणवत्ता भी उत्कृष्ट होती है, जिससे बाज़ार में उसकी मांग और मूल्य दोनों बढ़ जाते हैं, यह कहा जा सकता है कि पॉलीहाउस खेती किसानों की आर्थिक स्थिति को मजबूत करने, कृषि क्षेत्र में आधुनिक तकनीक के प्रसार और देश की खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण पहल है। यह भविष्य की टिकाऊ, लाभदायक और वैज्ञानिक कृषि प्रणाली की ओर बढ़ने का सशक्त माध्यम है, जो भारत को कृषि क्षेत्र में आत्मनिर्भर बनाने में अहम भूमिका निभा सकती है।

आंवला की क्षमता का दोहनः बेहतर फल उत्पादन हेतु समाधान

✍ **संतोष कुमार तिवारी** सहायक प्राध्यापक, कृषि विज्ञान संस्थान, सेज विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)

परिचय

आंवला (भारतीय गूजबेरी) अपने औषधीय गुणों, विटामिन 'C' की प्रचुर मात्रा तथा पौष्टिक लाभों के कारण अत्यंत मूल्यवान फल है। इसके बावजूद, अनेक बागवान यह शिकायत करते हैं कि उनके आंवला वृक्ष कई वर्षों की वृद्धि के बाद भी फल नहीं देते। इसके पीछे अनेक कारण हो सकते हैं – जैसे वृक्ष की आयु, परागण संबंधी समस्याएँ, पर्यावरणीय परिस्थितियाँ तथा पोषक तत्वों की कमी इत्यादि।

1. वृक्ष की आयु एवं परिपक्वताः फलन में आयु की भूमिका

आंवला के फल उत्पादन को प्रभावित करने वाला सबसे प्रमुख कारक वृक्ष की आयु है। नवरोपित वृक्षों को फलन की अवस्था तक पहुँचने में समय लगता है, अतः वृक्ष के विकास चक्र को समझना आवश्यक है।

बीज से उगाए गए वृक्षः बीज से तैयार वृक्ष सामान्यतः 8-10 वर्षों के पश्चात फल देना प्रारंभ करते हैं। अतः ऐसे वृक्षों के लिए धैर्य आवश्यक है।

कलमी अथवा कलीदार वृक्षः इन वृक्षों में फलन शीघ्र प्रारंभ होता है, सामान्यतः 3-4 वर्ष में। व्यावसायिक कृषि में कलमी पौधों को अधिक प्राथमिकता दी जाती है।

यदि वृक्ष उचित आयु का होने पर भी फल नहीं दे रहा है, तो इसका कारण अपर्याप्त धूप या वृक्ष का आंतरिक स्वास्थ्य हो सकता है। शीत ऋतु के अंत में सूखी एवं भीतरी शाखाओं की छँटाई करने से प्रकाश वृक्ष के भीतर तक पहुँचता है, जिससे वृद्धि हार्मोन सक्रिय होते हैं और फलन में सुधार होता है।

उपाय

* नवयुव वृक्षों के लिए उचित आयु तक प्रतीक्षा करें।
* वृद्ध वृक्षों के लिए शीत ऋतु के अंत में छँटाई करें ताकि प्रकाश और वायु संचार बढ़ सके।

2. नर एवं मादा पुष्पों का असंतुलनः परागण का महत्वः आंवला वृक्ष द्विलिंगी (dioecious) होते हैं, अर्थात् इनमें नर और मादा पुष्प अलग-अलग होते हैं। यदि वृक्ष में नर पुष्प अधिक और मादा पुष्प कम हों, तो फलन नहीं होगा। मादा पुष्पों की कमी फल न आने का एक प्रमुख कारण है।

नर-मादा पुष्प अनुपातः सफल निषेचन के लिए वृक्ष में नर और मादा पुष्पों का संतुलित अनुपात आवश्यक है।

उपायः फूल आने की अवस्था में 1 मिली NAA (4.5%) को 5 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें। यह मादा पुष्पों की संख्या बढ़ाने में सहायक होता है। आवश्यकता पड़ने पर 15-20 दिनों के अंतराल पर पुनः छिड़काव किया जा सकता है।

सावधानीः तीव्र धूप या अधिक तापमान में छिड़काव न करें।

3. पुष्प झड़नाः पोषक तत्वों की कमी एवं पर्यावरणीय तनावः कई बार वृक्ष पर पुष्प तो आते हैं, परंतु फल बनने से पहले ही झड़ जाते हैं। इसका कारण पोषक तत्वों की कमी, कीट या फफूँद जनित रोग, अथवा तेज़ हवा

व अधिक तापमान जैसी प्रतिकूल परिस्थितियाँ हो सकती हैं।

संभावित कारण

* पोषक तत्वों की कमी
* कीट एवं रोग
* पर्यावरणीय तनाव

उपायः फूल झड़ने से रोकने के लिए 1 लीटर पानी में 5-10 ग्राम पोटैशियम सल्फेट और 2 ग्राम बोरॉन मिलाकर छिड़काव करें। कीट नियंत्रण हेतु नीम तेल का उपयोग करें तथा फफूँद के लिए 1 लीटर पानी में 2 ग्राम बाविस्टिन का छिड़काव करें।

4. अपर्याप्त परागणः एक से अधिक वृक्षों का महत्व

आंवला वृक्षों में फलन के लिए पर-परागण आवश्यक होता है। यदि क्षेत्र में केवल एक ही वृक्ष है, तो पर्याप्त परागण नहीं हो पाता और फल नहीं लगते।

क्यों आवश्यक हैं अनेक वृक्षः

आंवला आत्म-परागण नहीं करता; फलन के लिए समीपवर्ती नर एवं मादा वृक्षों का होना आवश्यक है।

उपायः कम से कम 2-3 आंवला वृक्ष एक-दूसरे के समीप लगाएँ ताकि उचित परागण हो सके।

5. पोषक तत्वों की कमी एवं मृदा समस्याएँ: उचित मृदा स्वास्थ्य सुनिश्चित करनाः फलन के लिए स्वस्थ मृदा और संतुलित पोषण अत्यंत आवश्यक है। यदि वृक्ष को आवश्यक पोषक तत्व न मिलें या मिट्टी की गुणवत्ता कमजोर हो, तो फलन प्रभावित होता है।

उपायः प्रति वृक्ष 10-15 किलोग्राम गोबर की खाद, 1 किलोग्राम नीमखली तथा 200 ग्राम नाइट्रोजन, 100 ग्राम फॉस्फोरस, 150 ग्राम पोटैशियम और 2-3 ग्राम बोरॉन मिलाकर वर्ष में दो बार (फरवरी एवं सितंबर में) मिट्टी में दें।

6. गमले में आंवला उगाने के सुझावः यदि आंवला गमले में उगाया जा रहा हो, तो पर्याप्त स्थान और जल निकास आवश्यक है। छोटा गमला वृक्ष की वृद्धि और फलन को बाधित करता है।

गमले का आकारः कम से कम 24 इंच का गमला उपयुक्त रहता है।

मिट्टी मिश्रणः 50% मिट्टी, 30% जैविक खाद एवं 20% बालू का मिश्रण सर्वोत्तम है।

प्रकाश एवं सिंचाईः प्रतिदिन 6-8 घंटे धूप मिले, यह सुनिश्चित करें।

उपायः हर 2-2.5 माह में जैविक खाद या वर्मी-कम्पोस्ट डालें। 5:5:5 अनुपात वाला संतुलित NPK उर्वरक तथा प्रति कुछ माह में 1 ग्राम बोरॉन दें।

निष्कर्ष

आंवला वृक्षों में फल न लगने की समस्या अनेक कारणों से उत्पन्न होती है–वृक्ष की आयु, परागण असंतुलन, पोषक तत्वों की कमी या पर्यावरणीय तनाव। उचित छँटाई, संतुलित पोषण, कीट एवं रोग नियंत्रण, तथा पर-परागण को प्रोत्साहित करने जैसे उपाय अपनाकर फल उत्पादन में उल्लेखनीय वृद्धि की जा सकती है। मृदा की नियमित देखभाल और उचित पर्यावरणीय प्रबंधन से आंवला वृक्ष दीर्घकाल तक स्वस्थ एवं उत्पादक बने रहते हैं।

डेयरी पशुओं में बाह्य परजीवियों का संक्रमण एवं निदान

डॉ. अनिल कुमार गिरि सहायक प्राध्यापक, कृषि महाविद्यालय रीवा (म.प्र.)

डॉ. लक्ष्मण सिंह शेखावत सहायक प्राध्यापक, कृषि महाविद्यालय जबलपुर

डॉ. क्षेमंकर श्रमण सह प्राध्यापक, नानाजी देशमुख वेटनरी विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

भारत जैसे गर्म और आर्द्र देश में डेयरी पशुओं पर बाह्य परजीवियों (External Parasites) का हमला बहुत आम है। ये परजीवी जैसे–जूं, किलनी (ticks), पिस्सू (fleas) और खुजली के कीट (mites) पशुओं के खून पर जीवित रहते हैं और कई प्रकार की त्वचा व रक्त संबंधी बीमारियाँ फैलाते हैं। परिणाम स्वरूप दूध उत्पादन कम होता है, पशु कमजोर पड़ जाते हैं और आर्थिक हानि होती है, लेकिन अगर थोड़ी जागरूकता और नियमित देखभाल करने से इन परजीवियों से पूरी तरह बचाव संभव है।

बाह्य परजीवी क्या होते हैं: बाह्य परजीवी वे कीट या सूक्ष्म जीव हैं जो पशुओं की त्वचा, बाल या कानों के अंदर रहते हैं और खून या त्वचा का रस चूसते हैं।

विभिन्न प्रकार के बाह्य परजीवियों का संक्रमण एवं उनके कारण होने वाली समस्याए: बाह्य परजीवी डेयरी पशुओं में कई समस्याएँ पैदा कर सकते हैं, जैसे कि-

1.माइट्स का संक्रमण: माइट्स खुजली पैदा करते हैं, जिससे त्वचा पर पपड़ी जम जाती है, बाल झड़ने लगते हैं और खुजली होने लगती है। वहीं दूसरी ओर, दाद बिना खुजली वाले गोलाकार धब्बे पैदा करता है। दोनों ही स्थितियाँ पशु के शरीर के विभिन्न हिस्सों को प्रभावित करती हैं, जिससे असुविधा होती है और त्वचा को संभावित नुकसान भी होता है।

2.जूँओं का संक्रमण: जूँए त्वचा में जलन पैदा करती हैं, जिससे जानवरों में खरोंचने, काटने और रगड़ने की प्रवृत्ति पैदा होती है। इस जलन के कारण वजन कम हो सकता है और उनकी हालत खराब हो सकती है। जूँ और घुन दोनों एक जानवर से दूसरे जानवर में फैल सकते हैं, जिससे संक्रमण बढ़ सकता है।

3.टिक्स का संक्रमण: टिक्स महत्वपूर्ण परजीवी होते हैं जो मेजबान के रक्त पर फ़ीड करते हैं, जिससे लकवा या बीमारियाँ फैलने की संभावना होती है। टिक-जनित बीमारियाँ मेज़बान के लिए घातक हो सकती हैं और दूध और चमड़े की हानि का कारण बन सकती हैं। टिक्स मेज़बान से दूर महीनों तक जीवित रह सकते हैं, जिससे लगातार खतरा बना रहता है।

4.पिस्सू संक्रमण: पिस्सू संक्रमण मवेशियों के स्वास्थ्य पर गंभीर प्रभाव डाल सकता है। भोजन के दौरान खून की कमी से एनीमिया हो सकता है, जिससे कमजोरी और सुस्ती आती है। काटने से दुधारू मवेशियों में खुजली और तनाव हो सकता है, जिससे उनका वजन कम हो सकता है और दूध का उत्पादन प्रभावित हो सकता है।

बाह्य परीजीवियों से बचाव के उपाय

(1) स्वच्छता ही पहली ढाल : सामान्यतः यह देखा जाता है कि गंदगी के कारण बाह्य परजीवियों कि संख्या बहुत ज्यादा बढ़ती है।

* पशुशाला को रोज़ाना साफ करें और गोबर-पेशाब तुरंत हटाएँ।

* फर्श सूखा और धूपदार रखें।

* हर 15 दिन में कीटनाशक छिड़काव करें – जैसे डेल्टामेथरीन या साइपरमेथरीन

* दीवारों के कोनों और बिछावन की जगह पर विशेष ध्यान दें, क्योंकि वहीं परजीवी अंडे देते हैं।

(2) नियमित स्नान और दवा का प्रयोग :

स्वच्छ पानी से नहलाने के साथ परजीवीरोधी घोल का प्रयोग बहुत उपयोगी है ।

* Butox (Deltamethrin 1%) : 1 मिली प्रति 1 लीटर पानी में घोलकर स्नान कराएँ।

* Cypermethrin – 1 मिली प्रति 2 लीटर पानी में।

* Ivermectin Injection – केवल पशु चिकित्सक की सलाह से (खासकर किलनी व जूं के लिए प्रभावी)।

स्नान के बाद पशु को धूप में सुखाएँ और थन या आँखों पर दवा न लगाएँ।

(3) प्राकृतिक उपाय भी असरदार : यदि आप रासायनिक दवाओं से बचना चाहते हैं तो कुछ घरेलू उपाय भी बहुत उपयोगी हैं –

नीम की पत्तियाँ या तेल: प्राकृतिक कीटनाशक और संक्रमणरोधी।

सरसों तेल + कपूर: खुजली वाले स्थानों पर लगाने से आराम मिलता है।

* पशुशाला में नीम की डालियाँ रखने से कीट दूर रहते हैं।

(4) पशु चिकित्सक की सलाह अनिवार्य : हर 3-4 महीने में पशु की संपूर्ण स्वास्थ्य जाँच कराएँ। यदि कोई पशु बार-बार खुजला रहा है या बाल झड़ रहे हैं, तो तुरंत वेटनरी डॉक्टर को दिखाएँ। डॉक्टर डीवार्मिंग और बाह्य परजीवी नियंत्रक प्रोग्राम तय कर सकते हैं।

(5) संक्रमित पशु को अलग रखें : संक्रमण फैलने से रोकने के लिए संक्रमित पशु को बाकी झुंड से 10-15 दिन तक अलग रखें । नया पशु खरीदने पर पहले निरीक्षण और उपचार करवाएँ, तभी झुंड में शामिल करें ।

मासिक देखभाल का छोटा शेड्यूल

सप्ताह	कार्य
पहला	पशुशाला की डीप सफाई और कीटनाशक छिड़काव
दूसरा	ब्यूटॉक्स दवा से स्नान
तीसरा	नीम तेल या सरसों तेल से मसाज
चौथा	पशु चिकित्सक द्वारा निरीक्षण

निष्कर्ष

स्वस्थ पशु ही अच्छे दूध उत्पादन की गारंटी हैं। थोड़ी सी देखभाल, स्वच्छता और समय पर उपचार से डेयरी पशुओं को बाह्य परजीवियों से पूरी तरह सुरक्षित रखा जा सकता है।

अक्षिता एग्रो

राघवेन्द्र सिंह
8959728253
खाद, बीज एवं कीटनाशक दवाओं के थोक एवं खेरिज विक्रेता
हमारे यहां सभी प्रकार के बीज एवं कीटनाशक दवाएं एवं खरपतवार नाशक दवाएं और अधिक उपज की दवाएं उचित दामों पर मिलती हैं
पता : अरैया रोड, आंतरी, जिला–ग्वालियर (म.प्र.)
01/205-26

मुर्गी पालन में रानीखेत और बर्ड फ्लू जैसे रोगों से बचाव के उपाय

डॉ. शेख टी. जे., डॉ. अमित कुमार झा
डॉ. राजीव रंजन, डॉ. राजेश रंजन
डॉ. बलेश्वरी दीक्षित
पशु चिकित्सा विज्ञान एवं पशुपालन महाविद्यालय, रीवा, मध्य प्रदेश-486001

भारत में मुर्गी पालन किसानों को मांस और अंडे के माध्यम से अच्छी आय प्रदान करता है। हालांकि, मुर्गियों में कई गंभीर बीमारियाँ होती हैं जो पूरे झुंड को तबाह कर सकती हैं और पशुपालकों को भारी आर्थिक नुकसान पहुँचाती हैं। इन बीमारियों में रानीखेत रोग और बर्ड फ्लू सबसे खतरनाक हैं। ये बीमारियाँ न केवल मुर्गियों को मारती हैं, बल्कि मनुष्यों हेतु भी संक्रामक हो सकती हैं। इसलिए, इन रोगों के बारे में सही जानकारी होना और सही रोकथाम के उपाय जानना बहुत जरूरी है।

रानीखेत रोग की परिभाषा और महत्व: रानीखेत रोग, जिसे न्यूकैसिल डिजीज भी कहा जाता है, मुर्गियों का एक बहुत ही खतरनाक वायरल रोग है। इस रोग का नाम भारत के एक गाँव रानीखेत के नाम पर रखा गया था, जहाँ यह रोग पहली बार पहचाना गया था। यह रोग एक पैरामिक्सोवायरस के कारण होता है जो मुर्गियों के तंत्रिका तंत्र, श्वसन तंत्र और पाचन तंत्र को गंभीर रूप से प्रभावित करता है। यह रोग विश्व भर में मुर्गियों में सबसे अधिक नुकसान करने वाला रोग माना जाता है। रानीखेत रोग की गंभीरता इसी बात से समझी जा सकती है कि इस रोग से संक्रमित मुर्गियों की मृत्यु दर 50 से 100 प्रतिशत तक हो सकती है। यह बीमारी बहुत तेजी से फैलती है और एक मुर्गी से दूसरी मुर्गी को आसानी से संक्रमित कर देती है। कभी-कभी तो कुछ दिनों में ही पूरा झुंड इस रोग की चपेट में आ जाता है। भारत में यह रोग बार-बार महामारी का रूप धारण करता है और किसानों को बहुत नुकसान पहुँचाता है।

रानीखेत रोग के कारण और संचरण: रानीखेत रोग एक पैरामिक्सोवायरस के कारण होता है जो बहुत ही संक्रामक होता है। यह वायरस संक्रमित मुर्गियों की नाक, गले और आँखों के स्रावों में मौजूद होता है। जब एक स्वस्थ मुर्गी किसी संक्रमित मुर्गी के संपर्क में आती है, तो यह वायरस आसानी से फैल जाता है। यह रोग संक्रमित पक्षियों के मल, लार, नाक के स्राव और खाँसी के माध्यम से फैलता है। रानीखेत का वायरस हवा में कई घंटों तक जीवित रह सकता है और दूर की मुर्गियों तक पहुँच सकता है। वायरस दूषित भोजन, पानी, कपड़ों और उपकरणों के माध्यम से भी फैलता है। संक्रमित मुर्गियों के साथ रहने वाले लोग भी इस वायरस को अपने शरीर पर ले जा सकते हैं और दूसरी मुर्गियों को संक्रमित कर सकते हैं। वायस मुर्गियों के अंडों के माध्यम से भी फैल सकता है। यह रोग विभिन्न प्रकार की मुर्गियों को प्रभावित करता है, चाहे वे देशी हों या विदेशी, छोटी हों या बड़ी।

रानीखेत रोग के लक्षण: रानीखेत रोग से संक्रमित मुर्गियों में विभिन्न प्रकार के लक्षण दिखाई देते हैं जो रोग की गंभीरता पर निर्भर करते हैं। सबसे आम लक्षण तंत्रिका संबंधी होते हैं। संक्रमित मुर्गी को सिर घुमाने में कठिनाई होती है, कभी-कभी सिर पीछे की ओर मुड़ जाता है और मुर्गी संतुलन खो देती है। कुछ मुर्गियाँ लकवे का शिकार हो जाती हैं और चल-फिर नहीं सकतीं। कुछ मुर्गियों में मांसपेशियों में कंपन भी दिखाई देता है। श्वसन तंत्र संबंधी लक्षण भी बहुत आम हैं। मुर्गियाँ खाँसी करती हैं, छींकती हैं और सांस लेने में कठिनाई महसूस करती हैं। उनके गले से अजीब आवाजें आती हैं। पाचन तंत्र भी प्रभावित होता है और मुर्गियों को दस्त हो जाते हैं। उनका मल हरे रंग का और पानीदार होता है। संक्रमित मुर्गियाँ भोजन नहीं खाती हैं और पानी भी कम पीती हैं। अंडे देने वाली मुर्गियों में अंडे उत्पादन पूरी तरह से बंद हो जाता है। अन्य लक्षणों में कमजोरी, सुस्ती, आँखें बंद करके बैठना और अलग-थलग रहना शामिल हैं। कुछ मुर्गियों की आँखें सूज जाती हैं और लाल हो जाती हैं। चेहरे पर सूजन भी देखी जाती है। कुछ मुर्गियों को बुखार भी आता है और वे ठंड से काँपती हैं। यदि रोग बहुत गंभीर है, तो मुर्गी कुछ ही दिनों में मर जाती है।

बर्ड फ्लू की परिभाषा और खतरा: बर्ड फ्लू, जिसे एवियन इनफ्लूएंजा भी कहा जाता है, एक संक्रामक वायरल रोग है जो विभिन्न प्रकार की पक्षियों को प्रभावित करता है। यह एक इनफ्लूएंजा ए वायरस के कारण होता है जो विश्व भर में एक गंभीर समस्या बन गया है। बर्ड फ्लू केवल पक्षियों को ही नहीं, बल्कि मनुष्यों को भी संक्रमित कर सकता है। कुछ प्रकार के बर्ड फ्लू वायरस मनुष्यों में गंभीर बीमारी और मृत्यु भी पहुँचा सकते हैं। भारत में भी कई बार बर्ड फ्लू का प्रकोप देखा गया है और हजारों मुर्गियाँ इसकी चपेट में आई हैं। बर्ड फ्लू के विभिन्न प्रकार होते हैं। कुछ प्रकार हल्के होते हैं और कुछ बहुत गंभीर होते हैं। सबसे खतरनाक बर्ड फ्लू H5N1 और H7N9 उपभेद हैं, जो मनुष्यों में गंभीर बीमारी पैदा कर सकते हैं। बर्ड फ्लू पक्षियों से मनुष्यों में आसानी से नहीं फैलता, लेकिन अगर किसी को संक्रमित पक्षी के सीधे संपर्क में आना पड़े तो संक्रमण का खतरा बढ़ जाता है।

बर्ड फ्लू के कारण और संचरण: बर्ड फ्लू इनफ्लूएंजा ए वायरस के विभिन्न उपभेदों के कारण होता है। ये वायरस मुख्य रूप से जंगली पक्षियों, विशेषकर जलपक्षियों में पाए जाते हैं। संक्रमित जंगली पक्षी पालतू मुर्गियों तक यह वायरस पहुँचाते हैं। व्यापार के माध्यम से, दूषित चारे के माध्यम से, या अन्य संपर्कों के माध्यम से वायरस एक स्थान से दूसरे स्थान तक फैलता है। बर्ड फ्लू वायरस संक्रमित पक्षियों की नाक, गले, आँखों और पाचन तंत्र के स्रावों में पाया जाता है। यह वायरस हवा में, दूषित भोजन और पानी में, और दूषित सतहों पर रह सकता है। जब एक स्वस्थ पक्षी किसी संक्रमित पक्षी के संपर्क में आता है या दूषित वातावरण के संपर्क में आता है, तो वह संक्रमित हो सकता है। कुछ परिस्थितियों में, मनुष्य भी इस वायरस से संक्रमित हो सकता है, विशेषकर अगर उसे संक्रमित पक्षी के साथ सीधा संपर्क हो।

बर्ड फ्लू के लक्षण: बर्ड फ्लू से संक्रमित मुर्गियों में विभिन्न लक्षण दिखाई देते हैं। सबसे गंभीर प्रकार के बर्ड फ्लू में मुर्गियाँ बहुत तेजी से बीमार पड़ती हैं और कुछ घंटों में ही मर सकती हैं। कई बार तो मुर्गी के कोई स्पष्ट लक्षण दिखाई देने से पहले ही वह मर जाती है। अन्य मामलों में, संक्रमित मुर्गियों में खाँसी, छींकना, सांस लेने में कठिनाई, दस्त, भूख में कमी और पानी पीने में कमी जैसे लक्षण दिखाई देते हैं। बर्ड फ्लू से संक्रमित मुर्गी अलग-थलग रहती है, सुस्त दिखती है और ज्यादातर समय सोती रहती है। उसके पंख झूलते हुए दिखते हैं। अंडे देने वाली मुर्गियों में अंडा उत्पादन बिल्कुल बंद हो जाता है और कुछ में विकृत अंडे भी पाए जाते हैं। कुछ मुर्गियों के सिर और गले पर नीलापन दिखाई देता है। पैरों में सूजन भी देखी जा सकती है। मुर्गियों की आँखें बंद रहती हैं और वे चलने-फिरने में असमर्थ हो जाती हैं।

संक्रमण की पुष्टि और निदान: रानीखेत और बर्ड फ्लू दोनों ही संक्रामक रोग हैं और इनके लक्षण कभी-कभी समान होते हैं। इसलिए, सही निदान के लिए प्रयोगशाला परीक्षण बहुत महत्वपूर्ण है। जब भी किसी मुर्गी में संदेह हो या ऐसे लक्षण दिखें, तो तुरंत पशु चिकित्सक से संपर्क करना चाहिए। संक्रमित मुर्गियों का रक्त, गले और नाक का स्राव, और अंतड़ियों का नमूना लिया जा सकता है। प्रयोगशाला में इन नमूनों की जाँच विभिन्न तरीकों से की जाती है। आरटी-पीसीआर परीक्षण सबसे विश्वसनीय परीक्षण है जो वायरस को सीधे पहचानता है। सीरोलॉजिकल परीक्षण भी किए जाते हैं जो शरीर में वायरस से लड़ने के लिए बने एंटीबॉडीज को देखते हैं। जल्द से जल्द परीक्षण करवाना चाहिए क्योंकि देरी से रोग की पहचान करना मुश्किल हो सकता है।

रानीखेत रोग से बचाव के उपाय: रानीखेत रोग से बचने के लिए सबसे महत्वपूर्ण उपाय टीकाकरण है। टीकाकरण के माध्यम से मुर्गियों को रानीखेत रोग से सुरक्षा दी जा सकती है। भारत में रानीखेत की जीवित कमजोर टीका और मारी गई वायरस की टीका उपलब्ध हैं। जीवित कमजोर टीका अधिक प्रभावी होती है और इसे नेजल ड्रॉप, ओरल ड्रॉप या आई ड्रॉप के रूप में दिया जाता है। बहुत छोटी मुर्गियों को आमतौर पर 4-6 हफ्ते की उम्र में यह टीका दिया जाता है। इसके बाद 12-14 हफ्ते की उम्र में बूस्टर डोज दिया जाता है। देशी मुर्गियों को 8-12 सप्ताह में पहली टीका दी जा सकती है और 20-24 सप्ताह में दूसरी टीका दी जाती है। मारी गई वायरस की टीका को इंजेक्शन के द्वारा दिया जाता है। यह टीका अधिक लंबे समय तक सुरक्षा प्रदान करती है, लेकिन जीवित कमजोर टीका के मुकाबले थोड़ी कम प्रभावी होती है। अंडे देने वाली मुर्गियों में टीकाकरण अत्यंत जरूरी है क्योंकि रानीखेत का रोग अंडा उत्पादन को पूरी तरह से बंद कर देता है। साफ-सफाई और स्वच्छता भी बहुत महत्वपूर्ण है। मुर्गीघर को नियमित रूप से साफ करना चाहिए और कीटाणुनाशक दवाइयों से कीटाणु रहित करना चाहिए। संक्रमित मुर्गियों को स्वस्थ मुर्गियों से अलग रखना चाहिए। बाहर से आने वाले लोगों को मुर्गीघर में जाने से पहले कपड़े बदलने और हाथ-पैर धोने के लिए कहना चाहिए। खाने के सभी बर्तन, पीने का पानी और बिस्तर नियमित रूप से कीटाणु रहित करना चाहिए। संक्रमित या संदिग्ध मुर्गियों को तुरंत अलग करना चाहिए और उन्हें अलग कमरे में रखना चाहिए। यदि कोई मुर्गी इस रोग से मर जाए, तो उसके शव को गहरे गड्ढे में दफनाना चाहिए या जला देना चाहिए। ऐसी मुर्गियों को किसी भी स्थिति में पास-पड़ोस में नहीं फेंकना चाहिए। मरी हुई मुर्गियों को छूते समय दस्ताने और मुखौटा पहनना चाहिए और बाद में हाथ-पैर अच्छी तरह से धोने चाहिए।

बर्ड फ्लू से बचाव के उपाय: बर्ड फ्लू से बचाव के लिए भी टीकाकरण बहुत महत्वपूर्ण है, लेकिन बर्ड फ्लू की टीका रानीखेत जितनी प्रभावी नहीं होती। बर्ड फ्लू के वायरस के विभिन्न उपभेद हैं और नई किस्में निकल रही हैं। इसलिए, टीका सभी प्रकार की बर्ड फ्लू से पूर्ण सुरक्षा नहीं दे सकता। फिर भी, बर्ड फ्लू की टीका लगवाना लाभदायक है क्योंकि यह रोग की गंभीरता को कम करती है। बर्ड फ्लू से बचाव के लिए साफ-सफाई और पर्यावरण नियंत्रण बहुत महत्वपूर्ण है। मुर्गीघर को हमेशा स्वच्छ रखना चाहिए और कीटाणुनाशक दवाइयों से कीटाणु रहित करना चाहिए। वायरस को मारने के लिए क्लोरीन युक्त कीटाणुनाशक सबसे प्रभावी होते हैं। जंगली पक्षियों को मुर्गीघर के पास आने से रोकना चाहिए क्योंकि वे बर्ड फ्लू का मुख्य स्रोत होते हैं। मुर्गीघर को नेटिंग से ढंक देना चाहिए ताकि जंगली पक्षी अंदर न आ सकें। मुर्गीघर से बाहर निकलने और आने वाले लोगों हेतु सख्त नियम बनाने चाहिए। हर कोई मुर्गीघर से निकलने के बाद अपने कपड़े धो लें और हाथ-पैर अच्छी तरह से धोएं। संक्रमित या संदिग्ध पक्षियों को तुरंत अलग कर देना चाहिए। मरी हुई मुर्गियों को सावधानी से संभालना चाहिए और उनके शव को गहरे गड्ढे में दफनाना चाहिए। पशु चिकित्सा विभाग को तुरंत सूचित करना चाहिए यदि बर्ड फ्लू का संदेह हो। बाहर से आने वाली मुर्गियों को अपनी मुर्गियों के साथ तुरंत नहीं मिलाना चाहिए। नई मुर्गियों को कम से कम दो हफ्ते के लिए अलग कमरे में रखना चाहिए ताकि किसी छिपे हुए संक्रमण को पहचाना जा सके। खाने-पीने के सामान और अन्य सभी सामग्री को साफ-सुथरा रखना चाहिए। जल-स्रोतों को गंदे पक्षियों से दूर रखना चाहिए।

सामान्य रोग नियंत्रण उपाय: रानीखेत और बर्ड फ्लू दोनों रोगों से बचने के लिए कुछ सामान्य उपाय हैं जो बहुत प्रभावी हैं। सबसे पहली बात यह है कि मुर्गीघर का स्थान उचित होना चाहिए। यह किसी गीली या दलदली जमीन पर नहीं बनाया जाना चाहिए। मुर्गीघर को ऊँची और सूखी जमीन पर बनाना चाहिए ताकि वहाँ पानी न रुके। मुर्गीघर को हवादार होना चाहिए ताकि ताजी हवा आए और नमी न रहे। मुर्गीघर के अंदर का तापमान उचित होना चाहिए। अधिक गर्मी या अधिक सर्दी दोनों ही मुर्गियों की प्रतिरोधक क्षमता को कमजोर कर देते हैं। मुर्गीघर को नियमित रूप से साफ करना चाहिए और पुराने बिस्तर को निकालकर नया बिस्तर डालना चाहिए। मुर्गीघर के आस-पास के क्षेत्र को भी साफ-सुथरा रखना चाहिए। कहीं भी गंदगी या दूषित पदार्थ जमा नहीं होने देने चाहिए।मुर्गियों को अच्छा और पोषक आहार देना चाहिए क्योंकि कुपोषण मुर्गियों की प्रतिरोधक क्षमता को कमजोर कर देता है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्य प्रदेश

डॉ. रामराज सेन (रिसर्च एसोसिएट)
नरेंद्र सिंह सिपानी आई.ए.आर.आई.-एस.के.ए.एफ., सी.ओ.आर.सी., मंदसौर (म.प्र.)

लहसुन की आधुनिक वैज्ञानिक खेती

मुख्य शब्द: लहसुन, नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटाश, सूक्ष्म पोषक तत्व, जैव फफूंदनाशक कैप्टन

परिचय

लहसुन (Allium sativum L.) एक प्रमुख मसाला फसल है, जिसका उपयोग केवल खाद्य स्वादवर्धक के रूप में ही नहीं, बल्कि औषधीय दृष्टि से भी किया जाता है। इसमें एलिसिन (Allicin) जैसे जैव सक्रिय तत्व पाए जाते हैं, जो जीवाणुरोधी, विषाणुरोधी तथा हृदय-रक्षक गुणों से युक्त होते हैं। हाल के वर्षों में लहसुन की खेती का क्षेत्र निरंतर बढ़ा है, विशेषतः इसकी आर्थिक लाभप्रदता और स्वास्थ्य उपयोगिता के कारण। लहसुन की प्रमुख बुवाई शरद ऋतु में की जाती है, जब तापमान मध्यम होता है। अत्यधिक गर्मी या लंबे दिन जड़ों के विकास पर प्रतिकूल प्रभाव डालते हैं।

भूमि का चयन एवं तैयारी

लहसुन की सफल खेती के लिए कार्बनिक पदार्थों से भरपूर दोमट मिट्टी सर्वाधिक उपयुक्त रहती है। बलुई दोमट से लेकर हल्की चिकनी मिट्टी तक में इसकी अच्छी फसल प्राप्त की जा सकती है, किंतु अत्यधिक भारी मिट्टी में कंद विकृत हो जाते हैं।

भूमि की तैयारी

प्रति हेक्टेयर 500 क्विंटल अच्छी तरह सड़ी हुई गोबर की खाद के साथ 25 किलोग्राम सूक्ष्म पोषक तत्व मिलाकर भूमि में अच्छी तरह मिलाएँ। भूमि को समतल करें और आवश्यकता अनुसार मेड़ें एवं नालियाँ तैयार करें।

* दोमट भूमि में बुवाई समतल रूप से करें।
* भारी भूमि में 3-4 बार हल चलाकर पाटा लगाएँ और 15 सेंटीमीटर की दूरी पर मेड़ें व नालियाँ बनाएं।

बुवाई मेड़ों के मध्य करें ताकि जल निकास सुगम रहे।

पोषण प्रबंधन

लहसुन की फसल पोषक तत्वों के प्रति संवेदनशील होती है।

बुवाई से पूर्व प्रति हेक्टेयर 50 किलोग्राम नाइट्रोजन, 50 किलोग्राम फॉस्फोरस एवं 60 किलोग्राम पोटाश भूमि में मिलाएँ।

शेष 75 किलोग्राम नाइट्रोजन को दो बराबर भागों में विभाजित करें – पहला भाग पहली सिंचाई के बाद और दूसरा भाग दूसरी सिंचाई के बाद दें।

उपयोगी सुझाव

उत्पादन वृद्धि के लिए प्रति हेक्टेयर 20 किलोग्राम मैग्नीशियम सल्फेट का उपयोग करें तथा नाइट्रोजन के साथ प्रति पौधा 100 ग्राम की दर से दें।

बीज उपचार

भूमिगत रोगों से सुरक्षा हेतु बीज एवं भूमि उपचार अत्यंत आवश्यक है।

विधि 1: जैविक बीज उपचार

जैव फफूंदनाशक माइक्रोबेक्स से बीज उपचार करने पर भूमि

पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ता तथा यह फफूंदनाशक लंबे समय तक सक्रिय रहता है।

* 1 किलोग्राम लहसुन दलियों के लिए 4 ग्राम माइक्रोबेक्स का प्रयोग करें।
* पाउडर को बराबर मात्रा में पानी में मिलाकर गाढ़ा घोल बनाएं।
* दलियों को इस घोल में डुबोकर अच्छी तरह मिलाएं और तत्पश्चात बुवाई करें।

विधि 2: रासायनिक बीज उपचार

1 ग्राम कैप्टन एवं 3 ग्राम इंडोफिल एम-45 को प्रति लीटर पानी में घोलें। दलियों को कपड़े की पोटली में बांधकर इस घोल में 10 मिनट तक डुबोएं। छाया में सुखाकर बुवाई करें। यह उपचार खेत पर ही करें और छोटे-छोटे भागों में प्रक्रिया अपनाएं।

प्रमुख प्रजातियां

1.जगन्नाथ : हल्के रंग की बड़ी दली वाली स्थानीय प्रजाति।
2.आकर्षी : हल्के पीले रंग की मध्यम आकार की प्रजाति।
3.पिनसरी : गहरे रंग की इटालियन प्रजाति।
4.फिनाफिया : मसालों हेतु विकसित प्रजाति।
5.जी-282 : बड़ी जड़ एवं बड़ी दली वाली उन्नत प्रजाति।

बुवाई का समय, विधि एवं बीज दर

बुवाई का समय: अक्टूबर से नवंबर सर्वोत्तम है। सितंबर में बुवाई करने पर रोगों का प्रकोप अधिक होता है।

बीज दर: 500-600 किलोग्राम दलियाँ प्रति हेक्टेयर।

दूरी: कतार से कतार 15 सेमी तथा पौधे से पौधे की दूरी 5-6 सेमी रखें।

गहराई: दलियों को लगभग 5 सेंमी गहराई तक बोएं।

सिंचाई एवं जल प्रबंधन

लहसुन की जड़ें अपेक्षाकृत उथली होती हैं, अतः हल्की और नियमित सिंचाई आवश्यक है।

* शीतकाल में 10-15 दिन के अंतराल पर सिंचाई करें।
* ग्रीष्मकाल में 8-9 दिन के अंतराल पर सिंचाई करें।

सिंचाई की अधिकता से जल-जमाव होता है जिससे फफूंद रोगों की संभावना बढ़ जाती है।

फसल सुरक्षा प्रबंधन

लहसुन की फसल में प्रायः निम्न समस्याएँ पाई जाती हैं—

* पौधों की वृद्धि रुकना * खाद एवं पानी का अपेक्षित प्रभाव न होना * पत्तियों का पीला पड़ना * पौधों का अचानक मुरझाना * जड़ों का छोटा रह जाना
* सड़ांध या रूट रॉट रोग * एफिड, थ्रिप्स एवं फफूंदजनित रोगों का प्रकोप

नियंत्रण हेतु वैज्ञानिक उपाय

1. माइक्रोन्यूट्रिएंट-20 या मैग्नेट 10 मि.ली. + यूरिया 6:7 ग्राम प्रति लीटर पानी में मिलाकर पहला छिड़काव 45:50 दिन की अवस्था में करें।
2. यूनिट्रॉन 1 मि.ली. + क्राड्सि 1.25 मि.ली. प्रति लीटर पानी में मिलाकर दूसरा छिड़काव 60-70 दिन पर करें।
3. मैग्नीशियम-सी या मैग्नीशियम स्पेशल 5 ग्राम + इंडोफिल एम-45 3 ग्राम (या क्राड्सि 2 ग्राम) प्रति लीटर पानी में मिलाकर तीसरा छिड़काव 75-85 दिन पर करें।
4. पुनः माइक्रोन्यूट्रिएंट-20 या मैग्नेट 10 मि.ली. + यूरिया 6:7 ग्राम प्रति लीटर पानी में मिलाकर चौथा छिड़काव 85-95 दिन पर करें।

प्रति हेक्टेयर फसल के लिए लगभग 500-600 लीटर घोल आवश्यक होता है।

अतिरिक्त सुझाव

* फिजिलियम, जेड एवं एफिड का नियंत्रण जैविक कीटनाशकों से करें।
* रूट रॉट या सड़ांध नियंत्रण हेतु क्राड्सि अथवा इंडोफिल एम-45 का प्रयोग आवश्यकता अनुसार पुनः करें।

खुदाई एवं भंडारण प्रबंधन

लहसुन की फसल लगभग 4.5-5 माह में परिपक्व हो जाती है। जब पत्तियाँ पीली होने लगें, तो सिंचाई बंद कर दें और 3-4 दिन बाद खुदाई करें। खुदाई के पश्चात दलियों को छाया में 2-3 दिन सुखाएँ। इसके बाद 2-2.5 सेंटीमीटर ऊपर से पत्तियाँ काटकर भंडारण करें।

भंडारण: दलियों को सूखी, हवादार एवं नमी-रहित स्थान पर रखें।

बीज हेतु संरक्षण

बीज के रूप में रखने के लिए 15:20 दलियों को एक साथ बाँधकर फूस की छत के नीचे हवा चलने वाले स्थान पर टाँगें। इन्हें वर्षा से बचाएँ और बुवाई से पूर्व पत्तियाँ व जड़ें अलग करें।

निष्कर्ष

लहसुन की आधुनिक खेती में वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाने से उत्पादन एवं गुणवत्ता दोनों में उल्लेखनीय वृद्धि संभव है। उचित भूमि चयन, पोषक तत्वों का संतुलित उपयोग, जैव एवं रासायनिक बीज उपचार, समुचित सिंचाई एवं रोग प्रबंधन से लहसुन की फसल को अत्यधिक लाभदायक बनाया जा सकता है। माइक्रोबेक्स जैसे जैविक फफूंदनाशकों का उपयोग पर्यावरण अनुकूल एवं दीर्घकालिक लाभकारी सिद्ध हो रहा है। उन्नत प्रजातियों और अक्टूबर-नवंबर में समय पर बुवाई से अधिक उत्पादन एवं बेहतर बाजार गुणवत्ता प्राप्त होती है।

फसल विविधीकरण और आर्थिक लाभ

✎ **डॉ. द्वारका** सहायक प्रोफेसर (अतिथि), कीटशास्त्र विभाग, जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय, कृषि महाविद्यालय, पन्ना (म.प्र.)

✎ **निशा चढ़ार** एम.एससी.(बॉटनी), महाराजा छत्रसाल बुंदेलखंड विश्वविद्यालय, शासकीय स्नातकोत्तर उत्कृष्ट महाविद्यालय, टीकमगढ़ (म.प्र.)

✎ **डॉ. आनंद कुमार पाण्डेय** सह-प्राध्यापक, कीटशास्त्र विभाग, कृषि महाविद्यालय, लखीमपुर खीरी केम्पस, चन्द्र शेखर आजाद विश्वविद्यालय कृषि एवं प्रौद्योगिकी (उ.प्र.)

✎ **डॉ. गगनदीप सिंह** पटेल, सहायक प्रोफेसर (अतिथि), प्रसार शिक्षा एवं संचार विभाग, जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय, कृषि महाविद्यालय, पन्ना (उ.प्र.)

सारांश

फसल विविधीकरण एक सतत, लाभकारी और पर्यावरण-अनुकूल कृषि प्रणाली है जो न केवल किसान की आय बढ़ाने में सहायक है बल्कि खेती को जलवायु परिवर्तन के प्रति अधिक लचीला बनाती है। यह किसानों को आर्थिक स्वतंत्रता और उत्पादन स्थायित्व दोनों प्रदान करती है।

प्रस्तावना

भारत की कृषि व्यवस्था लंबे समय से कुछ प्रमुख फसलों पर आधारित रही है जैसे गेहूं, धान, गन्ना आदि। लगातार एक ही फसल बोने से न केवल भूमि की उपजाऊ शक्ति कम होती है बल्कि किसान की आय भी सीमित हो जाती है। इस स्थिति से निपटने के लिए फसल विविधीकरण एक महत्वपूर्ण रणनीति के रूप में उभरा है। इसमें किसान पारंपरिक फसलों के साथ-साथ अन्य लाभदायक, अल्पकालिक, नकदी और पोषणीय फसलों की खेती करते हैं जिससे आर्थिक लाभ, पोषण सुरक्षा और संसाधनों का बेहतर उपयोग संभव होता है।

फसल विविधीकरण के प्रमुख पहलू

विभिन्न फसलों की खेती- एक ही मौसम में एक खेत में विभिन्न प्रकार की फसलें उगाना जैसे दू धान के साथ दलहन, या गेहूं के साथ सरसों।

बदलते मौसम और बाजार को ध्यान में रखना- विविध फसलें मौसम और बाजार की अनिश्चितताओं के प्रति लचीलापन प्रदान करती हैं।

उद्यानिकी, औषधीय व मसाले फसलों की ओर झुकाव-फलों, सब्जियों, फूलों, औषधीय पौधों की खेती से अधिक लाभ और रोजगार सृजन संभव होता है।

आर्थिक लाभ

आय में वृद्धि- विविध फसलों की खेती से एक ही मौसम में कई स्रोतों से आमदनी होती है।

मूल्य संवेदनशीलता से बचाव- किसी एक फसल के बाजार मूल्य गिरने पर किसान दूसरी फसलों से घाटे की पूर्ति कर सकता है।

नौकरी के अवसर- बागवानी, पशुपालन, मशरूम उत्पादन आदि से स्थानीय स्तर पर रोजगार बढ़ता है।

कम लागत - अधिक लाभ- फसल चक्र और सहायक खेती प्रणाली अपनाकर इनपुट लागत घटाई जा सकती है।

कृषि विपणन और निर्यात में अवसर-विशेष फसलों की ओर बढ़ने से किसान राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय बाजार से जुड़ सकते हैं।

अन्य लाभ

* मिट्टी की उर्वरता बनी रहती है
* कीट व रोगों का दबाव कम होता है
* जल संसाधनों का बेहतर प्रबंधन होता है
* पोषण सुरक्षा सुनिश्चित होती है

निष्कर्ष

आज के समय में जब किसान जलवायु परिवर्तन, बाजार अस्थिरता और कृषि लागत जैसी समस्याओं से जूझ रहे हैं, फसल विविधीकरण एक कुंजी समाधान के रूप में सामने आया है। यदि इसे नीतिगत समर्थन, प्रशिक्षण, बीज-उपलब्धता, बाजार पहुंच और तकनीकी सहायता मिले तो यह न केवल किसानों की आमदनी को दोगुना कर सकता है बल्कि देश को खाद्य, पोषण और आर्थिक सुरक्षा प्रदान करने में भी अहम भूमिका निभा सकता है।

01/2025-26

लखन पाटीदार कार्यक्रम प्रबंधक
एक्शन फॉर सोशल एडवांसमेंट, (भोपाल)

कृषि का पुनर्जागरण: जलवायु परिवर्तन के दौर में कृषि की नई रणनीति

जिन खेतों की मिट्टी में कभी जीवन की खुशबू थी,
आज उसी मिट्टी में थकान और खालीपन का एहसास है।
जो कभी करोड़ों सूक्ष्म और वृहद जीवों का पोषण करती थी,
आज वह खुद अपने पोषण की मोहताज है।।

परिचय: आज इस प्रतिस्पर्धात्मक युग में, जहां एक ओर महंगाई सातवें आसमान पर है, जलवायु परिवर्तन एक कड़वी सच्चाई बन चुका है, बदलते वैश्विक और भू-राजनीतिक समीकरण खेती को सीधे प्रभावित कर रहे हैं, वहां खेती से जीवनयापन करना अब किसानों के लिए पहले से कहीं अधिक चुनौतीपूर्ण हो गया है। एक समय था जब खेत किसान के गर्व और आत्मसम्मान का प्रतीक थे, अब वही खेत उसके लिए चिंता, जोखिम और असुरक्षा का प्रतीक बनते जा रहे हैं। तापमान में असमानता, बारिश के अनियमित चक्र, बढ़ती लागत, फसल के घटते दाम और मिट्टी की घटती उर्वरता, ये सब मिलकर खेती को एक सतत संघर्ष बना रहे हैं। एक तरफ खेती में लागत लगातार बढ़ रही है, बीज, खाद, दवाई और मजदूरी के दाम तेजी से ऊपर जा रहे हैं जबकि दूसरी तरफ उपज पर मौसम की मार और बाजार में कम मूल्य किसानों को दोहरी चोट दे रहे हैं। परिणाम स्वरूप, किसान का श्रम और उम्मीद दोनों ही टूट रहे हैं।

भारत जैसे कृषि प्रधान देश में, जहाँ हर दूसरा व्यक्ति किसी न किसी रूप में खेती पर निर्भर है, यह संकट केवल आर्थिक नहीं बल्कि सामाजिक और भावनात्मक भी है। अब सवाल यह नहीं है कि "खेती कैसे की जाए", बल्कि यह है कि "खेती और मिट्टी को कैसे जिंदा रखा जाए, किसानो की आय कैसे सुनिश्चित की जाये और आने वाली पीढ़ियों के लिए खेती को कैसे टिकाऊ बनाया जाए।" इन सवालो का जवाब तथ्यों, अनुभव और सोच के पुनर्गठन में छिपा है और यहीं से शुरू होता है "कृषि का पुनर्जागरण। "

कृषि के पुनर्जागरण पर प्रकाश डालने से पहले हमें वर्तमान कृषि की कुछ कड़वी सच्चाई जननी चाहिए -

* NDRR की रिपोर्ट के अनुसार हर साल दुनिया भर से लगभग 75 अरब टन उपजाऊ मिट्टी की ऊपरी परत का क्षरण हो रहा है ।
* UNDRR रिपोर्ट के अनुसार हर साल लगभग 12 मिलियन हेक्टेयर कृषि योग्य भूमि बंजर हो रही है।
* भारत में हुए कई राष्ट्रीय सर्वे/अध्ययनों के आधार पर लगभग 146-147 मिलियन हे. भूमि कुछ न कुछ रूप में क्षय/डिग्रेडेड बताई जा चुकी है।
* वैश्विक स्तर पर विशेषज्ञों का अनुमान है कि मिट्टी के संरक्षण न होने पर 2050 तक खाद्य, पारिस्थितिक और आय आधारित नुक़सान 23 ट्रिलियन तक पहुँच सकता है, यह सिर्फ सांख्यिकीय चेतावनी नहीं, भविष्य की आर्थिक तबाही का संकेत है।

यह आंकड़े बतलाते हैं कि मिट्टी, खेती और किसान सभी आज परिवर्तन के दौर में हैं, अगर हम इसके संभावित कारणों की पड़ताल करे तो निश्चित रूप से यह होंगे -

1.प्राकृतिक और पारिस्थितिक चुनौतियाँ * मिट्टी क्षरण, लवणता और पोषक तत्वों की कमी * भूजल स्तर में कमी और असंगत वर्षा * अत्यधिक अप्रिय मौसमी घटनाएँ जैसे सूखा, अतिवर्षा, तेज आँधी आदि

2.समश्रृंखला/आर्थिक चुनौतियाँ * बाजार में मुनाफाखोरी एवं अनिश्चितता * ऋण और वित्तीय जोखिम

3.सामाजिक-मानवीय व संरचनात्मक चुनौतियाँ * किसानों की घटती संख्या * औसत खेत का आकार कम होना * नीतिगत और संस्थागत कमजोरियाँ। इन सभी से अलावा भी कई और कारण हो सकते है जो वर्तमान परिस्थिति कृषि परिदृश्य को परिभाषित करते हैं।

कृषि का पुनर्जागरण: एक सम्भावित दृष्टिकोण-मेरे अनुसार वर्तमान कृषि की इन चुनौतियो से उभरने के लिए कोई निर्धारित उपाय या तकनीकी नहीं बल्कि एक व्यापक बदलाव ज्यादा यथार्थवादी हो सकता है। इसके लिए सरकार, संस्था, बाजार और बैंक नहीं बल्कि किसानो को भी कुछ मुलभुत बदलाव अपनी खेती में लाने होंगे। जलवायु परिवर्तन या अन्य किसी भी कारण से यदि खेती पर प्रभाव होता है तो इससे सबसे पहले किसान की आजीविका ही प्रभावित होती है और उन्हें ही सबसे पहले खेती के इस पुनर्जागरण की नींव रखनी होगी और इसके लिए उन्हें अपने कृषि से जुड़े दृष्टिकोण को और अधिक व्यापक बनाना होगा।

इसके कुछ संभावित तरीके निम्न है-

1.भूमि और मिट्टी को दीर्घकालीन संपत्ति के रूप में देखें - मिट्टी को खर्च की विषयवस्तु न मानकर पूंजी/संपत्ति समझें, यानी आज के तात्कालिक लाभ हेतु मिट्टी को दीर्घकालिक नुकसान न पहुँचाएँ। इसकी प्राथमिकता निवेश-पर-बचत वाली सोच से करें। (उदा. मिट्टी-कार्ड बनाएँ, मिट्टी परीक्षण को नियमित आदत बनाएं, संतुलित पोषक तत्व प्रबंधन, एकीकृत किट एवं व्याधि नियंत्रण, फसल चक्र आदि अपनाये, मिटटी की संरचना और जैव - विविधता की सुरक्षा करें)।

2.जोखिम-आधारित खेती की दिशा में सोचें - अधिक लाभ के लिए हर वर्ष खेती में सामान व सघन खेती न करें। फसल-चयन, बीज, खाद, दवाई इत्यादि में जोखिम-प्रोफ़ाइल बनाएं -उपलब्ध तकनिकी ज्ञान का उपयोग कर देखे की किस वर्ष में कौन-सा जोखिम ज्यादा है और उसकी तैयारी क्या हो सकती है, या वह कौन से टिकाऊ तरीके है जिन्हे अपनाने से वह रिस्क कम हो सकती है।

3. विविधीकरण को केंद्र में रखें - फसल विविधीकरण, मिश्रित कृषि (कृषि + पशुपालन + बागवानी), और मूल्य-सवर्धन गतिविधियाँ एक ही समय में अपनाने का रुख रखे ताकि एक फसल के नुकसान से पूरी आमदनी पर बोझ न पड़े।

4.संसाधन-कुशलता को व्यावहारिक मानक बनाएं - जल, पोषक तत्व और ऊर्जा का योजनाबद्ध उपयोग सुनिश्चित करें। हर बूंद और हर मिट्टी के कण का मूल्य समझे और बिना अत्यधिक निवेश पर निर्भर हुए इनके अत्यधिक की जगह समुचित उपयोग पर धयान दें।

5.पारंपरिक ज्ञान को वैज्ञानिक अनुकूलन के साथ जोड़ें - नवीन तकनिकी अच्छी होती है लेकिन यह सभी परिस्थिति में हो यह जरुरी नहीं, इसलिए पुरानी विधियाँ (हरी खाद, गोबर, गौ-मूत्र, कंपोस्ट, जैविक खाद, स्थानीय किस्मों का संरक्षण, आदि) और आधुनिक विज्ञान (प्रिसिशन कृषि, GIS, बायोफर्टिलाइज़र, मिट्टी परीक्षण, आदि) को मिलाकर एक संतुलित आदान प्रणाली बनाएं।

6.संयोजित बाजार रणनीति और सहकारीता की ओर बढ़ें - व्यावसायिक सोच जैसे एफपीओ/सहकारी/समूह को प्राथमिकता दें हो सके तो सामूहिक खरीद, सामूहिक प्रोसेसिंग और सामूहिक विपणन को प्रोत्साहन दे जिससे लागत और जोखिम दोनों घटते हैं।

7.नवीन तकनीकों को किसान-मित्र के रूप में अपनाना लेकिन अंधानुकरण न करना - AI- आधारित मौसम-सहायता, मोबाइल पर तकनिकी सुझाव, ड्रोन, ड्रिप, स्मार्ट सिंचाई, GIS आधारित सटीक आदान वाले उपकरण आदि का यथा-संभव प्रयोग करें। तकनीक को अपनाते समय स्थानीय ज्ञान और ट्वीक्स जोड़ें – "टूल + लोकल फिट" वाला रुख अपनाएँ, जिससे ये आसान, कम कीमत पर उपयोग करने योग्य बन सके।

8.दीर्घकालिकता के लिए छोटे उद्यम और वैकल्पिक आय धाराएँ विकसित करना - खेत-आधारित छोटे उद्यम जैसे वर्मी-कम्पोस्ट, प्रसंस्करण, पैकेजिंग, डेरी, जैविक आदान केंद्र आदि विकसित करें। इन्हें एक पूर्ण बिजनेस मॉडल के रूप में न देख कर, पहले छोटे उद्यम के रूप में अपनाएं; जो सफल हो, उसे कुछ हद तक बढ़ा कर सकते है ।

9.खेती का हिसाब रखे - आमतौर पर किसान खेती का सही हिसाब नहीं रख पाते है और खाद या दवाई पर जरुरत से ज्यादा खर्च कर देते है जबकि तुलनात्मक रूप से वह खर्च लाभकारी नहीं होता। इससे खेती में होने वाले कुछ गैर-जरुरी खर्चो से बचा जा सकता है या जिस मद में ज्यादा खर्च हो उसमे अधिक विविधीकरण द्वारा खर्च को कम करने पर जोर दिया जा सकता है द्व अगर खेती को लाभ का व्यवसाय बनाना है तो यह उस उद्यम का एक जरुरी पहलु है।

10.सीखने की आदत विकसित करें - किसी भी सफल उद्यम के लिए यह जरुरी होता है वह लगातार विकसित होता रहे फिर चाहे वह खेती ही क्यों न हो, समय के साथ खेती के तरीको को वास्तविक और अनुकूल बनाने के लिए लगातार कुछ सुधारो की जरुरत होती है और इसके लिए किसानो को नई और अच्छी तकनीकों, उन्नत किस्मों, जलवाणु जोखिमो, नए उन्नत उत्पादों आदि की समय पर जानकारी आवश्यक होती है। लगातार सीखने की आदत किसान को कभी पीछे नहीं रहने देगी साथ ही यह उसे वर्तमान चुनोतिये से निपटने की लिए और अधिक सशक्त बनने में सहायक होगी। किसान यदि सिखने के लिए कुछ समय निकले तो सरकार, सामाजिक संस्था, अन्य किसान या मोबाइल के माध्यम से उन्नत तकनिकी ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं।

निष्कर्ष: वर्तमान कृषि का समय अब साधारण संरचनाओं, व्यक्तिगत लाभ और स्थानीय बाजार तक सिमित रहने न नहीं है यह परिवर्तन का वह समय है जब हमें एक कदम पीछे हटकर अपनी मिट्टी, अपने प्राकृतिक संसाधन और अपनी अगली पीढ़ी के भविष्य के बारे में सोचना होगा। आज की उच्च-इनपुट माँगती खेती (जो जल्दी लाभ दे सकती है) ने कई जगह मिट्टी की उत्पादकता घटा दी है, पानी को जलरीला बना दिया है साथ ही किसान की जेब पर भी अधिक भार डाला है। दीर्घकालिक सम्पन्नता उसी किसान को मिलेगी जो आज मिट्टी की सेहत में निवेश, जोखिम-समझ और विविध आय के छोटे-छोटे कदम उठाएगा। यह आग्रह से ज्यादा एक सम्भव और सुरक्षित रास्ता है जो अपने खेत, अपने बच्चे, पर्यावरण और आने वाली पीढ़ियों के लिए आपके योगदान को सशक्त बनाता है । यह आज के समय की जरुरत है की हमारे किसान, खेती को सिर्फ रुचि, परंपरा, या व्यक्तिगत लाभ के लिए न करें, वह हमारी विरासत है। उच्च-इनपुट खेती के आकर्षण से कुछ समय तक लाभ हो सकता है, पर स्थायी आजीविका वहीं है जो मिट्टी को बचाकर रखे। आज समझदारी इसी में है की हम मिट्टी को फिर से संपन्न बनाएं, इनपुट बाजार पर किसान की निर्भरता कम करके उसे सशक्त बनाएं, और स्थानीय बाजार की सीमाओं से आगे निकलकर समूह के साथ नए रास्ते बनाएं।

स्रोत (Reference):- (Can be added in the publishing of article, if required)

1.Global soil erosion / topsoil loss — UNDRR / FAO estimates (~75 billion tonnes soil lost yearly; 912 million ha/year land loss).

2.Global economic impact estimate of soil degradation — FAO / UN Global Soil Partnership (23 trillion by 2050)

3.Soil degradation area in India – नेशनल/रिसर्च पेपर और NBSS आंकड़े (~146-147 million ha degraded)

4.परिवर्तन में cultivator/किसान संख्या का घटता रुझान (Census / Agriculture Census 2021-22 रिपोर्टें)

जिंक-युक्त हरी मटर: कुपोषण के खिलाफ एक पोषण क्रांति

आर्चिका अवसरे (सहायक प्रोफेसर) कृषि संकाय सेज विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)

डॉ. नरेंद्र चौहान सह-प्राध्यापक, कृषि संकाय सेज विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)

सारांश: हरी मटर एक पोषण संपन्न दलहनी फसल है जो प्रोटीन, विटामिन और खनिजों का भंडार होने के साथ-साथ मिट्टी में नाइट्रोजन स्थिरीकरण द्वारा भूमि की उर्वरता बढ़ाती है। भारत में इसका विस्तृत उत्पादन होने के बावजूद सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी से 'छिपी हुई भूख' की चुनौती बनी हुई है। इसके समाधान हेतु बायो-फोर्टिफिकेशन की अवधारणा एक प्रभावी दृष्टिकोण है, जो फसलों के पोषण मूल्य को बढ़ाकर खाद्य एवं पोषण सुरक्षा सुनिश्चित कर सकती है।

कीवर्ड: सतत छिपी हुई भूख, सूक्ष्म पोषक तत्व, मृदा उर्वरता, नाइट्रोजन स्थिरीकरण।

परिचय- एक पोषण: समृद्ध फसल का महत्व: हरी मटर एक सदियों पुरानी दलहनी फसल, दुनिया भर में अपने पोषण मूल्य और कृषि लाभों के कारण एक महत्वपूर्ण स्थान रखती है। यह न केवल उच्च-गुणवत्ता वाला प्रोटीन, डायटरी फाइबर, विटामिन (विशेषकर विटामिनच, ष्ट, और क्र कॉम्प्लेक्स) और खनिजों का एक समृद्ध स्रोत है, बल्कि यह जटिल कार्बोहाइड्रेट भी प्रदान करती है। इसका महत्व सिर्फ भोजन तक ही सीमित नहीं है। हरी मटर, अन्य दलहनी फसलों की तरह, वातावरण की नाइट्रोजन को अपनी जड़ों में स्थित राइजोबियम जीवाणुओं की सहायता से स्थिर करके मिट्टी की उर्वरता बढ़ाती है। यह प्रक्रिया मिट्टी को नाइट्रोजन से समृद्ध करती है, जिसका लाभ अगली फसल को मिलता है। इस प्रकार, हरी मटर को सतत कृषि (Sustainable Agriculture) और फसल चक्रण का एक आधारस्तंभ माना जाता है। भारत मटर उत्पादन में विश्व के प्रमुख देशों में शामिल है। देश में लगभग 5.64 लाख हेक्टेयर क्षेत्र में मटर की खेती की जाती है, जिससे 56.94 लाख टन का वार्षिक उत्पादन प्राप्त होता है। मध्यप्रदेश जैसे प्रमुख उत्पादक राज्य में करीब 1.07 लाख हेक्टेयर क्षेत्र में मटर की खेती होती है, जिससे लगभग 10.37 लाख मीट्रिक टन उत्पादन होता है।

जिंक का महत्व: पौधे से प्लेट तक एक आवश्यक तत्व: पौधों के लिए जिंक की महत्वपूर्ण भूमिका जिंक पौधों के लिए एक अत्यावश्यक सूक्ष्म पोषक तत्व है, भले ही इसकी आवश्यकता बहुत कम मात्रा (10-6 g/g पौधे के ताजे भार) में हो। इसकी कमी को कोई अन्य तत्व पूरा नहीं कर सकता। जिंक पौधों में निम्नलिखित महत्वपूर्ण कार्य करता है एंजाइम सक्रियता यह 300 से अधिक एंजाइमों का एक सह-कारक (co-factor) है, जो विभिन्न चयापचय क्रियाओं जैसे प्रोटीन संश्लेषण, ऑक्सिन (वृद्धि हार्मोन) उत्पादन और ऊर्जा चयापचय के लिए जिम्मेदार हैं। प्रोटीन संश्लेषण जिंक की उपस्थिति राइबोसोम्स की स्थिरता के लिए आवश्यक है, जिससे प्रोटीन का निर्माण ठीक से हो पाता है। कोशिका झिल्ली की स्थिरता यह कोशिका झिल्ली की संरचना और कार्य को बनाए रखने में मदद करता है। जिंक की कमी के लक्षण पौधों की बढ़वार रुक जाती है और पत्तियाँ छोटी रह जाती हैं।पत्तियों की बीच की भाग (इंटरनोड्स) का विकास कम होता है, जिससे पौधा झाड़ीनुमा दिखाई देता है। नई पत्तियों पर पीले-सफेद धब्बे दिखाई देते हैं।दानों का भराव कम होता है, जिससे उपज और गुणवत्ता दोनों प्रभावित होती हैं।

मिट्टी में जिंक की कमी के प्रमुख कारण इस प्रकार हैं-उच्च pH एवं कैल्केरियस (चूना युक्त) मिट्टियां- भारत की अधिकांश मिट्टियों का pH क्षारीय है। इस स्थिति में जिंक अघुलनशील जिंक फॉस्फेट या जिंक कार्बोनेट के रूप में परिवर्तित हो जाता है, जिसे पौधे अवशोषित

मटर: प्रोटीन और विटामिन से भरपूर पौष्टिक सब्जी।

नहीं कर पाते। जैविक पदार्थों की कमी- मिट्टी में कार्बनिक पदार्थ जिंक को बांधे रखते हैं और इसे धोने से बचाते हैं। रासायनिक उर्वरकों के अत्यधिक उपयोग और कार्बनिक खाद के कम इस्तेमाल से मिट्टी का जैविक पदार्थ घट गया है।

उष्णकटिबंधीय जलवायु: उच्च तापमान और भारी वर्षा के कारण जिंक जैसे सूक्ष्म पोषक तत्व मिट्टी की ऊपरी परत से निचली परतों में धुल जाते हैं (लीचिंग), जहाँ से पौधों की जड़ें उन्हें नहीं पहुँच पातीं।विश्व स्तर पर, पौधों और अंततः मनुष्यों में जिंक की व्यापक कमी का प्राथमिक कारण दुनिया भर की मिट्टियों में जिंक की निम्न प्राकृतिक मात्रा, उच्च pH, कम कार्बनिक पदार्थ और चूना युक्त परिस्थितियाँ हैं। इसका सीधा प्रभाव फसल की उपज और उसके पोषण मूल्य पर पड़ता है, जो अंततः मानव स्वास्थ्य तक पहुँचता है।

मानव स्वास्थ्य पर जिंक की कमी का विनाशकारी प्रभाव: विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) के अनुसार, जिंक की कमी दुनिया भर में पोषण संबंधी पाँच प्रमुख जोखिम कारकों में से एक है। विश्व की 50त्न से अधिक आबादी जिंक की कमी से प्रभावित है, और भारत जैसे विकासशील देशों में यह समस्या और भी गहरी है। रोग प्रतिरोधक क्षमता- जिंक शरीर में ञ्ज-कोशिकाओं और अन्य प्रतिरक्षा कोशिकाओं के विकास और कार्य के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। इसकी कमी से व्यक्ति संक्रमणों की चपेट में आसानी से आ जाता है। अनुमान है कि 16% गंभीर श्वसन संक्रमण और 10त्न डायरिया के मामले जिंक की कमी से जुड़े हैं। कोविड-19 संक्रमण- हाल के अध्ययनों में पाया गया कि कोविड-19 रोगियों में जिंक का स्तर कम था और जिंक की कमी वाले मरीजों में बीमारी की गंभीरता अधिक पाई गई।

बच्चों का विकास: जिंक की कमी बच्चों की वृद्धि और संज्ञानात्मक विकास को अवरुद्ध करती है, जिससे स्टंटिंग (कद की वृद्धि रुकना) और अधिगम संबंधी समस्याएँ हो सकती हैं।

चयापचय क्रियाएं: यह डीएनए संश्लेषण, कोशिका विभाजन और घाव भरने की प्रक्रिया हेतु आवश्यक है। अगर यह स्थिति जारी रही, तो अनुमान है कि 2030 तक जिंक की कमी से प्रभावित वैश्विक जनसंख्या 73% तक पहुँच सकती है, जो एक भयावह स्थिति होगी।

समाधान: एग्रोनॉमिक बायो-फोर्टिफिकेशन की रणनीतियां: बायो-फोर्टिफिकेशन का प्राथमिक उद्देश्य फसलों के खाद्य भागों में पोषक तत्वों की मात्रा को स्वाभाविक रूप से बढ़ाना है। आनुवंशिक बायो-फोर्टिफिकेशन के साथ-साथ, एग्रोनॉमिक बायो-फोर्टिफिकेशन एक त्वरित, प्रभावी और किसान-हितैषी तकनीक साबित होती है, जिसमें जिंक का उपयोग कई तरीकों से किया जाता है। बीज उपचार के अंतर्गत बुवाई से पहले बीजों को जिंक सल्फेट के घोल से उपचारित किया जाता है, जिससे अंकुरण दर और प्रारंभिक पौध वृद्धि में सुधार होता है और यह एक किफायती विधि है। पर्णीय छिड़काव सबसे प्रभावी तरीकों में से एक है, जिसमें फसल की विशेष अवस्थाओं में पत्तियों पर जिंक सल्फेट का घोल छिड़काव किया जाता है, जिससे दानों में जिंक की सांद्रता में 30-50% तक की वृद्धि देखी गई है और यह मिट्टी के गुणों से अप्रभावित रहती है। मृदा अनुप्रयोग में बुवाई के समय मिट्टी में जिंक सल्फेट डाला जाता है, हालाँकि इसकी प्रभावशीलता मिट्टी के प्रकार पर निर्भर करती है। एक और टिकाऊ एवं प्रभावशाली जैव-तकनीक जिंक घुलनशीलक जीवाणुओं (ZSB) का उपयोग है, जो प्राकृतिक रूप से मिट्टी में पाए जाने वाले लाभकारी सूक्ष्मजीव हैं और अघुलनशील जिंक को पौधों के लिए उपलब्ध घुलनशील रूप में परिवर्तित कर देते हैं। ँस्क्र के प्रयोग से न केवल दानों में जिंक की मात्रा बढ़ती है, बल्कि इससे मिट्टी के स्वास्थ्य में सुधार होता है, रासायनिक उर्वरकों की आवश्यकता कम होती है और फसल की उपज में 15-20त्न तक की वृद्धि देखी गई है6.जिंक फोर्टिफिकेशन के बहुआयामी लाभ जिंक फोर्टिफिकेशन यानी जिंक-युक्त हरी मटर का उत्पादन एक ऐसी एकल हस्तक्षेप रणनीति है, जिसके बहु-आयामी और बहु-स्तरीय लाभ हैं, जो कृषि, पोषण, स्वास्थ्य और सामाजिक-आर्थिक विकास को एक साथ संबोधित करती है। कृषि के स्तर पर, इससे न केवल 15-25त्न तक उपज में वृद्धि होती है, बल्कि दानों की गुणवत्ता, वजन और पोषण मूल्य में भी सुधार होता है, जिससे किसानों को बाजार में बेहतर मूल्य प्राप्त होता है। साथ ही, जिंक सॉल्युबिलाइजिंग बैक्टीरिया (ZSB) जैसी जैविक तकनीकों के प्रयोग से मिट्टी के सूक्ष्मजीवों की गतिविधि बढ़ती है, जिससे मृदा स्वास्थ्य और दीर्घकालिक उर्वरता सुनिश्चित होती है और रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता कम होकर सतत कृषि को बढ़ावा मिलता है।पोषण और स्वास्थ्य के स्तर पर, जिंक-समृद्ध मटर सीधे तौर पर आहार में जिंक की कमी को दूर करके "छिपी हुई भूख" पर नियंत्रण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। इसके परिणामस्वरूप, विशेष रूप से बच्चों और महिलाओं में रोग प्रतिरोधक क्षमता मजबूत होगी, विकास अवरुद्ध नहीं होगा और समग्र स्वास्थ्य में सुधार आएगा। इससे न केवल जन स्वास्थ्य बेहतर होगा, बल्कि स्वास्थ्य पर होने वाले सार्वजनिक व्यय में भी कमी आएगी। सामाजिक-आर्थिक पहलू पर, इस हस्तक्षेप से किसानों की आय में बेहतर उपज और उच्च बाजार मूल्य के कारण वृद्धि होती है।

निष्कर्ष और भविष्य की दिशा: हरी मटर जैसी पौष्टिक फसलों में जिंक का जैव-सुदृढ़ीकरण (बायो-फोर्टिफिकेशन) एक अत्यंत कारगर कृषि पद्धति है, जो कृषि उत्पादन, मानव पोषण और पर्यावरणीय स्थिरता के बीच एक सुंदर सामंजस्य स्थापित करती है। यह केवल एक तकनीक ही नहीं, बल्कि एक सामाजिक जिम्मेदारी भी है। भविष्य में आगे बढ़ने के लिए जागरूकता फैलाना आवश्यक है, जिसमें किसानों को जिंक की कमी के दुष्प्रभावों और जैव-सुदृढ़ीकरण के फायदों के बारे में शिक्षित किया जाए। साथ ही, सरकारी मदद के तहत जिंक युक्त खाद और जेडएसबी (ँस्क्र) कल्चर पर सब्सिडी देकर उन्हें किसानों के लिए सस्ता और सुलभ बनाना चाहिए। नए शोध को बढ़ावा देते हुए हरी मटर की ऐसी नई किस्मों के विकास पर ध्यान देना होगा, जिनमें जिंक की मात्रा अधिक हो। इसके अलावा, जिंक से भरपूर उत्पादों के लिए अलग बाजार और बेहतर दाम सुनिश्चित करना भी जरूरी है, ताकि किसानों को इसका आर्थिक लाभ स्पष्ट रूप से दिखाई दे। आज, जब दुनिया की एक बड़ी आबादी जिंक की कमी से प्रभावित है, जिंक युक्त हरी मटर कुपोषण के खिलाफ लड़ाई में एक मजबूत और टिकाऊ हथियार साबित हो सकती है। यह पहल न सिर्फ आज की पीढ़ी, बल्कि आने वाली पीढ़ियों के लिए एक स्वस्थ भविष्य का आधार बनेगी।एक स्वस्थ और समृद्ध भविष्य की बुनियाद रखेगी। यह एक ऐसी क्रांति की शुरुआत है, जिसकी जड़ें खेतों में हैं और जिसका फायदा पूरे समाज को मिलेगा।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्य प्रदेश

डॉ. वर्षा मोरे (कृषि विस्तार शिक्षा विभाग, जबलपुर) (म.प्र.)

श्रीअन्न खेती में उद्यमिता संवर्द्धन के अवसर

(आदिवासी क्षेत्रों में महिला सशक्तिकरण, मूल्य संवर्द्धन और आजीविका विकास की दिशा में एक पहल)

भारत के आदिवासी अंचलों में श्रीअन्न (Millets) न केवल एक फसल है, बल्कि जीवन और संस्कृति का हिस्सा है। यह पोषक तत्वों से भरपूर, पर्यावरण के अनुकूल और छोटे किसानों की आय का प्रमुख स्रोत रहा है। किंतु आधुनिक कृषि के दौर में इन फसलों का क्षेत्र और महत्व घटता जा रहा है। ऐसे में महिला किसानों की भागीदारी, प्रसंस्करण तकनीक, मूल्य संवर्द्धन और उद्यमिता विकास के माध्यम से बाजरा खेती को पुनर्जीवित करना समय की आवश्यकता है।

1. गाँव स्तर पर मिलेट प्रसंस्करण इकाइयों की स्थापना

आदिवासी अंचलों में डिहस्किंग, मिलिंग, सफाई, ग्रेडिंग और पैकेजिंग जैसी गतिविधियों के लिए साझा सुविधा केंद्र (Common Facility Centers) स्थापित किए जाएँ। इससे महिलाओं को स्थानीय स्तर पर रोजगार मिलेगा और मिलेट उत्पादों की गुणवत्ता और बाजार मूल्य दोनों बढ़ेंगे।

2. सरकारी योजनाओं में मिलेट उत्पादों का एकीकरण

मिलेट को सरकारी योजनाओं में शामिल करना महिलाओं के लिए आय और पहचान दोनों बढ़ा सकता है।

- सार्वजनिक वितरण प्रणाली (PDS) में चावल/गेहूं के स्थान पर लाभार्थियों को श्री अन्न या उसका आटा चुनने का विकल्प दिया जाए।
- आंगनवाड़ी में बच्चों के पोषण आहार में श्री अन्न (मिलेट) आधारित व्यंजन शामिल किए जाएँ।
- गर्भवती और स्तनपान कराने वाली महिलाओं के लिए (मिलेट) श्री अन्न आधारित पोषण थाली प्रदान की जाए।

3. आदिवासी समुदायों की पारंपरिक ज्ञान संपदा का संरक्षण

आदिवासी महिलाएँ मिलेट्स के औषधीय और पोषक गुणों की गहरी जानकारी रखती हैं। इस पारंपरिक ज्ञान का संरक्षण और प्रचार-प्रसार उनके सशक्तिकरण का सशक्त माध्यम बन सकता है।

मिलेट का नाम	पारंपरिक औषधीय उपयोग
रागी (नाचनी)	स्तनपान बढ़ाने, हड्डियों को मजबूत करने में सहायक
कंगनी (काकुन)	मधुमेह नियंत्रण और पित्त संबंधी रोगों में उपयोगी
कुटकी (सामई)	पाचन सुधार और उपवास आहार में प्रचलित
कोदो (कोदन)	मोटापा, मधुमेह और उच्च रक्तचाप में लाभकारी
साँवा (झंगोरा)	शरीर को ठंडक देने और मूत्र रोगों में लाभकारी
चैना (बरी)	त्वचा और श्वसन रोगों के लिए उपयोगी

4. जनजातीय क्षेत्रों में मिलेट आधारित फूड स्टॉल और कैफे

मिलेट से बने व्यंजनों जैसे रागी लड्डू, कोदो खिचड़ी, कुटकी इडली आदि के फूड स्टॉल व कैफे ग्रामीण युवाओं और महिलाओं के लिए नए उद्यमिता अवसर हैं।

A. कृषि-पर्यटन (Agro-Eco Tourism) में जनजातीय भागीदारी

- "मिलेट विलेज" विकसित किए जाएँ जहाँ पर्यटक बुवाई, कटाई, डिहस्किंग और पकाने की प्रक्रिया का अनुभव लें।
- कृषि, पोषण और गृह विज्ञान के छात्र अध्ययन भ्रमण के माध्यम से इन गतिविधियों को सीख सकें।
- विद्यालयों में श्री अन्न ज्ञान पथ (Millets learning trails) चलाकर बच्चों को बीज बोने और व्यंजन बनाने का अनुभव कराया जाए।

B. सांस्कृतिक पर्यटन और खाद्य उत्सव (Cultural Tourism and Food Festivals)

- पर्यटन सीजन में मिलेट और जनजातीय खाद्य उत्सव आयोजित किए जाएँ।
- जनजातीय नृत्य, हस्तकला, और मिलेट व्यंजनों का प्रदर्शन हो।
- छात्रों के लिए क्विज़,(quizzes), रेसिपी नवाचार, कुकिंग प्रतियोगिता रखी जाए।
- कॉलेज अपने वार्षिक भ्रमण इन उत्सवों से जोड़ सकते हैं।

5. महिलाओं को सूचना और प्रशिक्षण से सशक्त बनाना

महिलाएँ (मिलेट) श्रीअन्न की खेती, कटाई और प्रसंस्करण में केंद्रीय भूमिका निभाती हैं। उन्हें सशक्त बनाने हेतु – ग्राम सूचना केंद्र और समुदाय रेडियो से कृषि सलाह दी जाए। कृषि विज्ञान केंद्र (KVK), SHG और NGO के माध्यम से प्रशिक्षण आयोजित हों। प्रशिक्षण में भंडारण, ग्रेडिंग, पैकेजिंग, मूल्य संवर्द्धन, व्यवसाय प्रबंधन जैसे विषय शामिल किए जाएँ। PMFME और NRLM जैसी योजनाओं के तहत महिला उद्यमों को वित्तीय सहयोग दिया जाए।

6. घटती खेती का रुझानः अवसर में परिवर्तन

मंडला और डिंडोरी जैसे जिलों में मिलेट की खेती घट रही है। लेकिन यह स्थिति महिलाओं के लिए अवसर बन सकती है– पारंपरिक मिलेट किस्मों की संरक्षक बनना, मांग और आपूर्ति के अंतर का लाभ उठाकर मूल्य संवर्द्धन वाले उत्पाद तैयार करना, और महिला संचालित मिलेट ब्रांड्स को बढ़ावा देना।

7. बीज संरक्षण और महिला सशक्तिकरण

मिलेट बीज संरक्षण महिलाओं की पारंपरिक भूमिका रही है। जैसे – लहरी बाई (मध्य प्रदेश) ने 150 से अधिक मिलेट किस्मों का संरक्षण कर राष्ट्रीय पहचान पाई। मंडला और डिंडोरी में महिला समूहों द्वारा संचालित सामुदायिक बीज बैंक स्थापित किए जाएँ, जो गुणवत्ता बीज उपलब्ध कराने के साथ टिकाऊ आजीविका का माध्यम बनें।

8. मिलेट में कॉन्ट्रैक्ट फार्मिंग की संभावना

जैसे आलू और गन्ने में अनुबंध खेती से लाभ हुआ, वैसे ही मिलेट में भी कॉन्ट्रैक्ट फार्मिंग मॉडल अपनाया जा सकता है। इससे किसानों को निश्चित बाजार और मूल्य मिलेगा, कंपनियाँ तकनीकी सहयोग और बीज आपूर्ति करेंगी, और महिलाओं को उपज संग्रहण, ग्रेडिंग और पैकेजिंग में रोजगार मिलेगा।

9. आईसीटी और डिजिटल समावेशनः चुनौतियाँ और अवसर

आदिवासी जिलों में नेटवर्क सीमाएँ एक चुनौती हैं। फिर भी स्थानीय भाषाओं में डिजिटल प्लेटफॉर्म, मोबाइल ऐप, व्हाट्सऐप समूह, सामुदायिक रेडियो के माध्यम से कृषि सूचना पहुँचाना महिलाओं के लिए ज्ञान का सशक्त माध्यम बन सकता है।

10. बहु-हितधारक साझेदारी (Multi-Stakeholder Partnerships)

मिलेट के संवर्द्धन के लिए सरकार, स्वयंसेवी संस्थाएँ, अनुसंधान केंद्र, महिला समूह, सहकारी समितियाँ और निजी क्षेत्र – सभी को एक मंच पर लाना होगा। ऐसी साझेदारी से संसाधन साझा करना, तकनीकी मार्गदर्शन और महिला केंद्रित कार्यक्रमों का प्रभावी क्रियान्वयन संभव होगा।

निष्कर्ष

मिलेट केवल एक फसल नहीं, बल्कि महिलाओं की आजीविका, पोषण सुरक्षा और सांस्कृतिक गौरव का प्रतीक है। महिला केंद्रित नीतियाँ, प्रशिक्षण, उद्यमिता अवसर और सांस्कृतिक पर्यटन जैसे उपायों से न केवल मिलेट की खेती पुनर्जीवित होगी बल्कि लैंगिक समानता और ग्रामीण विकास के नए द्वार भी खुलेंगे।

फूलों की भाषा

रोमा वर्मा शाक-सब्जी विभाग, महात्मा गांधी उद्यानिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय सांकरा, दुर्ग (छ.ग.)

फूल धरती पर कुदरत का अद्भुत करिश्मा है। फूलों को दुनिया की सबसे सुन्दर वस्तुओं में शुमार किया गया है। फूलों का जन्म इस धरती पर आदम काल और आदम जाति से भी पूर्व हुआ था। अर्थात् प्राचीन काल से ही फूल इस धरती की गोद को रमणीय, रंगीन तथा सुगंधित बनाये हुए थे। प्रकृति में सुंदरता की शुरूआत फूलों के जन्म से ही हुआ है। रंग-बिरंगे फूलों ने तो वनस्पति जगत की काया ही पलट दिया है। केवल सौंदर्य बोध ही नहीं, फूलों में वंष वृद्धि और विविधता की भी शुरूआत किया था।

फूल चाहें बगिया में मुस्करा रहे हों या घर में सजे हों, या किसी के गले की शोभा बढ़ा रहे हों या देवी-देवताओं के सिर पर चढ़े हों या फिर किसी के बालों में सजे हों, अपनी नैसर्गिग शोभा अलग दिखाते हैं। फूलों की बात यहीं खत्म नहीं होती बल्कि फूलों का संबंध मनुष्य के जन्म से मरण तक पिछा नहीं छोड़ता है। प्रकृति एवं सौंदर्य के अलावा फूलों को प्रेम और शांति का प्रतीक माना गया है। फूलों का नाम लेते ही हमारा दिमाग शांत और रोमांटिक हो जाता है। **फूल मनुष्य की भावनाओं को व्यक्त करने वाले सजग प्रहरी हैं। प्रस्तुत लेख का यही विषय वस्तु है:-**

फूलों की भाषा

क्या फूल आपस में बातचीत करते हैं ? यदि हां तो किस भाषा में ? क्या मनुष्य पशु-पक्षियों, कीट-पतंगों जैसे इनकी भी कोई अपनी भाषा है? नहीं। जब हम किसी को कोई फूल भेंट करते हैं तो ये फूल स्वयं एक आंतरिक संदेश व्यक्त करते हैं। प्रत्येक फूल का अपना एक खास आंतरिक संदेश होता है। प्राचीन काल से ही मनुष्य अपने प्रिय जनों को फूल भेजकर अपनी मनोभावनाओं को व्यक्त करता था। इसको 'फूलों की भाषा' कहते हैं। फूलों की यह भाषा भिन्न-भिन्न देशों में भिन्न-भिन्न होती है। **फूलों की भाषा के कुछ चुनिन्दे उदाहरण निम्नलिखित हैं:-**

फूलों का राजा गुलाब है, खुशबू की पूरी किताब है

गुलाब

यदि कोई युवती किसी युवक को गुलाब का फूल भेंट करती है या युवक किसी युवती को भेंट करता है तो इसका मतलब है-दोनों एक दूसरे से प्यार करते हैं यदि गुलाब का यह फूल लाल है तो यह 'प्रगाढ़ प्रेम' का इजहार करता है। यदि भेंट में दिया गया गुलाब पीले रंग का हो तो यह अस्वस्थ होने की खबर देता है परन्तु सफेद गुलाब बताता है कि प्यार पुनीत एवं सच्चा है। यदि भेंट में प्राप्त गुलाब के फूल हल्के बैंगनी रंग के है तो प्रेमी अपने प्रियतमा से यह कह रहा है कि मैं प्यार की राह पर चलते-चलते थकता जा रहा हूँ मुझे कोई सफलता की राह सूझ नहीं रही है आँखों के सामने अँधेरा छाता जा रहा हैं।

ट्यूलिप

ट्यूलिप

यदि कोई व्यक्ति किसी को ट्यूलिप के फूलों का भेंट देता है, तो इसका मतलब है कि वह 'आशा और भलाई' का संदेश दे रहा है। यह फूल 'बसन्त ऋतु'के आगमन का भी प्रतीक है। परंतु गहरे लाल रंग के ट्यूलिप के फूल 'मौन प्यार'के द्योतक हैं।

नारसिसस

नारसिसस

यदि आपको अपनी प्रेमिका से नारसिसस के फूल प्राप्त होते हैं तो ये फूल आपको सूचित करते हैं कि 'आप मूर्ख हैं तथा आप का प्यार अन्धा है'। ये फूल 'अभियान तथा स्वार्थ' भी प्रकट करते हैं। अतः प्रेमिका से नारसिसस के फूल प्राप्त होने पर आप अपने विचार बदल लें नहीं तो आप जिन्दगी से थक कर कोई गलत काम भी कर सकते हैं।

वाइलेट

यदि आपको वाइलेट उपहार में प्राप्त होता है तो समझ जाइये कि भेजने वाला आपसे अनुरोध कर रहा है कि 'मुझे मत भुलिये'। आपके प्रति उसके विचार अच्छे तथा आदरणीय हैं। उसकी इच्छा तो साथ-साथ रहने की थी। परन्तु ईश्वर को यह गवारा नहीं था।

रजनीगंधा

रजनीगंधा

यह फूल सच्चे और पवित्र प्यार का इजहार प्रस्तुत करता है। यदि आप को प्राप्त हो तो आप सौभाग्यशाली हैं अर्थात् आपकी जिन्दगी में चार चाँद लग गया है। आपकी सभी इच्छाओं की पूर्ति होगी और आप हमेशा उन्नति के पथ पर अग्रसर रहेंगे और जिन्दगी में सदैव अग्रणी रहेंगे। आपका लक्ष्य सदैव निर्धारित तथा साफ होगा।

बेला, जूही एवं चमेली

बेला

ये फूल किसी प्रेमी को प्रेमिका या प्रेमिका को प्रेमी भेजता है या भेंट देता है तो इसका मतलब है कि मेरे रग-रग में आप के प्यार की खुशबू घुल चुकी है। मैं आप के प्यार में पागल हो चुका हूं आप का प्यार पाकर मेरा जीवन सुरभित हो चुका है।

मुगल काल में मुगलों की लड़कियाँ तथा स्त्रियाँ अपने महबूबों से पर्दा प्रथा का पालन करते हुए फूलों की भाषा में बातचीत करती थीं। कालान्तर में 'फूलों की भाषा' के तरफ किसी का ध्यान गया ही नहीं, जिसके कारण इस बिना लिपि वाली भाषा का पतन हो गया परन्तु सूचना प्रोद्योगिकी के आधुनिक युग में पुनः 'फूलों की भाषा' दिनों-दिन विकसित हो रही है।

01/2025-26

डॉ. प्रफुल्ल कश्यप, डॉ. बी.पी.एस. कंवर
डॉ. एस. अल. अली, डॉ. एच. के. रात्रे
डॉ. जसमीत सिंह, डॉ. छत्रपाल सिंह पुहुप
पुश चिकित्सा एवं पशुपालन महाविद्यालय, अंजोरा, दुर्ग

पशुओं में गलघोंटू रोग की लक्षण एवं उपचार

परिचय

गलघोंटू (Hemorrhagic Septicemia) रोग मुख्य रूप से गाय तथा भैंस को लगता है। इस रोग को साधारण भाषा में गलघोंटू के अतिरिक्त 'घूरखा', 'घोंटुआ', 'अषढ़िया', 'डकहा' आदि नामों से भी जाना जाता है। इस रोग से पशु अकाल मृत्यु का शिकार हो जाता है। यह मानसून के समय व्यापक रूप से फैलता है। अति तीव्र गति से फैलने वाला यह जीवाणु जनित रोग, छूत वाला भी है। यह Pasteurella multocida नामक जीवाणु (बैक्टीरिया) के कारण होता है। इस रोग के जीवाणु आद्र तथा नम अवस्था में दीर्घकाल तक जिन्दा रह सकते है। यह जीवाणु सांस नली में तंत्र के ऊपरी भाग में मौजूद होता है। मौसम परिवर्तन के कारण पशु मुख खुर (गलघोंटू) रोग की चपेट में आ जाता है। गलाघोंटू बहुत खतरनाक रोग है। लक्षण के साथ ही इलाज न शुरू होने पर एक-दो दिन में पशु मर जाता है।

इसमें मौत की दर 80 फीसदी से अधिक है। शुरुआत तेज बुखार (105-107 डिग्री) से होती है। पीड़ित पशु के मुंह से ढेर सारा लार निकलता है। गर्दन में सूजन के कारण सांस लेने के दौरान घर्र-घर्र की आवाज आती है और अंततः 12-24 घंटे में मौत हो जाती है। रोग से मरे पशु को गढ्डे में दफनाएं। खुले में फेंकने से संक्रमित बैक्टीरिया पानी के साथ फैलकर रोग के प्रकोप का दायरा बढ़ा देता है।

रोग के लक्षण

इस रोग में पशु को अचानक तेज बुखार हो जाता है एवं पशु कांपने लगता है। रोगी पशु सुस्त हो जाता है तथा खाना-पीना कम कर देता है।दूध उत्पादन में कमी आजाती है। पशु की आंखें लाल हो जाती हैं। पशु को पीडा होती है और श्वास लेने में कठिनाई होती है। श्वास में घर्रघर्र की आवाज आती है। पशु के पेट में दर्द होता है, वह जमीन पर गिर जाता है और उसके मुंह से लार भी गिरने लगती है।भैंस गायों कि तुलना में अधिक संवेदनशील होती है। पशु खासतौर पर भैंस, लक्षण आने के बाद शायद ही बच पाते है। बिमारी विशेष क्षेत्र में अधिकांश मृत्यु अधिक आयु वाले बछड़ों व कम उम्र वाले वयस्कों में होती है।

रोकथाम

अपने पशुओं को प्रति वर्ष वर्षा ऋतु से पूर्व इस रोग का टीका पशुओं को अवश्य लगवा लेना चाहिए । विशेष क्षेत्र में 6 माह या उससे अधिक आयु के सभी पशुओं को बरसात शुरू होने के पहले ही टिका लगवा लेना चाहिए। बरसात के मौसम में ज्यादा पशुओं को एक जगह एकत्रित होने से बचायें। बीमार पशु को अन्य स्वस्थ पशुओं से अलग रखना चाहिए तथा उनके चारे- पानी की अलग व्यवस्था करनी चाहिए । जिस स्थान पर पशु मरा हो उसे कीटाणुनाशक दवाइयों, फिनाइल या चूने के घोल से धोना चाहिये।

पशु आवास को स्वच्छ रखें तथा रोग की संभावना होने पर तुरन्त पशु चिकित्सक से सम्पर्क कर सलाह लेवें।

उपचार

जब बुखार कि शुरुवात होती है तभी पशु का इलाज करने पर शायद जान बच जाए अन्यथा इस रोग में उपचार प्रभावी नहीं है। लक्षण विकसित होने के बाद कुछ ही पशु कि जान बच पाती है। संक्रमण कि शुरुवाती अवस्था में उपचार ना होने पर मृत्यु दर 100त्र तक पहुँच जाती है।

भैंस को गर्दन के मांस में गहराई में टीका लगाया जाए तथा हर छह महीने के बाद टीकाकरण से पहले उसके ऊपर लिखी सूचना जरूर पढ़ें। टीके को दो से आठ डिग्री सेल्सियस के तापमान पर रखें। एंटी बायोटिक जैसे सल्फाडीमीडीन ऑक्सीटेट्रासाइक्लीन और क्लोरोम फॉनीकोल एंटी बायोटिक का इस्तेमाल इस रोग से बचाव के साधन हैं।

विवेक राजौरिया !! श्री !!
(सालवई वाले)
Mob.: 9827254232
8109320262
9926297033

श्री सिद्धगुरु खाद बीज भण्डार
खाद, बीज एवं कीटनाशक दवाओं के थोक व खेरीज विक्रेता
हमारे यहाँ धान, गेहूँ, सोयावीन, सरसों, तिली एवं सब्जियों के बीज, खाद एवं उच्चकोटि की कीटनाशक दवाईयाँ उचित मूल्य पर मिलती हैं।
गौतम पेट्रोल पम्प के सामने, भितरवार रोड, डबरा
12/2025-26

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

छ.ग. के 25 वर्ष और कृषि विज्ञान का विकास

डॉ. चंद्रशेखर खरे वरिष्ठ कृषि वैज्ञानिक (प्रक्षेत्र प्रबंधक) सस्य विज्ञान, कृषि विज्ञान केन्द्र-जांजगीर-चांपा

जितेन्द्र कुमार खरे प्रक्षेत्र विस्तार अधिकारी, कृ.महा. एवं अनु. केंन्द्र-जांजगीर-चांपा

श्री धर्मेन्द्र कुमार खरे निदेशक एवं प्रमुख, संयुक्त जन जागरूकता अभियान (छ.ग.)

छत्तीसगढ़ में कृषि विज्ञान के विकास में कृषि विज्ञान केन्द्रों/कृषि महाविद्यालयों के कृषि वैज्ञानिकों का अतुलनीय योगदान अद्वितीय है, 25 हजार 500 से अधिक धान के किस्मों को संरक्षण संग्रहित समाहित रखे धान का कटोरा के रूप में विश्व विख्यात छत्तीसगढ़ राज्य अपने 25 वर्षो के गौरवशाली रजत जयंती मना रहा है। धान का कटोरा बनाने में छ.ग. के कृषि विज्ञान केन्द्रों के कृषि वैज्ञानिकों ने अपनी कड़ी मेहनत लगन का लोहा मनवाया है, 1 नवंबर 2000 छ.ग. के उद्य प्रारंभ में छ.ग. में केवल मात्र एक इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय रायपुर था जिसकी स्थापना 20 जनवरी 1987 को हुआ था और एक ही कृषि महाविद्यालय था। छ.ग. राज्य को तीन कृषि जलवायु क्षेत्रों में विभाजित किया गया है जिनमें 51 प्रतिशत भौगोलिक क्षेत्र छ.ग. का मैदान, 28 प्रतिशत उत्तरी पहाड़ी क्षेत्र और 21 प्रतिशत बस्तर पठार के अंतर्गत आता है। वार्षिक वर्षा 950 से 1410 मि.मि. है

प्रदेश के कृषि वैज्ञानिकों नें प्रदेश के कृषि यात्रा तकनीकी नवाचार किसानों की प्रगति और सतत् खेती की दिशा में किए गए सफल प्रयासों से ही धान का कटोरा कहे जाने वाला प्रदेश स्थापना के बाद से कृषि क्षेत्र में उल्लेखनीय उत्तरोद्धर प्रगति की है। राज्य सरकार की ओर से पारंपरिक खेती के साथ साथ आधुनिक खेती और नवाचारों को अपनाते हुए कृषि उत्पादन एव किसानों के आय में वृद्धि दर्ज की है। राज्य के प्रमुख कृषि कार्यक्रमों योजनाओं और उपलब्धियों ने नई कीर्तिमान स्थापित की है, केन्द्र सरकार एवं राज्य सरकार की ओर से किसानों को रसायन मुक्त और जैविक खेती की ओर प्रेरित किया है। परंपरागत कृषि विकास योजना और राष्ट्रीय जैविक खेती मिशन ने लक्ष्य प्राप्ति की ओर अग्रसर होते हुए वृहद प्रसार किया है, प्रदेश ने बीते 25 वर्षो में कृषिक्षेत्र में आत्मनिर्भरता के क्षेत्र में महत्वपूर्ण कदम बढ़ाया है, जहां पहले कृषि पर निर्भर किसान आर्थिक रूप से कमजोर थे, वहीं अब कृषि वैज्ञानिकों द्वारा सुझाई वैज्ञानिक तकनीकीयों और ज्ञान से और नवीन योजनाओं से उनकी आय एवं उत्पादकता और जीवन स्तर में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है, कृषि वैज्ञानिकों ने ÷एवरी ड्राप मोर क्रॉप÷ ÷प्रत्येक बूंद से अधिक फसल उत्पादकता÷ के वैज्ञानिक सिद्धांतों को सच कर दिखाया है। कृषि वैज्ञानिकों ने जैविक खाद की उपयोगिता एवं महत्ता को सदैव प्रोत्साहित किया है परिणाम स्वरूप उर्वरक के कमीं के समाधान के लिए नैनो यूरिया और नैनो डीएपी को विकसीत कर फसल उत्पादन को आसमान की बुलंदियों तक पहूंचा दिया है। छ.ग. के कृषि विज्ञान विकास में वरिष्ठ कृषि वैज्ञानिक डॉ. आर.एच. रिछारिया जी के योगदान को नहीं भुलाया जा सकता जिन्होंने धान के किस्मों का संरक्षण संग्रहण एवं विकास के कार्यो को आगे बढ़ाया है। भारत रत्न पद्मश्री डॉ. एम.एस. स्वामीनाथन जिन्होंने हरित क्रांति से छ.ग. को उन्नत किस्में देकर समृद्ध बनाया है। प्रधानमंत्री सूक्ष्म सिंचाई योजना, एककीकृत जलग्रहण प्रबंधन कार्यक्रम और जल संरक्षण के उपायों से सिंचाई की स्थिति में खांसा सुधार किया है जिसका उदाहरण है बालोद जिला को 2 करोड़ का राष्ट्रीय पुरस्कार प्राप्त होना।

हरियर छत्तीसगढ़ ने सिंचाई क्षमताओं के उन्नयन के साथ आधुनिक फसल सिंचाई प्रणाली जैसे टपक सिंचाई, फव्वौरा और अत्याधुनिक आर्टिफिसियल इंटेलीजेंस से लैस तकनिकों ने किसानों की और किसानी के कार्यो को सेटेलाइट से जोड़ दिया है आधुनिक साफ्टवेयरों के विकास और मोबाइल प्रणोली से पंप बंद चालू करना, किसानों को बेहद रास आ रहा है। फिल्म ÷नया दौर÷ के ÷गीत मेरे देश की धरती सोना उगले उगले हीरे मोती÷ के सार्थकता को दर्शाते हुए जहां वर्ष 2000 में कुल फसली क्षेत्र 5,408 हजार हेक्टेयर रही वहीं वर्तमान 2025 में 6727 हजार हेक्ट्यर पहूंच गया है। प्रदेश में विपूल धान उत्पादन बढ़ने के साथ साथ लगातार बढ़ोत्तरी दर्ज की जा रही है। केन्द्र एवं राज्य सरकार ने ÷जल विजन 2047÷ का कृषि वैज्ञानिकों की मदद से रोड मैप तैयार किया है। राज्य गठन के समय छ.ग. की सिंचाई क्षमता महज 13.28 लाख हे. था जो कुल कृषि योग्य भूमि का लगभग 23 प्रतिशत हिस्सा थी। वर्ष 2025 में यह क्षमता बढ़कर 21.40 लाख हेक्टेयर हो गई है मतलब छ.ग. राज्य ने 8 लाख हे. अतिरिक्त सिंचाई क्षमता हासिल की है। प्रधानमंत्री प्रणाम कार्यक्रम के तहत किसानों को जैविक खाद के प्रयोगों को प्रेरित करने का काम हमारे कृषि विज्ञान केंन्द्रों के कृषि वैज्ञानिक कर रहे हैं। डॉ. चंन्द्रशेखर खरे ने वर्ष 2012 से 2014 के दौरा कृषि विज्ञान केन्द्र दंतेवाड़ा में निकरा परियोजना का संचालन करते हुए क्रेडा हैदराबाद के सहयोग से दक्षिण बस्तर जिला को जैविक खेती जिला बनाने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है जिसके अंतर्गत 2013 में भारत का सर्वश्रेष्ठ कृषि विज्ञान केन्द्र का खिताब दंतेवाड़ा ने हासिल किया तथा महामहिम राष्ट्रपति महोद्य श्री रामनाथ कोविंद जी ने ग्राम हीरानार का भ्रमण कर किसानों को जैविक खेती में आगे आने का संदेश दिया। आइए छ.ग. के 25 वर्षों के सतत् कृषि विज्ञान के विकास को एक तुलनात्मक अध्ययन आंकड़ों के जरिए समझते हैं-

क.	वर्ष	कुल क्षेत्राच्छादन हजार हे.में	खरीफ फसलों का क्षेत्र हजार हे.में	धान का क्षेत्राच्छादन हजार हे.में	दलहन क्षेत्र हजार हे.में	खरीफ उत्पादन ह.मीटन	रबी उत्पादन ह.मीटन	औसत उत्पादकता ख. ह.मीटन	औसत उत्पादकता रबी ह.मीटन
1	2000	5,408	4636	3795	238	3929	483	867कि.ग्रा./हे.	625
2	2025	6727	4865	3981	260	12927	2775	2657	1490
क.	वर्ष	सिंचाई क्षेत्र हजार हे.	निरा सिंचित हजार हे.	फसल सघनता प्रतिशत में	किसान परिवार	सीमांत किसान लाख	लघु किसान लाख	दीर्घ किसान लाख	प्रयोगशालाएं
1	2000	1042	984	112	32.55	13.33	4.12	2.81	02
2	2025	1892	1486	138	40.11	24.34	8.80	6.97	44

क.	खरीफ वर्ष	धान खरीदी	पंजीकृत कृषक	रकबा	धान विक्रेता कृषक
1	2018	56.88	1577332	2446546	1206264
2	2019	80.38	1696763	2560557	1571412
3	2020	83.94	1955541	2688101	1838592
4	2021	92.00	2129764	2759385	2053600
5	2022	98.00	2406560	3010880	2177419
6	2023	107.53	2641737	3406000	2342050
7	2024	144.92	2686000	3322000	2472000
8	2025	149.25	2778000	3390000	2549000

जय जवान जय किसान
जय विज्ञान

छत्तीसगढ़ प्रांत के प्रथम मुख्यमंत्री श्री अजीत प्रमोद कुमार जोगी जी ने धान खरीदी की शुरूवात 2003-04 में की थी, उस समय मात्र 27.05 लाख मैट्रिक टन धान की खरीदी हुई थी जो राज्य को धान का कटोरा कहलाने की पहली सीढ़ी रही। वर्तमान में 02 दशक बाद 2024-25 में राज्य ने रिकार्ड तोड़ 149.25 लाख मैट्रिक टन धान खरीदी कर अभूतपूर्व उपलब्धि हासिल की है। वहीं एक मात्र इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय से विलग होकर कामधेनू विश्वविद्यालय एवं महात्मा गांधी उद्यानिकी विश्वविद्यालय दुर्ग स्थापित हो चूकी है। वर्तमान में इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय रायपुर के अधीन 27 कृषि विज्ञान केन्द्र और 9 कृषि अनुसंधान केंन्द्र, 56 कृषि प्रक्षेत्र तथा 28 शासकीय कृषि महाविद्यालय, 11 निजी महाविद्यालय और 43 अखील भारतीय स्तर की कृषि अनुसंधान परियोजनाएं क्रियान्वित है। इंदिरा गांधी कृषि वि.वि. को संपूर्ण भारत में 28 वीं रैंक प्राप्त है, तथा कृषि विज्ञान केन्द्र एवं आत्मा परियोजना के माध्यम से किसानों को निरंतर कृषि वैज्ञानिक कृषक प्रशिक्षण एवं परामर्श, मिट्टी परीक्षण, फसल बीमा योजना, प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना जैसी योजनाओं ने किसानों को विपुल उत्पादन बढ़ाने में मील का पत्थर साबित हुआ है।

महिला स्वसहायता समूहों को भी कृषि विज्ञान केंन्द्रों के कृषि वैज्ञानिकों ने आत्मनिर्भर बनाने हेतु इन समूहों को जैविक खाद निर्माण सब्जी की खेती, बीज प्रसंस्करण, मशरूम उत्पादन, मूर्गीपालन, बत्तख पालन, मछली पालन, मधुमक्खी पालन, वर्ष भर चारा उत्पादन का प्रशिक्षण लगातार वर्ष भर जारी रहता है, खरीफ एवं रबी में किसान मेला, एग्री कार्निवाल, मध्य एशिया की सबसे बडी जाज्वल्यदेव एग्रीटेक किसान मेला जांजगीर के द्वारा कृषि वैज्ञानिकों को किसान सदैव अपने करीब पाते हैं और कीट रोग एवं खाद उर्वरक प्रबंधन की निशुल्क जानकारी प्राप्त करते हैं जिससे किसानों को सही समय पर कीटों एवं रोगों तथा खाद पानी के प्रबंधकीय ज्ञान में वृद्धि के साथ कुशल प्रबंधन के गुर सिखाए जा रहे है। इससे ग्रामीण अर्थव्यवस्था को गति मिली है और महिलाओं को आर्थिक स्वतंत्रता मिल रही है। युवाओं को कृषि के क्षेत्र में नवाचार और कृषि उद्यम को बढ़ावा दिया जा रहा है कृषि आधारित स्टार्टअप, टपक सिंचाई, फसल प्रसंस्करण और विपणन आनलाईन बाजारों ने कृषि को आधुनीकीकरण से सुसज्जित किया है। कृषि विज्ञान केंन्द्रों के कृषि वैज्ञानिकों प्रक्षेत्र प्रबंधकों द्वारा राज्य के किसानों को उच्च गुणवत्ता के धान्य, दलहन, तिलहन के बीजों को कृषि विज्ञान केंन्द्रों के प्रक्षेत्रों में बीज उत्पादन कार्यक्रम के जरिए उत्पादित कर बीज प्रमाणीकरण संस्था से प्रयोगशाला परीक्षणों के उपरातं विकसित प्रजनक आधार एवं प्रमाणित बीज भी न्यूनतम दामों में कृषकों को उपलब्ध कराया जा रहा है।

✍ **रागिनी सिंह** (पीएचडी रिसर्च स्कॉलर) विस्तार शिक्षा एवं संचार प्रबंधन विभाग, चंद्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प्र.)

जलवायु परिवर्तन अनुकूलन

(Climate Change Adaptation)

सारांश

यह लेख जलवायु परिवर्तन के बढ़ते प्रभावों और उनसे निपटने के लिए आवश्यक अनुकूलन रणनीतियों पर केंद्रित है। चरम मौसम, सूखा, बाढ़, समुद्र-स्तर वृद्धि और कृषि उत्पादन में गिरावट जैसे प्रभाव समाज, पर्यावरण और अर्थव्यवस्था को प्रभावित कर रहे हैं। इनसे निपटने के लिए तकनीकी नवाचार, पारिस्थितिक सुधार, सामाजिक सहभागिता और नीति-निर्माण जैसे उपाय आवश्यक हैं। लेख का उद्देश्य सतत और समावेशी विकास के लिए जलवायु अनुकूलन की आवश्यकता को रेखांकित करना है।

परिचय

21वीं सदी में मानव सभ्यता के सामने सबसे बड़ी चुनौतियों में से एक है जलवायु परिवर्तन। वैश्विक तापमान में वृद्धि, मौसम की अस्थिरता, सूखा, बाढ़, समुद्र-स्तर में बढ़ोतरी और प्राकृतिक आपदाओं की आवृत्ति में वृद्धि–ये सभी इस परिवर्तन के प्रत्यक्ष प्रमाण हैं। जलवायु परिवर्तन का प्रभाव केवल पर्यावरण तक सीमित नहीं है, बल्कि यह कृषि, जल संसाधन, स्वास्थ्य, ऊर्जा और मानव जीवन के हर पहलू को प्रभावित कर रहा है। इन प्रभावों से बचाव के दो मुख्य उपाय हैं–शमन (Mitigation), जो कारणों को कम करने पर केंद्रित होता है, और अनुकूलन (Adaptation), जो परिणामों से निपटने की तैयारी करता है। यह केवल पर्यावरण नहीं, बल्कि कृषि, जल, स्वास्थ्य और अर्थव्यवस्था को भी प्रभावित कर रहा है। इससे निपटने के दो उपाय हैं–

* **शमन (Mitigation):** कारणों को कम करना

* **अनुकूलन (Adaptation):** परिणामों से निपटने की तैयारी

अनुकूलन का अर्थ और उद्देश्य

अनुकूलन का मतलब है जलवायु परिवर्तन के प्रभावों के अनुसार जीवनशैली, तकनीक और नीतियों में बदलाव कर नुकसान कम करना और अवसरों का लाभ उठाना।

मुख्य उद्देश्य हैं–

* जलवायु जोखिम कम करना * समुदायों को लचीला बनाना * खाद्य, जल व ऊर्जा सुरक्षा सुनिश्चित करना * पारिस्थितिकी तंत्र की रक्षा करना

मुख्य प्रभाव

कृषि: उत्पादन घट रहा, मौसम बदल रहे हैं
जल संकट: वर्षा असमान, सूखा बढ़ रहा है
स्वास्थ्य: गर्मी, जलजनित रोगों में वृद्धि
पारिस्थितिकी: जैव विविधता में कमी
आर्थिक हानि: आपदाओं से बुनियादी ढांचा प्रभावित

अनुकूलन के प्रकार

1. **तकनीकी:** वर्षा जल संचयन, सौर ऊर्जा, आपदा चेतावनी प्रणाली
2. **पारिस्थितिक:** वनों का संरक्षण, मैंग्रोव वृक्षारोपण
3. **सामाजिक:** पर्यावरण शिक्षा, स्थानीय ज्ञान का उपयोग
4. **नीतिगत:** कृषि व जल नीति सुधार, शहरी लचीलापन

भारत की पहलें

* राष्ट्रीय जलवायु परिवर्तन कार्य योजना (NAPCC) – 8 मिशनों के साथ * राज्य स्तरीय योजनाएं (SAPCCs)

* NICRA: कृषि को जलवायु-अनुकूल बनाना

8 आपदा जोखिम न्यूनीकरण कार्यक्रम (DRR)

समुदाय की भूमिका

सरकारी प्रयासों के साथ स्थानीय सहभागिता जरूरी है।

* किसान सूखा-रोधी बीज अपनाएं
* शहरी नागरिक जल संरक्षण करें
* स्कूलों में पर्यावरण शिक्षा बढ़ाई जाए
* महिलाएं और युवा नेतृत्व करें

निष्कर्ष

जलवायु परिवर्तन वर्तमान की सच्चाई है। इससे निपटने के लिए अनुकूलन ही वह रास्ता है जो समाज को अधिक लचीला और सुरक्षित बना सकता है। सरकार, समुदाय और नागरिक सभी को मिलकर सतत भविष्य के लिए प्रयास करना होगा।

इंजी. विशाल कुमार सहायक प्राध्यापक, डेयरी प्रौद्योगिकी विभाग, कटाई उपरांत प्रौद्योगिकी एवं खाद्य प्रसंस्करण महाविद्यालय, सरदार वल्लभभाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिकी वि.वि. मेरठ (उ.प्र.)

इंजी. अनु कुमारी सहायक प्राध्यापक, डेयरी इंजीनियरिंग विभाग, कटाई उपरांत प्रौद्योगिकी एवं खाद्य प्रसंस्करण महाविद्यालय, सरदार वल्लभभाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, मेरठ,

संदेश : बंगाल की प्रसिद्ध पारंपरिक मिठाई

परिचय

भारत अपनी विविधता और सांस्कृतिक समृद्धि के लिए जाना जाता है। यहाँ के हर क्षेत्र की अपनी-अपनी पारंपरिक मिठाइयाँ हैं, जो स्थानीय स्वाद, परंपरा और इतिहास से जुड़ी हुई हैं। बंगाल की ऐसी ही एक प्रसिद्ध पारंपरिक मिठाई है "संदेश", जो अपनी कोमल बनावट, सौम्य मिठास और उत्कृष्ट स्वाद के लिए प्रसिद्ध है। संदेश केवल एक मिठाई नहीं, बल्कि बंगाली संस्कृति और कला का प्रतीक माना जाता है।

इतिहास और उत्पत्ति

संदेश की उत्पत्ति बंगाल में हुई मानी जाती है। ऐतिहासिक स्रोतों के अनुसार, इसका प्रारंभिक रूप 16वीं शताब्दी में अस्तित्व में आया। प्रारंभ में संदेश गुड़ या ताड़ के रस से बनाया जाता था, क्योंकि उस समय परिष्कृत चीनी का प्रचलन बहुत कम था। समय के साथ जब चीनी सुलभ हुई, तो संदेश का स्वाद और भी परिष्कृत हो गया।

नवद्वीप, शांतिपुर और कोलकाता जैसे क्षेत्रों में संदेश बनाने की विशेष परंपरा विकसित हुई। 19वीं शताब्दी में कोलकाता के प्रसिद्ध मिठाईकार भोलानाथ दास और नाथमुल मोहानलाल जैसे कारीगरों ने संदेश के कई आधुनिक रूप तैयार किए।

निर्माण प्रक्रिया

संदेश बनाने की मूल सामग्री छेना है, जो दूध को फाड़कर बनाया जाता है। इसे हल्का दबाकर अतिरिक्त पानी निकाल दिया जाता है ताकि यह नर्म और लचीला रहे। इसके बाद इसमें स्वादानुसार चीनी या गुड़ मिलाकर अच्छी तरह मथा जाता है। **इस मिश्रण को अलग-अलग आकारों में ढाला जाता है** — कुछ को सांचे में डालकर कलात्मक रूप दिया जाता है, तो कुछ को हाथ से आकार दिया जाता है। पारंपरिक रूप से इसे अधिक पकाया नहीं जाता, ताकि इसकी नमी और कोमलता बनी रहे।

संदेश के प्रकार

संदेश के अनेक प्रकार हैं, जो स्वाद, बनावट और रूप में भिन्न होते हैं। प्रमुख प्रकार निम्नलिखित हैं —

1.नरम संदेश : यह सबसे आम रूप है, जो कोमल और मुंह में घुल जाने वाला होता है।

2.कड़ा संदेश : इसे थोड़ी देर तक पकाया जाता है जिससे यह सूखा और टिकाऊ बन जाता है।

3.भुना संदेश : यह अपेक्षाकृत आधुनिक रूप है, जिसमें छेना मिश्रण को हल्का बेक किया जाता है।

4.केसर या इलायची संदेश : इसमें स्वाद और सुगंध के लिए केसर, इलायची या गुलाब जल मिलाया जाता है।

5.गुड़ वाला संदेश : यह सर्दियों में ताड़ के रस से बने गुड़ से बनाया जाता है और अत्यंत लोकप्रिय है।

पोषण मूल्य और स्वास्थ्य पहलू

संदेश दूध से बनने के कारण प्रोटीन, कैल्शियम और फॉस्फोरस का अच्छा स्रोत है। यह अन्य तली हुई मिठाइयों की तुलना में हल्का और पचने में आसान होता है। हालांकि, इसमें प्रयुक्त चीनी की मात्रा को नियंत्रित रखकर इसे और भी स्वास्थ्यवर्धक बनाया जा सकता है। आजकल बाजार में लो-शुगर या स्टेविया-युक्त संदेश भी उपलब्ध हैं, जो स्वास्थ्य-सचेत उपभोक्ताओं के बीच लोकप्रिय हो रहे हैं।

सांस्कृतिक महत्व

बंगाल में संदेश केवल मिठाई नहीं बल्कि भावनाओं की अभिव्यक्ति का माध्यम है। किसी भी शुभ अवसर – जैसे विवाह, जन्म, त्यौहार या अतिथि-सत्कार – में संदेश का वितरण शुभ माना जाता है। दुर्गा पूजा और नये वर्ष पर संदेश अर्पित करने की परंपरा विशेष रूप से प्रचलित है।

आधुनिक रूप और विपणन

आज संदेश पारंपरिक मिठाई की सीमाओं से आगे बढ़ चुका है। कोलकाता, दिल्ली, मुंबई और अन्य महानगरों में इसके आधुनिक स्वरूप जैसे चॉकलेट संदेश, फ्रूट-फ्लेवर संदेश, और मालई संदेश अत्यधिक लोकप्रिय हैं। कई प्रसिद्ध ब्रांड्स ने इसे पैकेज्ड रूप में देश और विदेश तक पहुँचाया है, जिससे यह भारतीय मिठाई उद्योग का एक महत्वपूर्ण उत्पाद बन गया है।

निष्कर्ष

संदेश बंगाल की सांस्कृतिक पहचान का अभिन्न अंग है। इसकी मिठास केवल स्वाद तक सीमित नहीं, बल्कि यह बंगाली भावनाओं, कला और परंपरा की मीठी झलक भी प्रस्तुत करता है। दूध, शुद्धता और सादगी से तैयार यह मिठाई भारतीय मिठाई परंपरा में अपनी विशिष्ट पहचान बनाए हुए है।

कुंज एजेंसीज

अपने भाई चप्पा सेठ की दुकान

हमारे यहां सभी प्रकार के खाद
बीज एवं कीटनाशक दवाईयां
उचित रेट पर मिलती है

प्रो. कार्तिक गुप्ता 9589545404
प्रो. हार्दिक गुप्ता 9644689094

भितरवार रोड, डबरा, जिला-ग्वालियर (म.प्र.)

10/2025-26

महिलाओं के लिए स्वास्थ्यवर्धक सुपरफूड है 'सहजन'

डॉ अंजलि वर्मा गृह विज्ञान (H.Sc.), विषय वस्तु विशेषज्ञ (एसएमएस) कृषि विज्ञान केंद्र (KVK), बस्ती
आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)

सहजन एक ऐसा पौधा है जो कई तरह के पोषक तत्वों को अकेले अपने में समेटे हुए है। सहजन की पत्तियों से लेकर फली में सभी तरह की अनाज, फल और सब्जियों से ज्यादा पोषक तत्व पाया जाता है। अगर इसका नियमित सेवन किया जा, तो बीमारियाँ हमें छू तक नहीं पाएंगी। सहजन को माताओं का सबसे अच्छा दोस्त (Mother's best friend) माना जाता है।

सहजन के पौधे (फूल, फल, पत्ती) का पोषण मान और उपयोगिता: सहजन पौधा दुनियांभर में कुपोषण दूर करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इसका कारण इसकी पत्तियों से लेकर फली तक में पोषक तत्वों की प्रचुर मात्रा को जाता है। सहजन में 92 तरह के मल्टी विटामिन्स, 46 तरह के एंटीऑक्सीडेंट, 36 तरह के दर्द निवारक और 18 तरह के एमिनो एसिड मिलते हैं। तालिका में प्रदर्शित पोषक तत्वों की यह मात्रा प्रति 100 ग्राम फली या पत्तियों के अनुसार निर्धारित की गई है।

तत्व का नाम	फली	पत्ती	पत्ती के पाउडर में
खाया जाने वाला भाग प्रतिशत में	83	75	100
जल (प्रतिशत में)	86.9	75	7.5
ऊर्जा (किलो कैलोरी में)	26	92	205
प्रोटीन (ग्राम में)	2.5	6.7	27.1
वसा (ग्राम में)	0.1	1.7	2.3
कार्बोहाइड्रेट (ग्राम में)	3.7	13.4	38.2
रेशा (ग्राम में)	4.8	0.9	19.2
खनिज तत्व (ग्राम में)	2.0	2.3	--
कैल्सियम (मिलीग्राम में)	30	440	2003
मैग्नीषियम	24	24	368
फास्फोरस (मिलीग्राम में)	110	70	204
पोटैशियम (मिलीग्राम में)	259	259	1324
कॉपर (मिलीग्राम में)	3.1	1.1	0.57
आयरन (मिलीग्राम में)	5.3	7.0	28.2
सल्फर (मिलीग्राम में)	137	137	870
बीटा कैरोटीन - विटामिन ए (मिलीग्राम में)	0.11	6.8	16.3
थाइमिन -विटामिन बी-1 (मिलीग्राम में)	0.05	0.21	2.64
राइबोफ्लेविन विटामिन बी 2 (मिलीग्राम में)	0.07	0.05	20.5
नियासिन (मिलीग्राम में)	0.2	0.8	--
विटामिन सी (मिलीग्राम में)	120	220	17.3
विटामिन ई (मिलीग्राम में)	---	--	113

सहजन के फूल, फल, पत्ती सभी के पोषण मान को देखते हुए आजकल लोग इसका सेवन पाउडर के रूप में भी करने लगे हैं तथा पाउडर के रूप में अब ये बाजारों में भी उपलब्ध है। सहजन को एक हेल्थ सप्लीमेंट के रूप में नयी लोकप्रियता मिल रही है। जिसकी वजह से इसे कुपोषण को दूर करने में सबसे मुफीद माना जाता है। अगर हम प्रति दिन इसकी पत्तियों का चूर्ण प्रयोग करें तो बीमारियाँ होने की संभावना कम हो जाती है। सहजन की पत्तियों को ताजा और सुखा कर दोनों तरह से इस्तेमाल किया जा सकता है. सूखी हुई पत्तियाँ पाउडर और इसकी छाल, पत्ती, बीज, जड़ आदि से तमाम तरह की दवा, पाउडर, कैप्सूल, तेल आदि बाजार में भी उपलब्ध हैं। सहजन को धरेलू स्तर पर इस्तेमाल करने के कुछ आसान विधियाँ निम्नवत हैं-

सहजन की ताजी पत्तियां: अगर आपको सहजन की ताजी पत्तियां मिल सकती हैं तो उन्हें अपने भोजन में शामिल करें। इन्हें सलाद, करी या गार्निश के लिए भी प्रयोग कर सकते हैं।

सहजन/मोरिंगा टी: मोरिंगा की चाय इसके सेवन का सबसे आसान तरीका है। इसे बनाने के लिए मोरिंगा की कुछ पत्तियों को गर्म पानी में कुछ मिनट के लिए भिगो दें और छान लें। स्वाद बढ़ाने के लिए आप इसमें शहद या नींबू के रस की कुछ बूंदें भी मिला सकते हैं।

सहजन/मोरिंगा पाउडर: स्मूदी, जूस, शेक, सलाद या सूप में सहजन के पत्तों का पाउडर मिलाकर भी इसका सेवन कर सकते हैं। 1ध्2-1 छोटा चम्मच सहजन का पाउडर एक गिलास पानी, चपाती, दाल, सब्जी आदि में मिलाकर रोज खाने के साथ खाया जा सकता है । शुरुआत में इसकी कम मात्रा लेनी चाहिए और धीरे-धीरे फिर बढ़ानी चाहिए ।

सहजन के फल: सहजन के फल का जहाँ सब्जी के रूप में उपयोग होता है वहीं सहजन के फलियों का सब्जी और सूप बहुत ही स्वादिष्ट होता है।

सहजन के सेवन से महिलाओं को होने वाले स्वास्थ्यवर्धक लाभ

* सहजन पाउडर विटामिन ई, बी, ए और जिंक से भरपूर होता है। महिलाओं द्वारा इसका सेवन करने पर उनके शरीर में आयरन और हीमोग्लोबिन का लेवल बढ़ता है जिससे न केवल स्वास्थ्य में सुधार आता है, बल्कि ये सभी पोषक तत्व अच्छी त्वचा और बालों के स्वास्थ्य को बनाए रखने में मदद करते हैं। * रेशेयुक्त सहजन वजन नियंत्रित करने में मदद करता है। यह प्राकृतिक मूत्रवर्धक है और जो शरीर से विषाक्त पदार्थों को निकालने में मदद करता है। * सहजन पाउडर का सेवन मानसिक स्वास्थ्य को स्वस्थ और तनावरहित रखने में मदद करता है क्योंकि ये मैग्नीशियम, विटामिन ए, बी, सी, ई, पोटेशियम से भरपूर होता है। * गर्भवती महिलाएं और स्तनपान कराने वाली माताएं सहजन का सेवन सुरक्षित रूप से कर सकती हैं। इसमें फोलिक एसिड होता है जो अजन्मे बच्चे में जन्मजात विकलांगता को रोकता है और माँ और बच्चे के अच्छे स्वास्थ्य को बढ़ावा देता है। * सहजन की पत्तियों में आयरन होता है, जो गर्भवती महिलाओं में खून की कमी (एनीमिया) होने से बचाता है। यदि महिलाएं गर्भावस्था के दौरान मॉर्निंग सिकनेस से पीड़ित हैं और ऊर्जा की कमी महसूस करती हैं, तो सहजन इससे निपटने में मदद कर सकता है। * आयुर्वेद में हमेशा से माना गया है कि इसके पत्तों में पाये जाने वाले विटामिन्स, खनिज और एमिनो एसिड्स दूध के स्रावन को बढ़ाने में मदद करते हैं। स्तनपान कराने वाली महिलाएं सहजन की पत्तियों के रस को घी के साथ मिलाकर ले सकती हैं। * मधुमेह (डायबिटीज) के रोग में सहजन की पत्तियों के पाउडर और बीजों के अर्क के सेवन से रक्त शर्करा को नियंत्रित करने में मदद मिलती है। यह इंसुलिन के उत्पादन को बढ़ाने में सहायक है जो शरीर में कोशिकाओं द्वारा शर्करा को अवशोषित करने की क्षमता को बढ़ाने में असरदार साबित हुआ है। साथ ही महिलाओं में होने वाले आजकल पॉलीसिस्टिक ओवरी डिजिज (पीसीओडी) को नियंत्रित करने में भी कारगर है। * मासिक धर्म के दौरान बहुत सारी महिलाओं को ऐंठन की समस्या से जूझना पड़ता है लेकिन इस पाउडर के सेवन से समस्या को दूर करने में मदद मिलती है। ऐसा इसलिए क्यों कि यह पोटेशियम से भरपूर होने के कारण तंत्रिका तंत्र को शांत करने में मदद करता है। * रजोनिवृत्ति के लक्षणों को दूर करने में सहजन पाउडर बहुत मददगार होता है। ऐसा इसलिए क्योंकि यह आयरन, कैल्शियम, विटामिन ए, विटामिन सी से भरपूर होता है। ये सभी अच्छे स्वास्थ्य को बनाए रखने और हॉट फ्लैशेज को कम करने में मदद करते हैं।

सहजन की जितनी माँग सब्जी के रूप में है उतनी ही औषधीय इस्तेमाल के लिए भी है। सहजन की पत्तियां, छाल और फलियाँ आदि का उपयोग गैस्ट्रिक, मलेरिया, अस्थमा, मिर्गी, यौन संचारी रोग, अल्सरए फंगल इम्फेक्शन सहित सैकड़ों रोगों की रोकथाम में किया जा सकता है।

दिनेश शिवहरे
Mob. : 98263-55396
मध्य प्रदेश का पहला
श्री दयाल बन्धु केन्द्र
(हिनौतिया वालों की दुकान)
सभी प्रकार की कीटनाशक दवाईयां, जिन्क एवं बीज आदि के थोक एवं खेरीज विक्रेता
गायत्री मंदिर के पास, जवाहर गंज, डबरा जिला ग्वालियर (म.प्र.)
E-mail : shridayalbandhu@gmail.com, dineshshivhare66yahoo.com
08/2025-26

✍ डॉ. नन्दन सिंह विषय वस्तु विशेषज्ञ (मृदा विज्ञान)
✍ डॉ. आर.आर. सिंह, डॉ. शैलेंद्र सिंह
अपर निदेशक प्रसार एवं प्रभारी अधिकारी/विषय वस्तु विशेषज्ञ (सस्य विज्ञान), कृषि विज्ञान केन्द्र बहराइच प्रथम, आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज अयोध्या (उ.प्र.)

फसल अवशेष प्रबन्धन का मृदा में प्रभाव

धान के फसल अवशेष पर डिकम्पोजर का छिड़काव

फसल अवशेष- विभिन्न प्रकार की फसलें जब पक कर के काटने योग्य हो जाती है तब हमारे किसान भाई कंबाइन की सहायता से काट लेते है उसके उपरांत जो घास, फूस, ठूंठ और पुआल या डंठल खेत में रह जाता है उसे ही फसल अवशेष कहते है ।

इस मशीनीकरण के युग में जहा किसानों के खेती बाड़ी को करना आसान कर दिया वही पर इसका दुष्प्रभाव भी देखने को मिल रहा है। लगभग दो दशक से हमारे किसान भाई फसल को कंबाइन की सहायता से काट लेते थे और उसके बचे अवशेष को उसी खेत में जला दिया करते थे। उसका परिणाम ग्लोबल वार्मिंग, प्रदूषण आदि से ले कर के मृदा की भौतिक, रसायनिक और जैविक क्रियाएं भी प्रभावित हुई, चाहे वो मृदा में रहने वाले लाभदायक जीवाणु, मृदा की उर्वरता, मृदा का तापमान या फसल की उत्पादकता आदि। धन्य है हमारे देश के कृषि वैज्ञानिक जिन्हो ने फसल अवशेष प्रबन्धन की आवश्कता को समझते हुऐ नई नई टेक्नोलॉजी विकसित की और विभिन्न प्रकार के डिकंपोजर तैयार किए जिससे किसान भाइयों के फसल अवशेष को आसानी से उसी खेत में सड़ाया जा सके और इतना ही नही हमारे कृषि वैज्ञानिक ने किसानों और पर्यावरण को ध्यान में रखते हुए माननीय प्रधानमंत्री जी के द्वारा 2022 तक किसानों की आय दोगुना हो और किसान समृद्धि बने इसके लिए भारत सरकार के अंतर्गत कृषि कल्याण मंत्रालय से विभिन्न प्रकार के फसल अवशेष सम्बन्धित यंत्र को खरीदने के लिए 50 प्रतिशत छूट तथा इसकी एजेंसी लेने के लिए 80 प्रतिशत तक छूट का प्रावधान हैं।

किसान भाइयों को अधिक से अधिक जानकारी हो यंत्रों का लाभ मिले इसके लिए हमारे कृषि वैज्ञानिक किसान कल्याण मंत्रालय द्वारा संचालित फसल अवशेष प्रबन्धन प्रोजेक्ट के द्वारा बखूबी अपनी जिम्मेदारी निभा रहे हैं।

फसल अवशेषों को हमारे किसान भाई विभिन्न प्रकार से उपयोग कर सकते हैं उसके उपरांत मृदा में जीवांश पदार्थ की मात्रा बढ़ा सकते हैं -

* हमारे किसान भाई आधुनिक कृषि यंत्र जैसे सुपरस्टार मैनेजमेंट सिस्टम स्कायर बैलर पैडी स्ट्रॉ चॉपर मल्चर कटर कम स्पाइडर हाइड्रोलिक रिवर्सिबलर रोटरी शलेशर आदि का प्रयोग कर सकते हैं।

* वर्तमान समय में इस कार्य के लिए रोटरी स्लेशर , मलचर आदि से खेत को तैयार करते समय एक बार में ही फसल अवशेष को बारीक टुकड़े में काट कर मिट्टी में मिला देना काफी आसान हो गया है ।

* यदि हमारे किसान भाई धान के बाद बचे हुऐ ठूठ खेत में नमी होने की अवस्था में सीधे जीरो ड्रिल, हैप्पी सीडर ,सुपर सीडर मशीन से बुआई कर के धान के ठूठ कुछ दिन बाद सड़ कर खाद बन जाता है ।

* बेस्ट डी कंपोजर का प्रयोग फसल की कटाई के बाद खेत में बचे हुए डंठल व अन्य अवशेष पर छिड़काव कर देने से सड़ जाता है।

* फसल अवशेष प्रबंधन हमारे किसान भाइयों के लिए फायदेमंद तो है ही लेकिन उसका प्रयोग वहा करे जहा पशुओं के लिए चारे की कमी न हो।

* किसान भाई खरीफ, रबी और जायद की फसल की कटाई करते हैं तो उसके दाने के अलावा बचा हुआ जड़ , तना और पत्ती के रूप में जो पदार्थ मृदा के अंदर और बाहर उपलब्ध हो उसमे 40 से 50 किलोग्राम यूरिया का छिड़काव कर देने से 25 से 30 दिन के अंदर सड़ जाता है जिससे मृदा में पोषक तत्व की प्राप्ति हो जाती है,जिससे उत्पादन पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है ।

फसल अवशेष प्रबन्धन का मृदा पर प्रभाव- फसल अवशेष प्रबन्धन का मृदा पर विभिन्न प्रकार का प्रभाव पड़ता हैं जो की हमारे किसान भाईयों के लिए संजीवनी का काम कर रहा है यदि हमारे किसान भाई फसल अवशेष खेत में सड़ा दे। इससे हमारे किसान भाइयों को निम्न फायदे होंगे-

1. **कार्बनिक पदार्थ की उपलब्धता में वृद्धि -** हमारे किसान अगर फसल अवशेष को उसी खेत में यंत्रों की सहायता से काट कर मिला दे सड़ने के तदुप्रांत कार्बनिक पदार्थ की मात्रा बढ़ जाती है कार्बनिक पदार्थ का मृदा में वही महत्व है जो मानव के रक्त में ऑक्सीजन का। जिस तरह यदि मानव के रक्त में यदि ऑक्सीजन न हो जीवन संभव नही ठीक उसी प्रकार से यदि मृदा में कार्बनिक पदार्थ न हों तो किसी भी फसल का उत्पादन संभव नहीं अर्थात हर एक तत्व मृदा में अपना अलग अलग महत्व है, फसल अवशेष सड़ने के तदुप्रांत कार्बनिक पदार्थ की मात्रा बढ़ जाती है। इसी लिए सतत और अधिक उत्तपादन होता रहे, इसके लिए आवाश्यक है की मृदा में कार्बानिक पदार्थ की मात्रा बना रहे। किसी भी फसल का फसल अवशेष, उस फसल का लगभग 1.29 गुना होता है और नाइट्रोजन 0.50% होने के साथ साथ और भी पोषक तत्व पाए जाते है।

2. **मृदा के भौतिक गुण में सुधार -** फसल अवशेष प्रबंधन से मृदा में भौतिक गुणों में सुधार होता है जैसे मृदा गठन, मृदा संरचना , मृदा रंधरावकाश, स्थूल घनत्व और मृदा रंग आदि पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है।

3. **मृदा में लाभदायक जीवाणु में वृद्धि -** मृदा में लाभदायक जीवडुओ (मित्र कीट)की संख्या में आशातीत वृद्धि होती है जो की खेत में पाए जाने हानिकारक जीवडुओ को खा के नष्ट कर देते हैं और मृदा के दशा और दिशा में सुधार होता है ।

4. **मृदा की उर्वरा शक्ति में वृद्धि -** कहा जाता है स्वस्थ धरा, स्वस्थ आहार, स्वस्थ पोषण फसल अवशेष प्रबन्धन करने से मृदा में पाए जाने हानिकारक अवयव में कमी और लाभदायक तत्वों में वृद्धि होती है जिसके परिणाम स्वरूप ऊपर लिखा हुआ स्लोगन चरितार्थ होता है ।

फसल अवशेष प्रबंधन से मृदा में उर्वरा शक्ति की वृद्धि होने के साथ साथ मृदा का पीएच, ईसी, नमी जल धारण क्षमता आदि फसल के लिए अनकूल हो जाता हैं। हम कह सकते हैं की इससे खेत की रासायनिक भौतिक दशा में सुधार होता है।

5. **मृदा तापमान में कमी -** फसल अवशेष प्रबंधन से मृदा से नमी का ह्रास कम होता है जिसके परिणाम स्वरूप मृदा का तापमान में कमी आती है जो कि फसलों की वृद्धि और विकास के लिए अच्छा माना जाता है।

6. **फसल उत्पादकता में वृद्धि -** फसल अवशेष प्रबन्धन में फसल उत्पादन में आशातीत वृद्धि होती है जो की हमारे किसान भाइयों के आय बढ़ाने में अहम भूमिका निभाता है । इस प्रकार से बहुत से ऐसे फायदे मृदा को होते है अगर हमारे किसान भाई समुचित फसल अवशेष प्रबंधन को अपनाए।

01/2025-26

भारत में चावल की खेती: प्रकार, जलवायु परिस्थितियां और अधिक

प्रशांत श्रीवास्तव (मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन विभाग)
चंद्रशेखर आज़ाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कानपुर (उ.प्र.)

अनुराग सिंह आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)

प्रस्तावना: धान, गीली, नम जलवायु के साथ जुड़ा हुआ है हालांकि यह एक उष्णकटिबंधीय पौधा नहीं है। इस बात की सबसे अधिक संभावना है कि धान पूर्वी हिमालय की तलहटी में पाई जाने वाली जंगली घास की वंशज है।एक विचार के अनुसार धान का जन्म दक्षिण भारत में हुआ और बाद में यह देश के उत्तर में फैल गया कर फिर चीन तक पहुँच गया। जापान और इंडोनेशिया में इसका आगमन लगभग 2000 ई.पू. तो कोरिया, फिलीपींस में लगभग 1000 ई.पू. में माना जाता है।

भारत में चावल का इतिहास: भारत चावल की खेती का एक महत्वपूर्ण केंद्र है। भारत में चावल की सबसे बड़े क्षेत्र पर खेती की जाती है। इतिहासकारों के अनुसार चावल की इंडिका किस्म बर्मा के माध्यम से पूर्वी हिमालय (यानी उत्तर पूर्वी भारत), की तलहटी वाले क्षेत्र में पहले लगाई गई, जबकि थाईलैंड, लाओस, वियतनाम और दक्षिणी चीन में, बिही किस्म की जंगली किस्म को पालतू बनाया गया और इसे ही भारत में लाया गया था। बारहमासी जंगली चावल अभी भी असम और नेपाल में काफी मात्रा में होता हैं। यह उत्तरी मैदानों में अपने पालतू बनाने के बाद दक्षिण भारत में 1400 ई.पू. के आसपास दिखाई दिया गया। उसके बाद यह नदियों द्वारा सिंचित सब उपजाऊ पानी वाले मैदानी इलाकों में फैल गया।

जलवायु आवश्यकताएं: भारत में चावल व्यापक रूप में ऊंचाई और जलवायु की बदलती स्थितिओं में बोया जाता है। भारत में चावल की खेती समुद्र तल से 3000 मीटर ऊंचाई तक एवं 8 से 35 डिग्री उत्तर अक्षांश तक होती है। चावल की फसल को एक गर्म और नम जलवायु की जरूरत है। यह सबसे अच्छा उच्च नमी, लंबे समय तक धूप और पानी की एक आश्वस्त आपूर्ति वाले क्षेत्रों के लिए अनुकूल है। फसल की जीवन अवधि के दौरान आवश्यक औसत तापमान 21 से 42° C होना चाहिए। चावल की फसल के लिये अधिकतम तापमान 40° से 42° C के बीच होना चाहिए।

चावल की वृद्धि के लिए मिट्टी की स्थिति: चावल नदी घाटियों, बाढ़ के मैदानों, डेल्टा और तटीय मैदानों में एक प्रमुख फसल है, जहाँ सिंचाई से मैदान आसानी से भर जाते हैं। दोमट मिट्टी को बार-बार सिंचाई और अधिक पानी की आवश्यकता होती है, क्योंकि उनकी जल धारण क्षमता कम होती है। उदाहरण डेल्टा क्षेत्र, पंजाब, हरियाणा और उत्तर भारतीय मैदान हैं।दूसरी ओर, चिकनी मिट्टी में अच्छी जल धारण क्षमता होती है। उदाहरण दक्षिण भारत के तटीय मैदान और कर्नाटक और तेलंगाना के सिंचित क्षेत्र हैं। चावल अम्लीय और क्षारीय दोनों तरह की मिट्टी को सहन कर सकता है।

चावल की खेती के तरीके:

ब्रॉडकास्टिंग विधि : इस विधि में, बीज को हाथ से बोया जाता है (ब्रॉडकास्ट)। यह विधि शुष्क और/या कम उपजाऊ मिट्टी और श्रम की कमी वाले क्षेत्रों में अपनाई जाती है। यह सबसे आसान विधि है, जिसमें न्यूनतम इनपुट की आवश्यकता होती है, लेकिन पैदावार भी न्यूनतम होती है।

ड्रिलिंग विधि : एक व्यक्ति भूमि की जुताई करता है, और दूसरा बीज बोता है। यह प्रायद्वीपीय भारत के शुष्क क्षेत्रों तक ही सीमित है, और पैदावार भी कम है।

रोपण विधि : यह भारत में चावल की खेती की उन्नत विधि है। इसमें मशीनीकरण की गुंजाइश कम है और यह श्रम-प्रधान है। यह विधि उपजाऊ मिट्टी वाले क्षेत्रों में अपनाई जाती है, जहाँ वर्षा या सिंचाई प्रचुर मात्रा में होती है। इस विधि में, नर्सरी में बीज बोए जाते हैं, और पौधे तैयार किए जाते हैं। एक महीने के बाद, पौधों को उखाड़कर दूसरे खेत में रोप दिया जाता है। यह एक जटिल विधि है, जिसमें भारी मात्रा में निवेश की आवश्यकता होती है। लेकिन यह सबसे अधिक उपज देती है।

जापानी विधि : यह चावल की खेती की सबसे उन्नत और अत्यधिक मशीनीकृत विधि है। इसका अधिकतर पालन जापान, दक्षिण कोरिया आदि जैसे विकसित देशों में किया जाता है। इस विधि में, मशीनों की मदद से पंक्तियों में पौधे रोपे जाते हैं। निराई और खाद डालना भी पूरी तरह से मशीनीकृत है। इस विधि में उर्वरक की भारी मात्रा की आवश्यकता होती है। चावल की खेती की इस विधि से बहुत अधिक उपज प्राप्त होती है।

SRI विधि: चावल गहनीकरण की प्रणाली में चावल की खेती यथासंभव अधिक जैविक खाद के साथ की जाती है, जिसमें युवा पौधों को एक वर्गाकार पैटर्न में अधिक दूरी पर एक-एक करके रोपना शुरू किया जाता है; और बीच-बीच में सिंचाई की जाती है, जिससे मिट्टी नम रहती है, लेकिन जलमग्न नहीं होती है और खरपतवारनाशक के साथ लगातार अंतर-खेती की जाती है, जो मिट्टी को सक्रिय रूप से हवादार बनाती है। इसके बजाय, यह विचारों का एक समूह है और संसाधनों के व्यापक प्रबंधन और संरक्षण के लिए एक पद्धति है, जिसमें भूमि, बीज, पानी, पोषक तत्वों और मानव श्रम का उपयोग करके थोड़े लेकिन अच्छी तरह से तैयार बीजों से उत्पादकता बढ़ाने के तरीके को बदला जाता है।

चावल की सीधी बुवाई : चावल की सीधी बुवाई (डीएसआर) एक कृषि पद्धति है, जिसमें चावल के बीजों को सीधे खेत में बोया जाता है, जिससे नर्सरी से पौधों को रोपने की पारंपरिक प्रक्रिया को दरकिनार कर दिया जाता है। यह तकनीक श्रम और पानी की आवश्यकताओं को कम करती है, जिससे यह पारंपरिक तरीकों की तुलना में अधिक सतत और लागत प्रभावी विकल्प बन जाता है। चावल की सीधी बुवाई फसल चक्र को छोटा कर देता है, जिससे जल्दी कटाई संभव होती है। इससे एक वर्ष में कई फसल चक्र (मल्टीपल क्रॉपिंग) का मौका मिलता है। पानी की कमी और श्रम की कमी के बारे में बढ़ती चिंताओं के साथ, चावल की सीधी बुवाई (डीएसआर) चावल की खेती में तेजी से लोकप्रिय हो रही है।

चावल के पोषण का महत्व: चावल अपने सबसे महत्वपूर्ण घटक कार्बोहाइड्रेट (स्टार्च) के रूप में तुरंत ऊर्जा प्रदान करता है जो एक पोषण मुख्य भोजन है। दूसरी ओर, चावल में केवल 8 फीसदी वसा और लिपिड भी नगण्य है। नाइट्रोजन पदार्थों की औसत में भी चावल काफी गरीब है। और इस कारण इसे खाने के लिए एक पूर्ण भोजन के रूप में माना जाता है हैढ़ चावल का आटा स्टार्च में समृद्ध है और विभिन्न खाद्य सामग्री बनाने के लिए प्रयोग किया जाता है। यह शराब माल्ट बनाने के लिए भी शराब बनाने वढ़ूलों द्वारा कुछ मामलों में प्रयोग किया जाता है। इसी तरह, अन्य सामग्री के साथ चावल के छिलके को मिश्रित कर चीनी मिट्टी के बरतन, कांच और मिट्टी के बर्तनों का उत्पादन किया जाता है। चावल पेपर पल्प और पशुओं के बिस्तर के निर्माण भी में प्रयोग किया जाता है।

औषधीय मूल्य: चावल जर्मप्लाज्म की विशाल विविधता, कई चावल आधारित उत्पादों के लिए एक समृद्ध स्रोत है और यह अपच, मधुमेह, गठिया, लकवा, मिर्गी और गर्भवती और स्तनपान कराने वाली माताओं को ताकत देने के रूप में कई स्वास्थ्य संबंधी विकृतियों के इलाज के लिए प्रयोग किया जाता है। प्राचीन आयुर्वेदिक साहित्य में भारत में उगाई चावल के विभिन्न प्रकारओं के औषधीय और रोगनाशक गुणों की गवाही देता है। कंठई बांको (छत्तीसगढ़), मेहर, सरिफुल, डनवार (उड़ीसा), आतीकाया और कारी भट्ट (कर्नाटक) जैसे औषधीय चावल की कई किस्मे भारत में आम हैं। चिकित्सा गुणों वाली कुछ किस्मों जैसे Chennellu, Kunjinellu, Erumakkari और Karuthachembavu आदि की खेती अब भी केरल के कुछ खास इलाकों में होती है।

मुख्य रोग

ब्लास्टः यह फफूंद जनित रोग है, जो पत्तों, तनों और बालियों पर भूरे से नीले रंग के धब्बे बनाता है। यह पत्तों, तनों और बालियों को प्रभावित करता है, जिससे फसल का भारी नुकसान हो सकता है।

भूरा धब्बा: इस फफूंद रोग के कारण पत्तों पर भूरे रंग के अंडाकार धब्बे बनते हैं, जिनका केंद्र धूसर या सफेद होता है। यह रोग पत्तों को मुरझा देता है।

जीवाणु झुलसा: यह रोग फसल में फूल आने के समय आता है और पत्तों के किनारों से शुरू होकर लंबी, सफेद या मटमैली धारियों के रूप में पूरे पत्ते पर फैल जाता है।

तना सड़न: जब पौधा लगभग 2-3 महीने का होता है, तब पानी की सतह के पास तनों पर काले धब्बे बनते हैं, जो धीरे-धीरे तने को सड़ा देते हैं। अधिक संक्रमण होने पर पौधा गिर जाता है।

खैरा रोग : यह रोग पोषक तत्वों की कमी, विशेषकर जस्ते की कमी से होता है।

चुनौतियां: चावल की खेती भारत में लाखों किसानों की आजीविका का आधार है, लेकिन इसके सामने कई गंभीर चुनौतियाँ हैं जो खेती की स्थिरता और उत्पादकता को प्रभावित कर रही हैं। सबसे बड़ी चुनौती है जल संकट। पारंपरिक चावल की खेती में भारी मात्रा में पानी की आवश्यकता होती है, और पंजाब, हरियाणा जैसे क्षेत्रों में भूजल स्तर तेजी से गिर रहा है, जिससे सिंचाई कठिन होती जा रही है। दूसरी बड़ी चुनौती है भूमि की गुणवत्ता में गिरावट। लगातार एक ही फसल बोने, अधिक रासायनिक उर्वरकों के उपयोग और हरित क्रांति के परिणामस्वरूप भूमि में लवणता और क्षारीयता बढ़ रही है, जिससे उपज प्रभावित होती है। साथ ही, भूमि का क्षरण और रेगिस्तान में तब्दील होना जैसे खतरे भी बढ़ते जा रहे हैं। तीसरी समस्या है श्रम की कमी। आधुनिक युवा पीढ़ी कृषि क्षेत्र से दूरी बना रही है, जिससे श्रमिकों की उपलब्धता घट रही है और खेती की लागत बढ़ रही है। पंजाब और हरियाणा जैसे राज्यों में चावल की खेती अब प्रवासी मजदूरों पर निर्भर हो गई है, जो कभी-कभी समय पर उपलब्ध नहीं हो पाते।

निष्कर्ष: भारत का वैश्विक चावल उत्पादन और निर्यात में प्रभुत्व फसल के देश के कृषि परिदृश्य में महत्वपूर्ण महत्व का एक प्रमाण है। भूमि क्षरण और जल की कमी जैसी चुनौतियों के बावजूद, भारत उत्पादकता में सुधार और वैश्विक बाजार में अपनी स्थिति बनाए रखने के लिए चावल की खेती के तरीकों में लगातार नवाचार कर रहा है। चूंकि चावल लाखों लोगों के लिए एक मुख्य भोजन बना हुआ है, टिकाऊ प्रथाओं और तकनीकी प्रगति पर निरंतर ध्यान खाद्य सुरक्षा और आने वाले वर्षों में आर्थिक विकास सुनिश्चित करेगा।

भारत की प्रमुख फसल प्रणाली

(Major Cropping Systems of India)

दीपचंद निषाद (शोध छात्र) सस्य विज्ञान विभाग
वीर बहादुर सिंह पूर्वांचल विश्वविद्यालय जौनपुर (उ. प्र.)
राम मिलन फसल कार्यकी विज्ञान विभाग, आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज अयोध्या
संदीप कुमार (शोध छात्र) सस्य विज्ञान विभाग
महाराजा सुहेल देव विश्वविद्यालय, आज़मगढ़ (उ. प्र.)
शिवम् श्रीवास्तव (शोध छात्र) जेनेटिक्स एंड प्लांट ब्रीडिंग विभाग, डॉ राम मनोहर लोहिया अवध वि.वि. अयोध्या (उ. प्र.)
डॉ. आदित्य भूषण श्रीवास्तव कृषि अर्थशास्त्र विभाग
आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी वि.वि. कुमारगंज अयोध्या
कार्तिकेय श्रीवास्तव (शोध छात्र) जेनेटिक्स एंड प्लांट ब्रीडिंग विभाग, वीर बहादुर सिंह पूर्वांचल विश्वविद्यालय जौनपुर (उ.प्र.)

1. प्रस्तावना

भारत एक कृषि प्रधान देश है जहाँ लगभग 55 प्रतिशत जनसंख्या प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से कृषि पर निर्भर है। देश की विविध जलवायु, भौगोलिक परिस्थितियाँ, और मृदा प्रकार विभिन्न प्रकार की फसल प्रणालियों को जन्म देते हैं। फसल प्रणाली (Cropping System) वह प्रक्रिया है जिसमें एक निश्चित अवधि में, एक निश्चित भूमि पर विभिन्न फसलों को उगाया जाता है ताकि भूमि, जल, और पोषक तत्वों का अधिकतम उपयोग किया जा सके।

हरित क्रांति के बाद भारत में फसल उत्पादन में उल्लेखनीय वृद्धि हुई, परंतु एकल फसल प्रणाली (Monocropping) के बढ़ते चलन से मृदा स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव पड़ा। आज के समय में फसल प्रणाली का चयन उत्पादकता, स्थिरता, और पर्यावरण संरक्षण को ध्यान में रखकर किया जाना आवश्यक है।

2. फसल प्रणाली की परिभाषा: फसल प्रणाली (Cropping System) का अर्थ है– एक निश्चित क्षेत्र और समय में फसलों की ऐसी अनुक्रमिक व्यवस्था जिसमें भूमि, जल, पोषक तत्व और श्रम का अधिकतम उपयोग हो तथा उत्पादन और लाभ दोनों में वृद्धि हो। इसकी योजना कृषि पारिस्थितिकी, मिट्टी के प्रकार, सिंचाई सुविधा, जलवायु, और बाज़ार की मांग के आधार पर की जाती है। चावल आधारित प्रणालियाँ: इसमें चावल के साथ-साथ दलहन, तिलहन, कपास, गन्ना, हरी खाद और सब्जियां शामिल हैं, अनाज: चावल, गेहूं, मक्का, ज्वार, बाजरा और रागी, दलहन: मसूर, चना, अरहर और मूंग, तिलहन: सरसों, मूंगफली, तिल, सूरजमुखी और सोयाबीन, नकदी फसलें: जूट, कपास, गन्ना, तंबाकू, वृक्षारोपण फसलें: चाय, कॉफी, नारियल और रबर, बागवानी फसलें: फल और सब्जियां।

3. भारत में प्रमुख फसल प्रणालियाँ

(क) धान-गेहूँ प्रणाली (Rice–Wheat System)
क्षेत्र: पंजाब, हरियाणा, पश्चिमी उत्तर प्रदेश, बिहार।
लाभ: उच्च उत्पादकता।
समस्या: मृदा कठोरता, भूजल दोहन।

(ख) सोयाबीन-गेहूँ प्रणाली (Soybean–Wheat System)
क्षेत्र: मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, राजस्थान।
लाभ: नत्रजन स्थिरीकरण।
समस्या: फॉस्फोरस की कमी।

(ग) मक्का-गन्ना प्रणाली (Maize–Sugarcane System)
क्षेत्र: उत्तर प्रदेश, बिहार।
लाभ: उच्च आय।
समस्या: अधिक सिंचाई की आवश्यकता।

(घ) कपास-गेहूँ प्रणाली (Cotton–Wheat System)
क्षेत्र: पंजाब, हरियाणा, गुजरात।
लाभ: नकदी फसल से लाभ।
समस्या: कीटनाशक निर्भरता।

(ङ) धान-मेंथा प्रणाली (Rice–Mentha System)
क्षेत्र: पूर्वी उत्तर प्रदेश।
लाभ: अधिक लाभदायक।
समस्या: नमी और तापमान पर निर्भरता।

4. फसल प्रणाली को प्रभावित करने वाले प्रमुख कारक

1. जलवायु (Climate)
2. मृदा प्रकार (Soil Type)
3. सिंचाई सुविधा (Irrigation)
4. बाज़ार एवं मूल्य नीति (Market and MSP)
5. तकनीकी संसाधन (Technology)
5. सतत फसल प्रणाली की आवश्यकता

वर्तमान समय में फसल प्रणाली का उद्देश्य केवल अधिक उत्पादन प्राप्त करना नहीं, बल्कि मृदा स्वास्थ्य, जल संरक्षण, और पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखना भी है। जैविक खादों का प्रयोग, फसल चक्र, बहुफसली प्रणाली, और कृषि अवशेषों का पुनः उपयोग जैसे उपायों से कृषि अधिक टिकाऊ बन सकती है।

6. मिश्रित एवं एकीकृत फसल प्रणाली (Integrated Cropping Systems)- एकीकृत फसल प्रणाली में फसलें, पशुपालन, मत्स्य पालन, और बागवानी को साथ लेकर चला जाता है ताकि आय के विविध स्रोत बन सकें।

उदाहरण: - धान + मछली + सब्जी प्रणाली - मक्का + दाल + बागवानी प्रणाली - धान + मेंथा + दुग्ध उत्पादन प्रणाली

7. पर्यावरणीय प्रभाव और सुधार के उपाय

लगातार एक ही फसल प्रणाली अपनाने से मिट्टी में पोषक तत्वों का असंतुलन, सूक्ष्मजीवों की कमी, और जल संसाधनों पर दबाव बढ़ता है। सुधार के लिए आवश्यक उपाय हैं:

- फसल विविधीकरण - जैविक खादों का प्रयोग - सिंचाई जल का कुशल प्रबंधन - संरक्षण कृषि तकनीक का उपयोग

8. निष्कर्ष: भारत में प्रमुख फसल प्रणालियाँ देश की खाद्य सुरक्षा, रोजगार और ग्रामीण अर्थव्यवस्था की रीढ़ हैं। अब आवश्यक है कि पारंपरिक फसल प्रणालियों को सतत एवं चक्रीय दृष्टिकोण से अपनाया जाए ताकि कृषि उत्पादकता और पर्यावरणीय स्थिरता दोनों सुनिश्चित हो सकें।

9. संदर्भ

1. कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार (2023)
2. ICAR – भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली (2022)
3. FAO (2020) Sustainable Crop Production in India
4. Yadav, R.L. & Singh, S. (2021) Cropping Systems and Soil Fertility Management in India
5. Singh, R.B. (2019) Sustainable Agriculture and Cropping Patterns in India

01/2025-26

डॉ. नन्दन सिंह विषय वस्तु विशेषज्ञ (मृदा विज्ञान), वरिष्ठ प्रसार अधिकारी, विषय वस्तु विशेषज्ञ (बीज प्रौद्योगिकी)

डॉ. के.एम. सिंह प्रसार निदेशालय, केविके बहराइच

सुनील कुमार आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या- 224229 (उ.प्र.)

पूर्वी उत्तर प्रदेश में अक्टूबर माह में उगाई जाने वाली फसलों के लिए अनुकूल मृदा

मृदा शब्द की उत्पत्ति लैटिन भाषा के शब्द सोलम से हुई है, जिसका अर्थ फर्श हैं, मृदा ऐसी ऊपरी परत है जो पृथ्वी से ढकी हुई है मृदा वह पदार्थ हैं जो हमारी फसलो को पोषित करता है और सहारा प्रदान करता है मृदा एक प्राकृतिक पिण्ड है जो प्राकृतिक पदार्थों पर प्राकृतिक बलों के प्रभाव से विकसित हुई हैं। मृदा,अनंत जीवन का एक मात्र साधन है, जहाँ पर मानव, फसल, जीव-जंतु, पेड़ पौधे सभी प्राकृतिक संसाधन उपलब्ध है, जो हम सभी को आवश्यक है। मृदा का निर्माण चट्टानों के टूटने-फूटने, विघटन, तथा उसमें मौजूद वनस्पति और जन्तुओ के अवशेषों के सहयोग से हुआ है। मृदा के बनने में चट्टानों के विघटन के फलस्वरूप जो खनिज का निर्माण होता हैं उसमें अकार्बनिक अवयव, फास्पोरस, पोटाश, कैल्शियम, मैग्नीशियम एवं सल्फर आदि होता है।

मृदा के मुख्यता चार अवयव होते हैं- (क) खनिज पदार्थ- 45% (ख) कार्बनिक पदार्थ - 5% (ग) जल - 25% (घ) वायु - 25%

एक अच्छी मृदा के लिए लगभग 50 प्रतिशत ठोस और शेष आयतन को रंध्रावकाश कहते हैं जिसमें जल ,वायु उपस्थित होते हैं मृदा में खनिज पदार्थ पोषक तत्वों का प्रमुख स्रोत है जो सिलिका फेल्डसपार आदि से मिलता है। मृदा में कार्बनिक पदार्थ ब्लड का काम करता है और जब फसल और जंतु अवशेष सड़ जाते हैं तब ये ह्यूमस का काम करते हैं, कोलॉइडल गुण होने के कारण पोषक तत्व एवं जल धारण करने की क्षमता बढ़ जाती है मृदा जल मृदा में मुख्यतया मृदा गठन, मृदा संरचना, कोलॉइड पदार्थों की मात्रा, एवं प्रकृति तथा रंध्रावकाश के आयतन जैसे गुणो से प्रभावित होती हैं मृदा में वायु रंध्रावकाश में उपस्थित रहता है, मृदा में वायु और जल की मात्रा में विलोम सम्बंध है। पौधों की जड़ो के श्वसन के लिए और जीवणुओ के श्वशन के लिए ऑक्सीजन की पर्याप्त मात्रा होना चाहिए।

अक्टूबर माह में बोई जाने वाली फसलों के लिए मृदा को दृष्टिगत रखते हुए कुछ महत्वपूर्ण सुझाव-

* सर्वप्रथम हमे यह निर्णय लेना चाहिए कि हमे कौन सी फसल उगानी है।
* जो फसल हम उगाने जा रहे हैं इसके पहले कौन सी फसल उगाई गई है।
* जो फसल हम लेने जा रहे है उसमें नाइट्रोजन, फॉस्फोरस और पोटाश किलोग्राम/हेक्टेयर कितना तर्कसंगत हैं।
* मृदा की जांच पास के कृषि विज्ञान केंद्र , विश्वविद्यालय, जिला स्तर पर मृदा की जांच कराना चाहिए।
* मृदा स्वास्थ्य कार्ड में सम्मिलित सभी बारह मानक की समुचित जाँच हो।
* मृदा में गोबर की खाद को बुआई के 15 दिन पहले हमारे किसान भाई समुचित रूप से फैला दे।

रबी मौसम में बोई जाने वाली कुछ महत्वपूर्ण फसलें

अक्टूबर माह के प्रथम पखवाड़े में धान की जल्दी पकने वाली प्रजाति काटने योग्य हो जाती है तथा मूँग, उडद, मक्का, आदि पककर तैयार हो जाती है। अक्टूबर माह में बोई जाने वाली फसलें जैसे- जौ, जई, सरसो, चना, मटर, आलू, बरसीम, मक्का, सूरजमुखी एवं ज्वार आदि है।

सरसों

सरसों की बुवाई पूर्वी उत्तर प्रदेश में अक्टूबर के प्रथम पखवाड़े से नवंबर के प्रथम पखवाड़े तक करते हैं, लेकिन अक्टूबर में बोई गई सरसों की फसल में कीट और रोगों के लगने का भय बहुत कम रहता हैं, जिससे पूर्वी उत्तर प्रदेश में अच्छा उत्पादन हमारे किसान भाई प्राप्त कर सकते हैं। सरसो की खेती के लिए हमारे किसान भाइयों को धयान रखना चाहिये की अच्छे जल निकास युक्त हल्की दोमट मिट्टी खेती के लिए सर्वोत्तम है। लेकिन बलुई दोमट मिट्टी से लेकर मटियार दोमट भूमि में भी उगाया जा सकता है। अगर मृदा का पी.एच. 6.5 से 7.5 के बीच रहे तो अच्छी उपज मिलती है।

मक्का

मक्का की खेती के लिए पूर्वी उत्तरप्रदेश में 6 से 7 पी.एच. तक कि मृदा अच्छी मानी जाती है। जिस मृदा का पी. एच. 8.0 होता है वहाँ भी मक्के की खेती संभव है, अच्छी पैदावार के लिए अधिक ऊपजाऊ दोमट मिट्टी जिसमें वायु का संचार अच्छा हो तथा जल निकास उत्तम होनी चाहिए। किसान भाइयों को इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि जब बुवाई योग्य खेत तैयार हो जाये, तब 30-30 मीटर की दूरी पर जल निकास की नालिया बना देना चाहिए। किसान भाइयों को रबी मौसम में मक्के कि बुवाई 15 अक्टूबर से 15 नवंबर तक कर देना चाहिए।

ज्वार

ज्वार सामान्तया खरीफ और रबी के मौसम में उगाया जाता है ज्वार को रबी और खरीफ के मौसम में उगाया जाता है ज्वार को रबी ऋतु में अक्टूबर से फरवरी तक उगाया जाता है ये अधिक वर्षा सहन नही कर सकता है ज्वार के लिए दोमट मिट्टी सर्वोत्तम रहती हैं।दीमक से फसल को बचाने के लिए लिंडेन 1.3 प्रतिशत धूल, 25 किलोग्राम प्रति हेक्टयर की दर से अंतिम जुताई के समय खेत मे मिला देना चाहिए।

चना

चने के लिये गहरी जुताई युक्त ढेले दार संरचना उत्तम मानी जाती है इसमें पौधे कि जड़े गहरी और अधिक ऑक्सीजन युक्त मृदा होनी चाहिये । इसकी बुवाई खरीफ में बोई गई बाजरे के कटने के बाद हम अक्टूबर में बुवाई करते हैं, लेकिन तराई क्षेत्र में नवंबर में बुवाई करते है, लेकिन तराई क्षेत्र में चने की बुवाई अक्टूबर में करते हैं, तो पौधे की बढ़वार खूब होती है लेकिन फली कम लगती हैं।

सूरजमुखी

सूरजमुखी एक ऐसे फसल है जो वर्ष में तीन बार बोई जाती है ,रबी के मौसम में बोने का उचित समय अक्टूबर से नवंबर का माह होता है, सूरज मुखी का खेती लगभग सभी प्रकार की भूमियों में की जा सकती है, परन्तु अधिक जलधारण क्षमता वाली भूमि सबसे उपयुक्त है ,अम्लीय एवं क्षारीय भूमि इसके लिए अनुपयुक्त हैं। सूरजमुखी के लिए बुवाई के समय खेत की मिट्टी मुलायम और भुरभुरी होनी चाहिए।

बरसीम

बरसीम की खेती के लिए अच्छे जल निकास वाली दोमट मिट्टी सर्वोत्तम रहती है। अम्लीय भूमि की अपेक्षा क्षारीय अवस्थाओ में यह ठीक तरह से विकास करता है।

आलू

आलू के लिए बलुई दोमट या दोमट भूमि सर्वोत्तम रहती है।जिसमे जल निकास निकास अच्छा तथा उर्वरा हो, हल्की अम्लीय भूमियों (पी एच 6-6.5) में आलू की अच्छी उपज मिलती है। क्षारीय वा भारी मृदा आलू की खेती के लिए अनुपयुक्त होते हैं भूमिगत कीट जैसे -दीमक ,कुतरा, कुरमुला,आलू की फसल को बचाने के लिए लिंडेन 1.3 प्रतिशत 30 किलोग्राम/हेक्टयर की दर से मिला देना चाहिए।

तम्बाकू

पूर्वी उत्तर प्रदेश में तम्बाकू की खेती बहुत कम क्षेत्र में की जाती है, इसकी खेती के लिए बिविन्न प्रकार की भूमि खुली हुई अच्छे जल निकास वाली तथा समुचित वायु युक्त भूमि सर्वोत्तम तथा हल्की दोमट भूमि जिसमें जीवांश की मात्रा कम हो तम्बाकू के लिए उपयुक्त है सभी प्रकार के तम्बाकू की बुवाई सितंबर से अक्टूबर में की जाती है।

✍ **प्रखर राय** सस्य विज्ञान विभाग, कृषि संकाय
प्रो. राजेंद्र सिंह (रज्जू भैया) विश्वविद्यालय, प्रयागराज (उ.प्र.)

कृषि में ड्रोन तकनीक: समय और संसाधन की बचत

परिचय

भारत एक कृषि प्रधान देश है, जहां अधिकतर किसान सीमित संसाधनों और श्रम पर पूरी तरह से निर्भर हैं । बदलते हुए मौसम और बढ़ती हुई जनसंख्या वर्तमान समय में एक बड़ी चुनौती बनकर खड़ी है। इन चुनौतियों से निपटने के लिए फसल उत्पादन में सुधार करना आज एक वर्तमान समय की सबसे बड़ी मांग है । परंपरागत कृषि पद्धतियों में समय के साथ-साथ मेहनत भी अधिक लगती है ,जिससे फसल उत्पादन की लागत तो बढ़ती ही है साथ-साथ फसल की गुणवत्ता भी प्रभावित होती है। इस समस्या को हल करने में ड्रोन तकनीक काफी हद तक कारगर सिद्ध हो रहा है । वर्तमान समय में खेत की निगरानी करने में ,बीज और उर्वरक डालने में,पानी देने में तथा कीट वर्गों की पहचान करने में किसान ड्रोन का उपयोग कर रहे हैं । ड्रोन खेत की स्थिति के विषय में जो शीघ्र व सटीक जानकारी देता है ,उससे किसान के समय के साथ-साथ संसाधन की भी बचत होती है।इस तरह ड्रोन तकनीक सिर्फ काम को आसान नहीं बनाता अपितु फसल की गुणवत्ता और उत्पादन क्षमता बढ़ाने में मदद करता है। यही कारण है कि आधुनिक कृषि में ड्रोन एक महत्वपूर्ण उपयोगी उपकरण बन गया है।

ड्रोन तकनीक के उद्देश्य

कृषि में ड्रोन तकनीक को अपनाने का मुख्य उद्देश्य बेहतर उपज और किसानों की आय में वृद्धि के साथ-साथ कृषि को और अधिक आधुनिक,सटीक और समय की दृष्टि से कुशल बनाना है। इस तकनीक की सहायता से किसान अपने खेत की वास्तविक स्थिति को आसानी से समझ सकते हैं और सही समय पर उचित वैज्ञानिक प्रबंधन उपाय अपना कर उत्पादन ,समय और संसाधन का प्रभावी उपयोग सुनिश्चित कर सकते हैं । **कृषि में ड्रोन तकनीक के प्रमुख उद्देश्य हैं -** * खेती को सटीक और आधुनिक बनाना । * फसलों की निगरानी और रोग नियंत्रण में सहायता । * उर्वरक और कीटनाशकों का सामान और सटीक छिड़काव। * सिंचाई प्रबंधन में सुधार । * उत्पादन और किसान की आय मेंवृद्धि । * पर्यावरण संरक्षण के साथ साथ सतत किसी को बढ़ावा देना ।

ड्रोन तकनीक के प्रमुख सिद्धांत

सटीक कृषि पर आधारित सिद्धांत - ड्रोन तकनीक का मुख्य आधार है -सटीक कृषि । इसमें खेत के प्रत्येक हिस्से का अलग-अलग विश्लेषण कर उसके आधार पर उचित प्रबंधन किया जाता है ।

डाटा संग्रहण और विश्लेषण - ड्रोन में लगे सेंसर और कैमरे खेत की तस्वीर लेकर मिट्टी ,फसल की स्थिति और नमी स्तर की जानकारी जूटाते हैं ।

* **जीपीएस और सेंसर तकनीक का प्रयोग -** ड्रोन जीपीएस और सेंसर की मदद से खेत के प्रत्येक हिस्से की सटीक स्थिति और डाटा प्रदान करते हैं।

* **वास्तविक समय की निगरानी -** ड्रोन खेत की वर्तमान स्थिति का तुरंत आकलन करने में सक्षम होते हैं, जिससे किसान परिस्थिति अनुसार तुरंत निर्णय ले सकता है।

* **सटीक नियंत्रण -** ड्रोन से मिले आंकड़ों के आधार पर किसान उर्वरक, कीटनाशक और सिंचाई की मात्रा नियंत्रित ढंग से निर्धारित कर सकता है ।

* **संसाधनों का प्रभावी उपयोग -** इस सिद्धांत का उद्देश्य यह है कि उपलब्ध संसाधनों का उपयोग (जल ,उर्वरक, रसायन) केवल आवश्यक मात्रा में किया जाए।

* **वैज्ञानिक दृष्टिकोण का समावेश -** ड्रोन तकनीक खेती को अनुमान या पारंपरिक अनुभव के बजाय वैज्ञानिक आंकड़ों पर आधारित बनती है।

* **सतत कृषि विकास की दिशा में योगदान -** ड्रोन सिद्धांत खेती को पर्यावरण के अनुकूल और दीर्घकालिक रूप से टिकाऊ बनाने पर केंद्रित है ।

कृषि में ड्रोन तकनीक से लाभ

ड्रोन समय और श्रम दोनों की बचत तो करता ही है,साथ ही कीट और रोग का समय पर पता लगाकर फसल की सुरक्षा करता है तथा खेती को सतत आधुनिक और प्रभावी बनाता है।

एआई की दृष्टि से

* सटीक प्रबंधन से उत्पादन में वृद्धि * संसाधनों के सही उपयोग से लागत में कमी * फसल गुणवत्ता में सुधार से किसानों की आय में वृद्धि

पर्यावरण की दृष्टि से

* रसायनों और पानी का सीमित प्रयोग पर्यावरण को सुरक्षित रखता है * सतत और पर्यावरण अनुकूल कृषि को बढ़ावा देता है

मृदा की दृष्टि से

* मृदा की सही निगरानी संभव होती है * पोषक तत्वों का संतुलित और नियंत्रित उपयोग सुनिश्चित होता है * भूमि की उत्पादकता में सुधार होता है

संसाधनों की दृष्टि से

* जल ,उर्वरक और रसायनों का प्रभावी उपयोग व अपव्यय कम होता है
* ऊर्जा की बचत होती है

प्रबंधन की दृष्टि से

* डाटा आधारित निर्णय लेने में मदद मिलती है * मौसम और फसल की स्थिति के अनुसार समय पर उचित कार्यवाही संभव होती है * खेत में जोखिम कम होता है

तकनीक की दृष्टि से

* उन्नत निगरानी और सटीक जानकारी प्रदान करता है
* जीपीएस आधारित सटीक छिड़काव सुनिश्चित करता है
* भविष्य की स्मार्ट और आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (ए. आई.) आधारित खेती के लिए तैयार करता है

कृषि में ड्रोन तकनीक की आवश्यकता

* समय की बचत के लिए * श्रम की बचत के लिए * सटीक फसल प्रबंधन के लिए * कीट और रोग नियंत्रण के लिए * संसाधनों के प्रभावी उपयोग के लिए * उत्पादन और आय बढ़ाने के लिए * पर्यावरण की सुरक्षा के लिए * सतत और आधुनिक कृषि को अपनाने के लिए

सरकारी योजनाएं और सब्सिडी

कृषि में ड्रोन तकनीक को बढ़ावा देने हेतु सरकार कई योजनाएं चला रही है। एग्रीकल्चरल मेकेनाइजेशन योजना के अंतर्गत कृषि संस्थानों को ड्रोन खरीद पर 100% या रु. 10 लाख तक सब्सिडी दी जाती है, जबकि किसानों और संगठनों को 40-50% सहायता मिलती है। किसान ड्रोन योजना (2022) और नमो ड्रोन दीदी योजना (2023 से 2026 तक) के माध्यम से फसल सर्वेक्षण, छिड़काव और महिला स्व-सहायता समूहों को प्रोत्साहन दिया जा रहा है।

निष्कर्ष

इस तकनीक ने आधुनिक कृषि को अधिक सटीक , समय और संसाधन सकुशल बनाया है । इससे किसानों की फसल की निगरानी, कीट और रोग नियंत्रण और उर्वरक एवं पानी के प्रभावी उपयोग में मदद मिलती है । किसानों की आय दोगुनी करने के लक्ष्य में ड्रोन तकनीक काफी मददगार सिद्ध होगा । उत्पादन और आय में वृद्धि के साथ-साथ ड्रोन खेती, पर्यावरण और मृदा संरक्षण को भी सुनिश्चित करता है। इसलिए ड्रोन तकनीक अब बस सहायक ही नहीं ,बल्कि आधुनिक और सतत कृषि के लिए एक आवश्यक उपकरण बन चुका है।

प्रो. बालिक दास राय
बन्टी राय
98276-11495
88715-18885

अमित राय
मैं. माँ उर्वरक केन्द्र
रसायनिक एवं जैविक खाद बीज एवं दवाई के विक्रेता

पताः भितरवार रोड, डबरा (म.प्र.)
03/2025-26

मिलेट्स के स्वास्थ्य लाभ: भारतीय किसानों के लिए एक वरदान

दिव्या कौशिक विषय वस्तु विशेषज्ञ- गृह विज्ञान, कृषि विज्ञान केन्द्र, रायबरेली-2 (उ.प्र.)

डॉ. मुक्ता गर्ग एसोसिएट प्रोफेसर एवं मानव विकास एवं पारिवारिक अध्ययन प्रभारी, चंद्रशेखर आज़ाद कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कानपुर

आयुषी मिश्रा पीएचडी स्कॉलर, मानव विकास एवं परिवार अध्ययन, चंद्रशेखर आज़ाद कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प्र.)

भारत, जिसे कभी "मिलेट्स का घर" कहा जाता था, आज पुनः उसी गौरवशाली परंपरा की ओर लौट रहा है। बदलते समय में जहाँ एक ओर फास्ट फूड और जंक फूड ने हमारे भोजन में जगह बना ली है, वहीं दूसरी ओर शरीर से जुड़ी अनेक बीमारियाँ – जैसे मोटापा, मधुमेह, हृदय रोग, और पाचन संबंधी विकार – तेजी से बढ़ रही हैं। ऐसे समय में, मिलेट्स (श्रीअन्न) हमारे स्वास्थ्य, पर्यावरण और कृषि अर्थव्यवस्था – तीनों के लिए एक टिकाऊ समाधान के रूप में उभर रहे हैं।

मिलेट्स वे छोटे अनाज हैं जो हजारों वर्षों से भारत के ग्रामीण आहार का हिस्सा रहे हैं। बाजरा, ज्वार, रागी, कोदो, कुटकी, सांवा, कांगनी, चेना आदि सभी मिलकर इस परिवार का हिस्सा हैं। ये अनाज न केवल पौष्टिक हैं, बल्कि कम पानी और रासायनिक खादों में भी अच्छी उपज देते हैं – जो इन्हें किसानों के लिए अत्यंत लाभकारी बनाते हैं।

मिलेट्स का पोषण मूल्य: मिलेट्स को "सुपरफूड" इसलिए कहा जाता है क्योंकि इनमें प्रोटीन, फाइबर, विटामिन और मिनरल्स की भरपूर मात्रा होती है। ये हमारे शरीर को अंदर से मजबूत बनाते हैं और कई बीमारियों से रक्षा करते हैं।

पोषक तत्व	मिलेट्स में औसत मात्रा (%)	स्वास्थ्य पर प्रभाव
फाइबर (Fiber)	7-11%	पाचन शक्ति बढ़ाता है, कब्ज से राहत देता है
प्रोटीन (Protein)	7-12%	शरीर की वृद्धि और मांसपेशियों को मजबूत करता है
आयरन (Iron)	3-06 mg प्रति 100g	एनीमिया (खून की कमी) से बचाता है
कैल्शियम (Calcium)	100-360 mg प्रति 100g (रागी में 9364 mg)	हड्डियों और दांतों को मजबूत बनाता है
मैग्नीशियम (Magnesium)	100-153 mg प्रति 100g	हृदय रोग और रक्तचाप को नियंत्रित रखता है
फॉस्फोरस (Phosphorus)	100-300 mg प्रति 100g	शरीर में जल संतुलन और रक्तचाप को बनाए रखता है
विटामिन B समूह (B1, B2, B3)	0.3-1.2 mg प्रति 100g	ऊर्जा उत्पादन और मस्तिष्क के कार्यों के लिए आवश्यक

इस प्रकार, मिलेट्स को रोज़मर्रा के आहार में शामिल करने से शरीर को सम्पूर्ण पोषण प्राप्त होता है।

मिलेट्स और रोग प्रतिरोधक क्षमता: आधुनिक जीवनशैली में रोग प्रतिरोधक क्षमता को मजबूत रखना बहुत आवश्यक है। मिलेट्स में मौजूद एंटीऑक्सीडेंट्स, फाइटोकेमिकल्स और फाइबर शरीर में हानिकारक तत्वों को बाहर निकालते हैं।

रोज़ाना मिलेट्स का सेवन करने से : * सर्दी, खाँसी जैसी सामान्य बीमारियाँ कम होती हैं, * शरीर में ऊर्जा लंबे समय तक बनी रहती है, * इम्यून सिस्टम सक्रिय रहता है।

मधुमेह और हृदय रोग में मिलेट्स की भूमिका: आज भारत में हर 10 में से 1 व्यक्ति मधुमेह से पीड़ित है। इसका मुख्य कारण है – परिष्कृत आटा, चावल और चीनी का अत्यधिक सेवन। मिलेट्स में लो ग्लाइसेमिक इंडेक्स (Low GI) होता है, यानी ये धीरे-धीरे पचते हैं और ब्लड शुगर को नियंत्रित रखते हैं। रागी, ज्वार और बाजरा: मधुमेह रोगियों के लिए सर्वोत्तम विकल्प हैं। साथ ही, इनसे शरीर में कोलेस्ट्रॉल नहीं बढ़ता जिससे हृदय स्वस्थ रहता है।

मोटापा नियंत्रण और पाचन स्वास्थ्य: मिलेट्स में मौजूद फाइबर पेट को लंबे समय तक भरा रखता है, जिससे बार-बार भूख नहीं लगती। यह वजन नियंत्रित करने में मदद करता है। जो लोग वजन घटाना चाहते हैं, वे चावल और गेहूं की जगह कोदो, सांवा, कुटकी या रागी* को अपने भोजन में शामिल कर सकते हैं। इसके अलावा, फाइबर युक्त भोजन पेट की सफाई में मदद करता है और गैस, अपच जैसी समस्याएँ दूर करता है।

महिलाओं और बच्चों के स्वास्थ्य के लिए मिलेट्स का महत्व: महिलाओं और बच्चों को पोषण की सबसे अधिक आवश्यकता होती है।

रागी में पाया जाने वाला कैल्शियम और आयरन *गर्भवती महिलाओं* और *बच्चों की वृद्धि* के लिए बेहद आवश्यक है। मिलेट्स में ग्लूटेन नहीं होता, इसलिए ये *ग्लूटेन सेंसिटिव या एलर्जी वाले बच्चों* के लिए भी सुरक्षित हैं।

नियमित सेवन से :

* बच्चों की हड्डियाँ मजबूत होती हैं, * महिलाओं में एनीमिया की समस्या कम होती है, * शरीर में स्फूर्ति बनी रहती है।

मिलेट्स और पर्यावरण संरक्षण: मिलेट्स केवल स्वास्थ्य के लिए नहीं, बल्कि पर्यावरण के लिए भी मित्रवत फसलें हैं।

* इन्हें बहुत कम पानी की आवश्यकता होती है। * रासायनिक खाद और कीटनाशकों का प्रयोग न्यूनतम होता है। * सूखा या गर्मी जैसी जलवायु में भी ये अच्छी पैदावार देती हैं। इसलिए, मिलेट्स को उगाना किसानों के लिए लाभकारी और टिकाऊ कृषि का उदाहरण है। सरकार भी अब मिलेट्स मिशन के माध्यम से किसानों को प्रोत्साहित कर रही है।

प्रधानमंत्री श्रीअन्न अभियान और किसानों के अवसर:

भारत सरकार ने वर्ष 2023 को अंतरराष्ट्रीय मिलेट वर्ष (International Year of Millets) घोषित किया। इसके बाद से देशभर में "प्रधानमंत्री श्रीअन्न अभियान" चलाया जा रहा है।

इस अभियान का उद्देश्य है: * किसानों को मिलेट्स की खेती के लिए प्रोत्साहन देना, * प्रसंस्करण (processing) और विपणन (marketing) की सुविधा बढ़ाना, * मिलेट्स आधारित उद्योगों को बढ़ावा देना।

अब ग्रामीण उद्यमिता में भी मिलेट्स से बने उत्पाद जैसे – मिलेट कुकीज़, नूडल्स, बिस्किट, आटा, रेडी-टू-कुक मिक्स आदि लोकप्रिय हो रहे हैं। इससे किसानों को अधिक आय, और ग्रामीण महिलाओं को रोज़गार के नए अवसर प्राप्त हो रहे हैं।

भारतीय पारंपरिक व्यंजन और मिलेट्स का उपयोग: भारत के विभिन्न राज्यों में मिलेट्स से बने व्यंजन सदियों से खाए जाते रहे हैं।

1.राजस्थान - बाजरे की रोटी, बाजरे का खिचड़ा 2.महाराष्ट्र - ज्वार की भाकरी 3.कर्नाटक - रागी मुद्दे 4.मध्य प्रदेश और छत्तीसगढ़ - कोदो-कुटकी की खीर 5.उत्तर भारत - बाजरे की खिचड़ी, लड्डू, दाल-बाजरा खिचड़ा

आज समय है कि हम इन्हें फिर से अपने दैनिक आहार में स्थान दें।

थोड़ा परिवर्तन जैसे - सुबह के नाश्ते में रागी इडली, दोपहर में बाजरे की रोटी, **शाम को ज्वार का उपमा** -स्वास्थ्य और परंपरा दोनों को जोड़ सकता है।

मिलेट्स आधारित ग्रामीण उद्योग: मिलेट्स से जुड़े मूल्यवर्धन (Value Addition) के कार्यों से किसानों को अच्छी आमदनी प्राप्त हो सकती है।

जैसे-1.मिलेट्स आटा पैकिंग यूनिट, 2.मिलेट स्नैक्स, कुकीज़, पापड़, 3.रेडी-टू-ईट और रेडी-टू-कुक उत्पाद बनाना, 4.मिलेट्स प्रसंस्करण प्रशिक्षण केंद्र स्थापित करना।

यह कार्य महिला स्वयं सहायता समूह (SHG)और एफपीओ (Farmer Producer Organization) के माध्यम से किया जा सकता है, जिससे ग्रामीण क्षेत्र में रोजगार और आर्थिक आत्मनिर्भरता बढ़ेगी।

मिलेट्स केवल एक अनाज नहीं, बल्कि स्वास्थ्य, परंपरा और पर्यावरण का त्रिकोणीय समाधान हैं। ये किसानों को आर्थिक स्थिरता, उपभोक्ताओं को स्वास्थ्य, और धरती को संतुलन प्रदान करते हैं। समय की माँग है कि हम सभी मिलकर मिलेट्स को फिर से अपने खेतों, थालियों और बाज़ारों में स्थान दें।

अच्छे स्वास्थ्य और किसानों की आय बढ़ाने हेतु- सहजन की उन्नत खेती

डॉ. अंजलि वर्मा एवं हरिओम मिश्र विषय वस्तु विशेषज्ञ, कृषि विज्ञान केन्द्र, बस्ती, आचार्य नरेन्द्रदेव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)

सहजन का वानस्पतिक नाम 'मोरिंगा ओलिफेरा' है। सहजन को स्थानीय भाषा में अलग-अलग नामों जैसे इसे मुनगा, मोरिंगा, सुरजना, आदि से भी जाना जाता है। देश भर में किसानों की दिलचस्पी सहजन की खेती में तेजी से बढ़ रही है क्योंकि सहजन की खेती में लागत के मुकाबले काफी अच्छा मुनाफा मिलता है। इसे सिंचाई और रखरखाव की जरूरत भी कम ही होती है। सहजन की जितनी माँग सब्जी के रूप में है उतनी ही औषधीय इस्तेमाल के लिए भी है। इसीलिए सहजन की खेती को नकदी और व्यावसायिक लाभ देने वाली फसल माना जाता है। सहजन की खेती में अनाज-सब्जी और बागवानी वाली दोनों खूबियाँ हैं क्योंकि ये साल में कम से कम दो बार उपज देती है। इसका पेड़ पाँच-सात साल तक पैदावार देता है। यह हमारे घरों के आस-पास बिना किसी देख भाल के उग आता है । अफ्रीकन देशों में इसे माताओं का सबसे अच्छा दोस्त माना जाता है। वहीं पश्चिमी देशों में इसे न्यूट्रीशन डाइनामाइट के नाम से जाना जाता है।

सहजन न केवल मनुष्य के लिए बल्कि दुधारू पशुओं के लिए भी स्वास्थ्य वर्धक और दूध बढ़ाने वाला है। यह अन्य चारा फसलों से कई गुना ज्यादा खूबियों वाला होता है। सहजन के पत्तियों और नरम तने का काटा गया चारा सूखे चारे के साथ मिला कर दिया जा सकता है। सहजन सूखे की दशा में सहनशील एवं बहुवर्षीय चारा देने वाली फसल के तौर पर इस्तेमाल में लाया जा सकता है। इसकी पत्तियाँ दुधारू पशुओं का दूध बढ़ाने और उन्हें कुपोषण तथा खून की कमी से बचाती हैं।

सहजन आधारित पौष्टिक व्यंजन बनाने की विधियां

1. सहजन के पत्तों की चटनी

आवश्यक सामग्री: सहजन के पत्ते-1 गड्डी धोकर और सुखाये हुए, तेल-2 बड़े चम्मच, जीरा-आधा चम्मच, लाल मिर्च-5-7° फूली चना दाल-आधा छोटा चम्मच, धुली उडद दाल-आधा छोटा चम्मच, सरसो-आधा छोटा चम्मच, इमली-1 टुकड़ा पानी मे भीगा हुआ, नमक-स्वादानुसार।

बनाने की विधि: 1. एक पैन में एक बड़ा चम्मच तेल गरम करें। जीरा, लाल मिर्च और दाल भूने फिर बर्तन से निकालकर अलग प्लेट में रखे। कढ़ाई मे एक चम्मच तेल के साथ सहजन की पत्तियां मिलाये और तब तक चलाये जब तक कि वे नरम हो जाए ठंडा होने दे। सभी सामग्री को नमक इमली के साथ दरदरा सा पीस ले।

2. सहजन की कढ़ी

आवश्यक सामग्री: सहजन बेसन-1 कप, दही/मट्ठा-4 कप, तड़के के लिए- धीध्तेल-1 चम्मच, हींग 2 चुटकी, जीरा -आधा चम्मच, हल्दी पाउडर-आधा चम्मच, मैथी दाना-आधा चम्मच राई आधा चम्मच, हरी मिर्च-2 बारीक कटी, कड़ी पत्ता (मीठी नीम), नमक-स्वादानुसार।

बनाने की विधि: 1. दही/मठे में बेसन, हल्दी, नमक, लाल मिर्च डालकर अच्छी तरह फेटें। 2. कड़ाही में तेल गर्म करके हींग, जीरा मैथी दाना, राई, हरी मिर्च एवं कड़ी पत्ता से तड़का लगायें मुनगा की कटी फलियों को डालें। 3. फेंटे हुए मिश्रण को तड़के में डालकर धीमी आंच पर अच्छी तरह पकायें।

3. सहजन का अचार

आवश्यक सामग्री: सहजन की फली-300 ग्राम, नमक-1 छोटी चम्मच/स्वादानुसार, सरसों का तेल-1 से 3 कप, चुटकी भर हल्दी पाउडर, छोटी चम्मच सौंफ पाउडर, छोटी चम्मच लाल मिर्च पाउडर, चौथाई छोटी चम्मच, काली मिर्च पाउडर चौथाई छोटी चम्मच, पीली सरसों दरदरी पिसी हुई-2 चम्मच।

बनाने की विधि: 1. अचार बनाने हेतु पहले सहजन की फलियों को धोकर सुखाकर, छोटे लम्बाई में काटकर, एक छोटी चम्मच नमक मिलाकर किसी डिब्बे में बन्द करके तीन दिन के लिये रख दीजिये। 2. रोजाना दिन में एक बार चम्मच से सहजन की फलियों को चलाकर ऊपर नीचे कर दें। 3. तीन दिन बाद नमक में

रखी हुई सहजन की कटी फली का अचार बनाइये। 4. तेल को कड़ाही में डालकर अच्छा गरम कीजिये, आंच बन्द करके कडाही को नीचे उतारकर तेल को थोड़ा ठंडा होने पर, सभी मसाले डालकर मिलायें। अब मसाले में तैयार सहजन की फल्लियों को मिला दें। 5. तैयार अचार को अच्छी तरह ठंडा होने के बाद कांच की बरनी में रख लीजिये। 6. अचार को दिन में एक बार चम्मच से ऊपर नीचे करते रहिये। सहजन की फली के अचार को 1-2 माह तक रख कर खाया जा सकता है। अचार को अधिक समय तक उपयोग करने हेतु अधार में इतना सरसों का तेल गरम करके, ठंडा करके डालें कि अचार तेल में डूबा रहे।

सहजन की उन्नत किस्में: सहजन की फसल से साल भर में सिर्फ एक बार ही फलत वह भी साल के कुछ महीने के लिए ही मिल पाती है। लेकिन कृषि वैज्ञानिकों ने कुछ ऐसी प्रजातियों को विकसित करने में सफलता पाई है जो साल में दो बार फसल देने में सक्षम है। इन प्रजातियों में रोहित-1,धनराज, केएम-1, केएम-2, पी.के.एम-1 पी.के.एम-2 प्रमुख है। सहजन की रोहित 1 प्रजाति के पौधे से रोपाई के 4-6 महीने पैदावार मिलनी शुरू हो जाती है। इससे 10 साल तक व्यावसायिक उपज लिया जा सकता है। यह प्रजाति साल भर में दो बार फसल देती है। इसकी फलियाँ गहरे हरे रंग की होती है। यह गुणवत्ता में बहुत अच्छी होती है। यह प्रजाति अच्छा उत्पादन देनें वाली है। सहजन के कोयम्बटूर 2 के फलियों की लम्बाई 25 से 35 सेंटी मीटर होती है। यह रंग में गहरा हरा और स्वादिष्ट होती है। पी.के.एम-1 किस्म से साल में दो बार उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। जब की पी.के.एम-2. किस्म का कच्चा छिलका रंग में हरा है और अच्छा स्वाद देता है। इसका भी उत्पादन अच्छा होता है।

सहजन की खेती * इसके पौधे सामान्य तापमान यानी 25-30 में आसानी से उगाये जा सकते है। औसत तापमान पर सहजन के पौधों काफी अच्छा विकास होता है। इसके पौधे ठंढ को भी आसानी से सह सकते है परन्तु फूल आते समय 40 डिग्री से ज्यादा तापमान पर फूल झड़ने लगता है। कम या ज्यादा वर्षा से पौधे को कोई नुकसान नहीं होता है। यह विभिन्न पारिस्थितिक अवस्थाओं में उगने वाला पौधा है। * सहजन की खेती के लिए सभी प्रकार की मिटटी अच्छी होती है। इसे खाली पड़ी जमीनों, बंजर और कम उर्वरा जमीनों में भी आसानी से उगाया जा सकता। * सहजन की फसल लेने के लिए इसे सीधे बिना नर्सरी डाले ही बीज या कलम द्वारा खेतों में रोपा जा सकता है। लेकिन इसमें पौधों के मरने का डर रहता है। अगर फसल से अच्छी फलन और साल में दो बार फलन चाहते है तो बीज से नर्सरी तैयार करना ज्यादा मुफीद होता है। बीज से नर्सरी तैयार करने के लिए एक हेक्टेयर खेत में पौधों की रोपाई के लिए के लिए 2 से 4 किलो ग्राम बीज की आवश्यकता पड़ती है। * अगर सहजन की खेती पशुओं के चारे के लिए की जा रही रही है तो इसके बीज को सीधे खेत में बोया जा सकता है। इसके लिए प्रति हेक्टेयर 100 किलोग्राम बीज की आवश्यकता पड़ती है। * सहजन की नर्सरी तैयार करने का उपयुक्त समय फरवरी से मार्च तक तथा नर्सरी में तैयार सहजन के पौधों को रोपने का सबसे मुफीद समयसे जून से सितम्बर का होता है। * नर्सरी में पॉलीथीन बैग में तैयार किये गए पौध एक महीनें में लगाने योग्य तैयार हो जाता है। पौधे को रोपण से पहले पाली बैग के बैग निचले हिस्से में छेद कर देना चाहिए जिससे जड़ें बाहर अच्छे से विकास कर सके। * सहजन की नर्सरी में बीजों के उचित जमाव और बढ़वार के उचित नमी बनाये रखना जरुरी होता है। * सहजन के पौधों से पौधों की दूरी व लाइन से लाइन की दूरी 3 मीटर रखते हुए रोपाई करनी चाहिए। रोपे गए पौधे जब 75 सेंटीमीटर के हो जाएँ तो इसके मुख्य कल्ले की कटिंग कर देनीं चाहिए, इससे पौध में अधिक कल्ले निकल आते है।

उत्पादन-साल में दो बार फल देने वाले सहजन की किस्मों की तुड़ाई सामान्यतया फरवरी-मार्च और सितम्बर-अक्टूबर में होती है। सहजन की साल में दो बार फलत देनें वाली उन्नत किस्म की प्रजातियों से फलियों और पत्तियों का अच्छा उत्पादन लिया जा सकता है साल भर में दो बार फसल देने वाली प्रजातियाँ पी.के.एम.1, पी.के.एम.2, कोयेंबटूर 1 तथा कोयेंबटूर 2 में रोपाई के बाद 90-100 में इसमें फूल आना शुरू हो जाता है है। जिससे पौधे लगाने के लगभग 160-170 दिनों पर फलियों की तुडाई की जा सकती है ।

बाजार में सहजन के फल- फूल और पत्तियों की माँग हमेशा रहती है। एक हेक्टेयर में सहजन के लगभग 400 से 500 पेड़ लगाए जा सकते हैं। इसकी प्रति हेक्टेयर लागत 70-75 हजार रुपये बैठती है। सहजान के एक पेड़ से एक सीजन में औसतन 200 से 300 फलियाँ प्राप्त होती हैं। इनका वजन 40 से 50 किलो तक होता है। इससे प्रति हेक्टेयर 1600 से 2000 किलो तक सहजन पैदा होता है जो बाजार में एक से दो लाख रुपये तक बिकता है। लेकिन चूँकि सहजन की उपज साल में दो बार मिलती है और इसकी किस्में कम से कम पाँच साल तक उपज देती हैं लिहाजा सहजन की खेती कम लागत में शानदार मुनाफा यानी 'एक लागत में दस उपज' देने वाली फसल है।

पौष्टिक मान: सहजन की पत्तियां, छाल और फलियाँय मधुमेह, गैस्ट्रिक, मलेरिया, अस्थमा, मिर्गी, यौन संचारी रोग, अल्सर मूत्र रोग, फंगल इम्फेक्शन सहित सैकड़ों रोगों की रोकथाम में किया जा सकता है। सहजन एक ऐसा पौधा है जो कई तरह के पोषक तत्वों को अकेले अपने में समेटे हुए है। जिसकी वजह से इसे कुपोषण को दूर करने में सबसे मुफीद माना जाता है। तालिका में प्रदर्शित पोषक तत्वों की यह मात्रा प्रति 100 ग्राम फली या पत्तियों के अनुसार निर्धारित की गई है। अगर हम प्रति दिन इसकी पत्तियों का चूर्ण प्रयोग करें तो बीमारियाँ होने की संभावना कम हो जाती है।

तत्व का नाम	फली	पत्ती	पत्ती के पाउडर में
खाया जाने वाला भाग प्रतिशत में	83	75	100
जल (प्रतिशत में)	86.9	75	7.5
ऊर्जा (किलो कैलोरी में)	26	92	205
प्रोटीन (ग्राम में)	2.5	6.7	27.1
वसा (ग्राम में)	0.1	1.7	2.3
कार्बोहाइड्रेट (ग्राम में)	3.7	13.4	38.2
रेशा (ग्राम में)	4.8	0.9	19.2
खनिज तत्व (ग्राम में)	2.0	2.3	--
कैल्सियम (मिलीग्राम में)	30	440	2003
मैग्नीशियम	24	24	368
फास्फोरस (मिलीग्राम में)	110	70	204
पोटैशियम (मिलीग्राम में)	259	259	1324
कॉपर (मिलीग्राम में)	3.1	1.1	0.57
आयरन (मिलीग्राम में)	5.3	7.0	28.2
सल्फर (मिलीग्राम में)	137	137	870
बीटा कैरोटीन - विटामिन ए (मिलीग्राम में)	0.11	6.8	16.3
थाइमिन -विटामिन बी-1 (मिलीग्राम में)	0.05	0.21	2.64
राइबोफ्लेविन विटामिन बी 2 (मिलीग्राम में)	0.07	0.05	20.5
नियासिन (मिलीग्राम में)	0.2	0.8	--
विटामिन सी (मिलीग्राम में)	120	220	17.3
विटामिन ई (मिलीग्राम में)	---	--	113

सुरजीत पाण्डेय केवीके, जालौन
बाँदा कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, बाँदा, उ.प्र.

जलवायु परिवर्तन का कृषि पर प्रभाव और उसके बचाव के उपाय

आज इस दुनिया में शायद ही ऐसा कोई होगा, जिसमे जलवायु परिवर्तन का प्रभाव न पड़ा हो जलवायु परिवर्तन में हर किसी को चोट पहुचाने की छमता है लेकिन किसानो के इसके चपेट में आने की सम्भावना अधिक रहती है, और वे इससे सर्वाधिक प्रभावित होते भी है।

भारत में कृषि प्रमुखतः मौसम पर आधारित है और जलवायु परिवर्तन की वजह से होने वाले मौसमी परिवर्तन की वजह से होने वाले मौशामी बदलावों का इस पर बेहद असर पड़ता है .जलवायु परिवर्तन होने कारन हुई तापमान की बृद्धि से कृषि प्रभावित होती है ,इसलिए यह जरुरी है की किसानो को यह पता होना चाहिए की समस्या का सामना कैसे किया जाए।

लगातार बढ़ रही खाद्यान्नों की मांग

वैश्विक आबादी बढ़ने के साथ साथ खाद्यान्नों की वैश्विक मांगो में भी इजाफा हो रहा है। खाद्य अवं कृषि संगठन (FAO) का अनुमान है 2050 तक इसका मांग दो गुना हो सकती है इसलिए खाद्यान्नों और मांग के बीच का जो अंतर है उसको कम करने की सबसे बड़ी चुनौतिया है दूसरी ओर जलवायु परिवर्तन से निपटने की।

चिंताएं-1 असमान वर्षा की वजह से हमारे देश में फसलो का ख़राब होना आम सा हो गया है, कई गावो में देखने को मिलता है पूरी की पूरी फसल असमान वर्षा की वजह से नस्त हो जाती है और किसानो तथा पशुओ का पेट भर पाना एक बड़ी चुनौती बन गया है।

2. किसानों को होने वाले नए परिवर्तनों को अपनाने में भी कठिनाई या समस्या उत्पन्न होती है, हर मौसम में अलग अलग फसल का चुनाव करना पड़ता है या उनका सम्मिश्रण करना पड़ता है जिससे किसानो अधिक खर्च उठाना पड़ता है और फसल मौसम के इस परिवर्तन से प्रभावित होने की वजह से किसानो को भुखमरी जैसी समस्या का सामना करना पड़ता है।

भारत देश इस मामले में भाग्यशाली है जिसके हिस्से में मानसून की अच्छी वर्षा आती है लेकिन बढ़ते तापमान और जलवायु के परिवर्तन में लगातार बढोत्तरी एक चिंता का विषय बना हुआ है।

वैश्विक जलवायु जोखिम सुचनांकः 2019 में भारत को 14वें स्थान पर रखा गया था इस रैंकिंग में हमारे चार पडोशी देशो को उचे स्थान में रखा गया था ,म्याम्बेर तीसरे ,बांग्लादेश सातवे ,पाकिस्तान आठवे ,और नेपाल को चौदहवे स्थान में थे इससे यह स्पस्ट होता है की भारत के ये चार पडोशी देश चरम मौसमी घटनाओ से अधिक प्रभावित है।

यह सुचनांक मौत और आर्थिक नुकसान के मामले में चरम मौसमी घटनाओ (तूफान ,भीषण गर्मी ,बाढ़ ,तेज वर्षा ,असमान वर्षा ,) इत्यादि के मात्रात्मक प्रभाव का विश्लेषण करता है इस प्रभावों का लेखा जोखा और साथ ही सम्बंधित शर्तो के साथ रखता है

सुचनांक रिपोर्ट में इस बात का सुझाव दिया गया है की कोटिवास जलवायु शिखर सम्मलेन में वैश्विक अनुकूलन लक्ष्य और अनुकूलन संचार दिशा निर्देशन सहित पेरिस समझौते के क्रियान्वयन के लिए आवश्यक नियम पुस्तिका को अपनाया जाना चाहिए।

जलवायु परिवर्तन का भारत में प्रभाव

भारत की लगभग 120 मिलियन हेक्टेयर भूमि ऐसी है जो किसी न किसी प्रकार की कमी से ग्रस्त है लघु एवं सीमांत किसान किसान इससे ज्यादा प्रभावित है लघु अवं सीमांत किसान इससे ज्यादा प्रभावित है। भारत की कुल कृषि भूमि का 67% भाग मानसून पर निर्भर है कृषि की मौसम पर अत्यधिक निर्भरता में लागत अधिक आती है विशेष कर मोटे अनाजो पर जिनकी खेती अधिकतर उन क्षेत्रो में होती है जो वर्षा पर निर्भर रहते है

जलवायु परिवर्तन से बचाव के उपाय

1. संरक्षित खेती का बढ़ावा देना चाहिए।
2. शुष्क खेती का बढ़ावा देना चाहिए।
3. अनुसन्धान कार्यक्रमों के तहत शुष्क खेती में पुनः ध्यान देने की आवश्यकता है, शुष्क खेती अनुसन्धान कार्यो का बढ़ावा देना चाहिए।
4. फसल चक्र में कुछ फेर बदल के बारे में सोचना चाहिए ताकि जलवायु परिवर्तन का प्रभाव ज्यादा फसलो में न पड़े। ऐसा करने से 50% तक जलवायु परिवर्तन से होने वाली छाती को कम किया जा सकता है।
5. सरकार को किसानो को मिलने वाले फसल बीमा का कवरेज और उन्हें दिया जाने वाला कर्ज का दायरा में बिस्तर करना चाहिए।

वर्तमान में चल रहे जलवायु परिवर्तन के दौर में जलवायु रुपंतार्ण के लिए जलवायु न्याय की आवश्यकता होगी जिसमे नीतिगत सुधर को सम्मिलित करना चाहिए जिससे भारत को जलवायु परिवर्तन के प्रति लचीला बनाने में मदद कर सकते है।

कृषि वानिकी में सुदूर संवेदन का महत्व

आंचल दुबे (शोध छात्रा) वानिकी विभाग कृषि विज्ञान संस्थान बुंदेलखंड विश्वविद्यालय झांसी (उ.प्र.)

धन्य कुमार (शोध छात्र) अनुवांशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग कृषि विज्ञान संस्थान बुंदेलखंड विश्वविद्यालय झांसी

डॉ. आस्था गुप्ता (सहायक प्राध्यापक) वानिकी विभाग कृषि विज्ञान संस्थान बुंदेलखंड विश्वविद्यालय झांसी (उ.प्र.)

परिचय: विविध कृषि जलवायु परिस्थितियाँ बड़ी संख्या में फसलों की खेती को जन्म देती हैं। पर्यावरणीय प्रभावों के सन्दर्भ में दीर्घकालिक स्थिरता की जानकारी के लिए विभिन्न और अपरिवर्तनीय संसाधनों की मौसमी और वार्षिक जानकारी की आवशयकता होती है। विविध फसल उत्पादन परिस्थितियां और जलवायु स्थिति की अनिश्चितताएं, समय और स्थान के पैमाने पर फसलों के बारे में अधिक सूक्ष्म जानकारी की मांग करती हैं। सुदूर संवेदन (IAST% sudura savedana) (अंग्रेजी: remote sensing) का सामान्य अर्थ है किसी वस्तु के सीधे संपर्क में आये बिना उसके बारे में आँकड़े संग्रह करना।

पिछले दो दशकों में, सुदूर संवेदन (रिमोट सेंसिंग) और जीआईएस तकनीकों का उपयोग फसल पहचान, क्षेत्र आकलन, फसल स्थिति आकलन, मृदा नमी आकलन, उपज आकलन, कृषि जल प्रबंधन,कृषि सलाह और कृषि मौसम विज्ञान जैसी कृषि अनुप्रयोगों के अंवेशन हेतु किया गया है।कृषि में, अर्थात फसलों और मृदाओं में, सुदूर संवेदन का अनुप्रयोग अत्यंत जटिल है क्योंकि जैविक पदार्थ और मृदाओं की अत्यधिक गतिशील और अंतर्निहित जटिलता होती है। हालांकि, कृषि संसाधन सर्वेक्षण में पारंपरिक विधियों की तुलना में सुदूर संवेदन तकनिकी कई लाभ प्रदान करती है। इन लाभों में शामिल हैं,

1. संक्षिप्त दृष्टिकोण कई क्षमता
2. तीव्र सर्वेक्षण की संभावना
3. परिवर्तनों का पता लगाने के लिए बार - बार कवरेज की क्षमता,
4. कम लागत वाली भागीदारी
5. उच्च सटीकता
6. अधिक जानकारी के लिए मल्टीस्पेक्ट्रल डेटा का उपयोग इत्यादि।

सुदूर संवेदन प्रौद्योगिकी ने फसल प्रबंधन में सुधार, पर्यावरणीय स्थितियों की निगरानी और संसाधन उपयोग को अनुकूलित करने के लिए अभिनव समाधान प्रदान करके स्वयं को एक परिवर्तनकारी शक्ति के रूप में स्थापित किया है।कृषि में सुदूर संवेदन के अनुप्रयोग से पारंपरिक कृषि पद्धतियों में परिवर्तन आ सकता है, तथा परिशुद्ध कृषि और टिकाऊ संसाधन प्रबंधन का एक नया युग शुरू हो सकता है।

भारत में सुदूर संवेदन के सारे कार्यों का आयोजन एवं निरीक्षण राष्ट्रीय सुदूर संवेदन केन्द्र, हैदराबाद द्वारा किया जाता है जो भारत सरकार के विज्ञान मंत्रालय के अंतरिक्ष विभाग के अंतर्गत काम करने वाली एजेंसी है।

कृषि वानिकी में रिमोट सेंसिंग की महत्वपूर्ण भूमिकाएं हैं, जिनमें फसल के स्वास्थ्य की निगरानी, मिट्टी की नमी का आकलन, जल प्रबंधन में सुधार, वन स्वास्थ्य और आवरण की निगरानी, कीट व बीमारियों का प्रारंभिक पता लगाना, और फसल की उपज व गुणवत्ता का पूर्वानुमान शामिल है। यह तकनीकी उपग्रहों और ड्रॉनों के माध्यम से बड़े क्षेत्रों का डाटा एकत्र करती है, जिससे संसाधनों का कुशल उपयोग होता है और सतत कृषि पद्धतियों को बढ़ावा मिलता है।

सुदूर संवेदन के महत्व एवं उपयोग: सुदूर संवेदन एक ऐसी तकनीक है,जो उपग्रहों और हवाई जहाजों का उपयोग करके पृथ्वी की सतह से परावर्तित या उत्सर्जित ऊर्जा का विश्लेषण करती है, जिससे प्राकृतिक संसाधनों, कृषि, शहरी विकास, और आपदा प्रबंधन जैसे क्षेत्रों में महत्वपूर्ण जानकारी मिलती है. इसका महत्व यह है कि यह बड़े क्षेत्रों का व्यापक कवरेज प्रदान करती है, कम समय में डेटा संग्रह करती है, और उन दुर्गम क्षेत्रों की भी जानकारी प्राप्त कर सकती है जहाँ जाना मुश्किल हो। इसके मुख्य उपयोगों में फसलों की निगरानी, बाढ़ और जंगल की आग जैसी आपदाओं का प्रबंधन, जलवायु परिवर्तन का अध्ययन, और खनिजों की पहचान शामिल हैं।

मिट्टी की स्थिति का आकलन: रिमोट सेंसिंग (सुदूर संवेदन) तकनीक मिट्टी की नमी, कार्बनिक पदार्थ और पीएच जैसे महत्वपूर्ण मापदंडो की लगातार निगरानी करने में योग्य होते हैं। इससे किसानों को सटीक सिंचाई योजना बनाने में मदद मिलती है।

कीटों और रोगों की पहचान: सुदूर संवेदन उपग्रह चित्रों और भू- स्थानिक विश्लेषण का उपयोग करके बड़े क्षेत्रों में फसल रोगों या कीटों के शुरूआती चरणों का पता लगा सकते हैं। इससे किसानों को नुकसान से पहले निवारक उपाय करने का अवसर मिलता है।

व्यापार कवरेज: यह तकनीक एक ही बार में बड़े भौगोलिक क्षेत्रों का अध्ययन करने में योग्य है, जो पारंपरिक तरीकों से संभव नहीं है।

जटिल डेटा एकीकरण: जीआईएस (GIS) (भू-सूचना प्रणाली) के साथ मिलकर यह विभिन्न डेटा परतों को एकीकृत करने में मदद करता है।

आपदा प्रबंधन: बड़े क्षेत्रों में फैली बाढ़ और जंगलों की आग जैसी आपदाओं का आसानी से पता लगाया जा सकता है, जिससे बचाव अभियान अधिक कुशल बनते हैं।

वनस्पति मानचित्रण और सूची: वन प्रकार, पेड़ प्रजातियों के वितरण और ऊँचाई का आकलन करने के लिए इसका उपयोग किया जाता है।

पैदवार और मौसम का पूर्वानुमान: मौसम के मापदंडो और वर्णक्रमिय सूचकांकों के आधार पर रिमोट सेंसिंग डेटा का उपयोग फसल की पैदावार और उत्पादन का पूर्वानुमान लगाने के लिए किया जाता है।

पहुंच से बाहर के क्षेत्रों का अध्ययन: यह खतरनाक, दुर्गम या दूरस्थ क्षेत्रों से भी जानकारी एकत्र कर सकती है, जैसे कि सीमावर्ती क्षेत्र या दूरस्थ जंगल।

वन आवरण और स्वास्थ्य की निगरानी: सुदूर संवेदन का उपयोग वन क्षेत्र के आवरण की निगरानी के लिए किया जाता है। यह वन स्वास्थ्य, आग के प्रभाव और जैव विविधता में बदलाव का आकलन करने में मदद करता है।

डेटा की सटीकता = सुदूर संवेदन द्वारा प्राप्त डेटा अक्सर अधिक सटीक और विश्वसनीय होता है।

निष्कर्ष: कृषि में रिमोट सेंसिंग के अनुप्रयोग ने सटीकता, दक्षता और स्थिरता का एक नया दौर शुरू किया है। यह तकनीक कृषि उद्यमों को वास्तविक समय के आंकड़ों के आधार पर सूचित निर्णय लेने, संसाधनों के उपयोग को अनुकूलित करने और पर्यावरणीय प्रभाव को कम करने में योग्य बनाती है। जैसे-जैसे तकनीक आगे बढ़ रही है, कृषि में सुदूर संवेदन की भूमिका बढ़ती ही जा रही है। बढ़ती वैश्विक आबादी को भोजन उपलब्ध कराने की जटिलताओं से निपटने और पर्यावरण संरक्षण सुनिश्चित करने के लिए आधुनिक कृषि के लिए सुदूर संवेदन को अपनाना एक आवश्यकता है।सुदूर संवेदन एक गेम चेंजर तकनीक है, जो किसानों और वन प्रबंधकों को बिना भौतिक सम्पर्क बनाए पृथ्वी की सतह के बारे में महत्वपूर्ण जानकारी प्रदान करती है, जिससे, कृषि-वानिकी (एग्रोफारेस्टरी) प्रणालियों की दक्षता और स्थिति में वृद्धि होती है। सुदूर संवेदन (आरएस) तकनीकी में अपनी बहु-स्पेक्टरमिक, विशाल क्षेत्र और दोहरावदार कवरेज के कारण जिला और क्षेत्रीय स्तर प्र फसल क्षेत्र का अनुमान लगाने और उत्पादकता का पूर्वानुमान लगाने की क्षमता है।

बीज उपचार, करने की विधियां और महत्व

अनुराग सिंह, आशुतोष यादव, विनीत कुमार
मृदा विज्ञान और कृषि रसायन विभाग
आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)

बीजोपचार क्या है?

बीजों को उपचारित/उपचार कैसे करें, बीज उपचार हेतु रसायन, बीजोपचार के प्रकार, बीजोपचार से आप कौन-कौन से कीटों और रोगों को नियंत्रित कर सकते हो एवं इसी के साथ बीजों की अंकुरण क्षमता को कैसे बड़ा सकते है

खेती में बीज उपचार का महत्व

खेती में सफलता के लिए उपयुक्त बीज चुनना ही महत्वपूर्ण है, लेकिन इसके साथ ही बीजों का सही तरीके से उपचार करना भी जरूरी है। आज के युग में, खेती में प्रगति के लिए वैज्ञानिक तथा उन्नति तकनीकी से ही लाभ संभव है। इसलिए, उन्नत व उत्तम गुणवत्ता वाले बीजों का चुनाव करने के साथ-साथ, उन्हें पूरी तरह से उपचारित करना भी अत्यंत महत्वपूर्ण है। आधुनिक समय में, उन्नत किस्मों के शुद्ध और उँच्च गुणवत्ता वाले बीजों की बुआई करना अत्यंत महत्वपूर्ण है। इसके लिए बीजों को सही ढंग से उपचारित करना अनिवार्य है ताकि वे स्वस्थ रहें और अच्छी खासी पैदावार दें। समस्या यह है कि अधिकांश किसान बीजाई करते हैं लेकिन उन्हें बीजों का उचित उपचार करने की जानकारी नहीं होती, जिससे उनकी फसल की पैदावार में 8-10 प्रतिशत की कमी हो सकती है। इसलिए, इस महत्वपूर्ण प्रक्रिया को समझाने और उसे अपनाने के लिए जागरूकता फैलाने की आवश्यकता है, किसानों को यह जागरूकता मिलनी चाहिए कि उन्हें अच्छे बीजों का चयन करने के साथ-साथ उन्हें उसे सही ढंग से उपचारित भी करना चाहिए ताकि उनकी मेहनत और खेती का संतुलन बना रहे।

बीज उपचार क्या है?

बीज उपचार एक विशेष प्रक्रिया है जिसमें बीजों को विभिन्न रोगों और कीटों से मुक्त करने के लिए उपचारित किया जाता है। यह किसानों को कम लागत में अधिक उत्पादन करने में सहायता प्रदान करता है।

बीज उपचार क्यों आवश्यक है

1. प्रारंभिक सुरक्षा यह बीजों को पौधों की प्रारंभिक सुरक्षा प्रदान करता है, जिससे वे स्वस्थ और मजबूत होते हैं।
2. रोग और कीटों से संरक्षण बीज उपचार रोगों और कीटों के प्रसार को रोकता है, जिससे पौधों को सुरक्षा मिलती है।
3. पौधों की वृद्धि; यह उपाय बीजों की अच्छा अंकुरण और पौधों की वृद्धि को बढ़ावा देता है।
4. बीज की लंबी उम्र; बीज उपचार से बीजों को लंबे अवधि तक सुरक्षित रखा जा सकता है
5. सुरक्षा और वृद्धिः बीज उपचार से बीजों को सड़ने से बचाया जा सकता है, जिससे प्रति एकड़ बीजों की मात्रा कम लगती हैं।

बीजोपचार की विधियां

बीजों को कीटों और रोगों के नियंत्रण के साथ बीजों के अच्छे अंकुरण के लिए और निम्नलिखित बीजोपचार की विधिओं का उपयोग किया जाता है-

1. सुखी विधि

बीजों के उपचार की सुखी विधि इस विधि में, उपचारित करने के लिए बीजों को उचित मात्रा में दवा लगाई जाती है। बीज और दवा की ठीक मात्रा को प्लास्टिक ड्रम में डालकर 10-15 मिनट तक घुमाया जाता है, जिससे दवा बीज को अच्छे से लग जाती है। यदि ड्रम नहीं मिलता है, तो साफ बर्तन में बीज और उपयुक्त रसायन या जैव- नियंत्रक को मिलाकर उपचारित किया जा सकता है। फिर उपचारित बीजों को छायादार स्थान में सुखाया जाता है और फिर उन्हें तुरंत बोया जा सकता है।

2. गीली विधि

बीजों के उपचार की गीली विधि इस विधि में, उपचारित करने के लिए बीजों को पानी में घुलनशील दवाओं के साथ डुबोया जाता है। उपचार के लिए मिट्टी या प्लास्टिक के बर्तन में दवा को मिलाकर एक घोल बनाया जाता है। फिर बीजों को 10-15 मिनट के लिए इस घोल में डालकर रखा जाता है। उसके बाद, बीजों को बाहर निकालकर उन्हें धूप में सुखाया जाता है और फिर उन्हें बोया जा सकता है।

3. जीवाणु कल्चर विधि

जीवाणु कल्चर से बीजों का उपचार इस विधि में, जीवाणु कल्चर (राईजोबियम, ऐजोटोबेक्टर, पी.एस. बी. कल्चर) का उपयोग किया जाता है। एक लीटर पानी में आवश्यकतानुसार गुड़ डालकर इसे गरम किया जाता है। फिर इस गरम घोल में 600 ग्राम कल्चर (3 पैकेट) मिलाकर तैयार घोल को बीजों का उपचार करने के लिए प्रयुक्त किया जाता है, जिससे उन्हें अधिक संवर्धन मिल सके।

बीजों के उपचारित करने हेतु उपयुक्त रसायन

बीजों को उपचारित करने के लिए उपयुक्त फफूंदनाशी और कीटनाशक निम्न है -

1. **फफूंदनाशी (ट्राइकोडर्मा विरिडी):** 6 मिली/किलो से बीजों को उपचारित करें।
2. **फफूंदनाशी (कार्बोक्सिन 37.5% + थिरम 37.5% डीएस):**2-3 ग्राम/किलो से बीजों को उपचारित करें।
3. **फफूंदनाशी (कार्बेन्डाजिम 12% + मैनकोजेब 63% WP):** 2-3 ग्राम/किलो से बीजों को उपचारित करें।
4. **फफूंदनाशी (मिथाइल 45%+ पायराक्लोस्ट्रोबिन 5% एफएस):** 2-3 मिली/किलो से बीजों को उपचारित करें।
5. **फफूंदनाशी (एज़ोक्सिस्ट्रोबिन 2.5% + थियोफैनेट मिथाइल 11.25% + थियामेथोक्सम 25% एफएस):** 5 मिली/किलो से बीजों को उपचारित करें।

बीज उपचार के लाभ

फसल से अच्छा उत्पादन प्राप्त करने के लिए बीजों का उपचार करना बहुत ही आवश्यक है तथा इसके लाभ निम्न हैं-

1 **अंकुरण में सुधार:** बीजों का अंकुरण अच्छा होता है जो पौधों की स्वस्थ विकास में मदद करता है।

2 **रोगों का नियंत्रण:** बीज उपचार फसल की बीमारियों के प्रसार को रोकता है और पौधों को सुरक्षा प्रदान करता है।

3. **कीटों से नियंत्रण:** यह बीजजन्य कीटों से नियंत्रण प्रदान करता है, जो फसल को सुरक्षित रखता है

4. **मृदाजनित रोगों का नियंत्रण:** बीज उपचार मृदाजनित रोगों से नियंत्रण प्रदान करता है, जिससे फसल की सुरक्षा बनी रहती है।

5. **बीज सुरक्षा:** यह बीजों को सड़ने और अंकुरों के झुलसने से बचाता है।

6. **भंडारण कीड़ों की नियंत्रण:** बीज उपचार से संग्रहण कीड़ों से सुरक्षा प्रदान करता है।

निष्कर्ष

बीज उपचार खेती में एक अत्यंत महत्वपूर्ण प्रक्रिया है जो किसानों को उच्च गुणवत्ता और ज्यादा उत्पादन प्रदान करने में मदद करता है। सही बीज चयन के साथ-साथ, उन्हें सही ढंग से उपचारित करना भी अत्यंत आवश्यक है। बीज उपचार से प्रारंभिक सुरक्षा, रोग और कीटों का नियंत्रण, पौधों की अच्छी वृद्धि, बीज की लंबी उम्र, सुरक्षा और वृद्धि, और भंडारण कीड़ों से सुरक्षा प्राप्त की जा सकती है। इसलिए, किसानों को इस महत्वपूर्ण प्रक्रिया की समझ और उसका उचित अनुप्रयोग करने की जागरूकता बनाए रखना चाहिए जिससे किसानों को अच्छा उत्पादन और लाभ की प्राप्ति होती हैं।

लेजर लेवलर तकनीक से पानी की बचत एवं उपज में बढ़त

प्रवेश कुमार, प्रदीप कुमार एवं सर्वजीत

विषय वस्तु विशेषज्ञ मृदा विज्ञान, फसल सुरक्षा एवं बीज विज्ञान, कृषि विज्ञान केंद्र, सोहना, सिद्धार्थनगर आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)

फसल की अच्छी पैदावार के लिए खेतों का समतल होना बहुत आवश्यक हैद्य खेत की असमतलता, मृदा में नमी एवं पोषक तत्वों के वितरण को प्रभावित करती है, जिससे बीज के अंकुरण और फसल की उपज प्रभावित होती हैद्य जहाँ सतही सिंचाई की जाती है, वहां उच्च स्तरीय दक्षता के लिए भूमि का समतल होना अति आवश्यक है जो ज्यादा जल-उपयोग दक्षता और फसल उपज सुनिश्चित करता है।

खेत को समतल करने की प्रक्रिया मृदा एवं फसल प्रबंधन की महत्वपूर्ण विधि है? असमतल खेतों की सिंचाई में पानी एवं समय दोनों अधिक लगते हैं? और जुताई एवं फसल बुवाई में भी देरी होती है। जिससे उत्पादन लगत बढ़ जाती है और उपज भी कम होती है? पहले जहां खेतों को समतल करने के लिए परंपरागत तरीके अपनाए जाते थे जैसे पटेला, ट्रेक्टर लेवलर, जिसमें समय व श्रम अधिक लगता था? लेकिन अब आधुनिक कृषि यंत्रों की मदद से खेत को समतल करना काफी आसान हो गया है? लेजर लैंड लेवलर खेत को समतल को करने वाला ऐसा ही यंत्र है जिससे खेत को समतल करने में समय एवं श्रम दोनों की बचत होती है।

खेत समतलीकरण के प्रमुख उद्देश्य

निम्नलिखित उद्देश्यों की पूर्ति के लिए खेतों को समतल किया जाता है -

* सिंचाई करने में लगने वाले समय एवं पानी की बचत
* खेत में पानी का समान वितरण
* कम पानी से अधिक उपज
* जल संरक्षण में उपयोगी
* फसलों के लिए समान नमी
* खेत में अतिरिक्त जल संचय में कमी
* उचित जल निकास व्यवस्था
* मृदा अपरदन एवं जल जमाव की समस्याओ के समाधान

लेजर लेवलर तकनीक द्वारा खेत का समतलीकरण

लेजर लेवलर का उपयोग भूमि समतलीकरण के लिए पहली बार 1970 में हुआ था। लेजर लेवलिंग जल उपयोग को 20-30 त्न तक कम कर सकता है तथा फसल उत्पादन में 10-20त्न की वृद्धि होती है। लेजर से खेत समतलीकरण की प्रक्रिया को प्रारम्भ करने से पहले खेत की जुताई करना जरुरी है। यह एक लेजर निर्देशित परिशुद्धता लेवलिंग तकनीक है जिसका उपयोग 2 सेमी के भीतर मैदान पर वांछित ग्रेड के साथ बहुत ही बढ़िया लेवलिंग प्राप्त करने के लिए किया जाता है। इसके अंतर्गत खेत को इस प्रकार परिवर्तित किय जाता है की 0 से 0.2% का एक स्थिर ढलान बन जाए। इस पद्धति में अधिक हॉर्स पॉवर वाले ट्रेक्टर और मृदा ले जाने वाले उपकरण की आवशकता होती है। विभिन्न प्रकार की भूमि समतलीकरण की तकनीक में विभिन्न प्रकार के औजार तथा विविध संचालन, समय तथा परिशुद्धि वाले अवस्था की आवश्यकता होती है

लेजर लेवलर तकनीक से भूमि समतलीकरण के लाभ

दूसरे भूमि समतलीकरण की विधियों की अपेक्षा लेजर लेबलर तकनीक से भूमि समतलीकरण के लाभ निम्लिखित है-

* सिंचाई में लगने वाले जल तथा समय में कमी
* पूरे खेत में एक समान पानी का वितरण
* फसल के लिए एक समान नमी युक्त वातावरण
* कम बीज दर, उर्वरक, रसायन और ईंधन की कम आवश्यकता
* खेती योग्य भूमि का क्षेत्र लगभग 3-4 प्रतिशत बढ़ जाता है
* फसल के एक सामान परिपक्वता में वृद्धि होती है
* जल उपयोग की दक्षता बढ़ जाती है
* फसल का उत्पादन बढ़ जाता है
* लवणीय वातावरण के प्रबंधन में सहायता मिलती है
* खरपतवार की समस्या को काम करता है तथा खरपतवार नियंत्रण की दक्षता को बेहतर करता है
* यह लवण प्रभावित मिट्टी में घुलनशील लवणों के वितरण में मदद कर सकता है उर्वरक उपयोग की दक्षता में वृद्धि करता है

पूर्वी यूपी के किसानों के लिए समृद्धि के द्वार खोलेगा कृषि विवि : योगी

कुशीनगर। मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ ने रविवार को कहा कि पूर्वी यूपी के लिए कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय महत्वपूर्ण उपलब्धि है। इसका बिहार के लोगों को भी लाभ मिलेगा। यह विवि रोजगार का द्वार खोलेगा और अन्नदाता किसानों के लिए वरदान साबित होगा। उन्होंने अफसरों से कहा कि जल्द से जल्द निर्माण कार्य पूरा कराकर जुलाई से पढ़ाई शुरू कराएं। बिहार में चुनावी सभा के बाद कुशीनगर पहुंचे सीएम ने इससे पहले बौद्ध धर्मगुरु भदंत ज्ञानेश्वर को श्रद्धांजलि दी।

सीएम योगी रविवार को कुशीनगर में निर्माणाधीन महात्मा बुद्ध कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय का निरीक्षण किया। इस दौरान उन्होंने कहा कि कृषि की दृष्टि से कुशीनगर और आसपास का क्षेत्र अत्यंत समृद्ध है। प्रधानमंत्री के मार्गदर्शन में विकास के लिए इस क्षेत्र को बेहतर कनेक्टिविटी भी मिल गई है। ऐसे में यह कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय नागरिकों, अन्नदाता किसानों और गन्ने की उपज करने वालों की समृद्धि के लिए मील का पत्थर साबित होगा। पूर्वी उत्तर प्रदेश के लिए बड़ी और महत्वपूर्ण उपलब्धि के रूप में यह विश्वविद्यालय डबल इंजन सरकार की तरफ से अन्नदाता किसानों के लिए उपहार है। यह विश्वविद्यालय किसानों की समृद्धि का द्वार खोलेगा और नौजवानों को रोजगार के अवसर उपलब्ध कराएगा। निर्माण में गुणवत्ता पर विशेष ध्यान देने के लिए कार्यदायी संस्था के अधिकारियों को निर्देश दिया। उन्होंने निर्माण की प्रगति देखने के बाद कहा कि कोशिश हो कि भवन का निर्माण तय समय सीमा अक्टूबर-2026 से पहले ही पूरा करा लिया जाए ताकि नए सत्र से पठन-पाठन शुरू हो सके।

जलवायु परिवर्तन और किसान की चुनौती

अनुराग इंटीग्रल इंस्टीट्यूट ऑफ एग्रीकल्चरल साइंस एंड टेक्नोलॉजी (IIAST) इंटीग्रल यूनिवर्सिटी, लखनऊ
यथार्थ मिश्रा (PhD scholar Genetics and Plant Breeding) आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)
कुलदीप कुमार विश्वकर्मा (आनुवंशिकी और पादप प्रजनन)
अभिनय YP-II (ICAR-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी)

भूमिका

कृषि भारत की अर्थव्यवस्था की रीढ़ है। लगभग 60त्न से अधिक जनसंख्या आजीविका के लिए सीधे या परोक्ष रूप से कृषि पर निर्भर करती है। लेकिन आज जिस गंभीर संकट का सामना दुनिया कर रही है, वह है जलवायु परिवर्तन। यह केवल मौसम में बदलाव नहीं है बल्कि धरती के पारिस्थितिकी तंत्र, जैव विविधता, और खाद्य सुरक्षा को गहराई से प्रभावित करने वाला दीर्घकालिक खतरा है। किसानों के लिए यह सबसे बड़ी चुनौती इसलिए है क्योंकि उनकी जीविका पूरी तरह प्रकृति और मौसम पर निर्भर करती है।

जलवायु परिवर्तन: कारण और स्वरूप

जलवायु परिवर्तन का प्रमुख कारण ग्रीनहाउस गैसों (GHGs) का अत्यधिक उत्सर्जन है। औद्योगिक क्रांति के बाद से ऊर्जा उत्पादन, वाहनों का धुआँ, कोयला व पेट्रोलियम उत्पादों का अत्यधिक उपयोग, और वनों की कटाई ने वातावरण में कार्बन डाइऑक्साइड, मीथेन व नाइट्रस ऑक्साइड की मात्रा बढ़ा दी है।

इसके परिणाम स्वरूप

- धरती का औसत तापमान बढ़ रहा है (ग्लोबल वार्मिंग)
- हिमनद तेजी से पिघल रहे हैं
- वर्षा का पैटर्न अनियमित हो गया है
- समुद्र का स्तर बढ़ रहा है
- बाढ़, चक्रवात, सूखा और गर्म हवाओं जैसी प्राकृतिक आपदाएँ बढ़ गई हैं

भारत जैसे कृषि प्रधान देश में यह संकट और भी गहरा है क्योंकि यहाँ कृषि ज्यादातर मानसून पर आधारित है।

किसानों के सामने चुनौतियाँ

1. उत्पादन पर सीधा असर : जलवायु परिवर्तन के कारण कभी अत्यधिक वर्षा तो कभी सूखा पड़ता है। इससे फसलों की पैदावार कम हो जाती है। उदाहरण के लिए, धान और गेहूँ जैसी मुख्य फसलें पर्याप्त नमी और संतुलित तापमान चाहती हैं। परंतु अनियमित मौसम के कारण उपज में 20-30% तक की गिरावट देखने को मिलती है।

2. बाढ़ और सूखा : भारत के कई हिस्सों में मानसून की अनियमितता के कारण किसान हर साल संकट झेलते हैं। एक ओर असम, बिहार और उत्तर प्रदेश में बाढ़ से खेत डूब जाते हैं, वहीं दूसरी ओर महाराष्ट्र, राजस्थान और बुंदेलखंड में सूखा पड़ता है।

3. कीट और रोग का प्रकोप : बढ़ते तापमान और आर्द्रता की वजह से कीटों और रोगों का प्रकोप तेजी से फैलता है। कपास, धान और सब्जी फसलों में रोगों की समस्या ज्यादा देखी जा रही है।

4. मिट्टी की उर्वरता पर असर : लगातार सूखा-बाढ़ और रसायनों के अंधाधुंध उपयोग से मिट्टी का पोषण स्तर घटता जा रहा है। इससे मिट्टी की जैविक गुणवत्ता और संरचना दोनों प्रभावित होती हैं।

5. पशुपालन और दुग्ध उत्पादन पर असर : किसानों की आय का बड़ा हिस्सा पशुपालन से आता है। लेकिन गर्म हवाओं और सूखे की वजह से चारे और पानी की कमी हो जाती है। गर्मी से पशुओं में दूध उत्पादन घट जाता है।

6. आर्थिक संकट : फसल खराब होने से किसान को पर्याप्त आय नहीं मिलती। परिणामस्वरूप वह कर्ज के बोझ तले दबता जाता है। कर्ज चुकाने में असमर्थ किसान आत्महत्या तक करने को मजबूर हो जाता है।

7. खाद्य सुरक्षा पर खतरा : यदि यही स्थिति बनी रही तो भविष्य में देश की खाद्य सुरक्षा पर भी गंभीर खतरा मंडराएगा।

समाधान और उपाय

1. जलवायु अनुकूल कृषि ङ्क सूखा और बाढ़ सहनशील किस्में विकसित करना। जल्दी पकने वाली फसलों का चुनाव करना। कृषि वैज्ञानिकों द्वारा सुझाई गई नई तकनीकें अपनाना।

2. फसल विविधिकरण ङ्क एक ही फसल पर निर्भर रहने के बजाय किसान को कई तरह की फसलें उगानी चाहिए। इससे यदि एक फसल नुकसान में जाती है तो दूसरी से आय प्राप्त हो सकती है।

3. जल संरक्षण तकनीकें : टपक सिंचाई, स्प्रिंकलर, वर्षा जल संचयन, तालाब और कुओं का पुनर्जीवन।

4. टिकाऊ और जैविक खेती : रासायनिक खाद और कीटनाशक के बजाय जैविक खाद और जैविक कीटनाशकों का प्रयोग करना चाहिए। इससे मिट्टी की उर्वरता बनी रहती है और उत्पादन दीर्घकालीन रूप से स्थिर होता है।

5. मौसम आधारित सलाह : आज मोबाइल और इंटरनेट के माध्यम से किसान को मौसम की सही जानकारी मिल सकती है। सरकार और निजी संस्थाएँ मौसम पूर्वानुमान के आधार पर किसानों को समय पर सलाह दे रही हैं।

6. सरकारी योजनाएँ

- **प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना:** प्राकृतिक आपदा से फसल खराब होने पर आर्थिक सहायता।
- **प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना:** "हर खेत को पानी" के तहत सिंचाई सुविधाएँ।
- **किसान क्रेडिट कार्ड (KCC):** किसानों को कम ब्याज पर ऋण।
- **राष्ट्रीय कृषि विकास योजना (RKVY):** आधुनिक तकनीक अपनाने हेतु सहयोग।

7. सामुदायिक भागीदारी ङ्क ग्रामीण स्तर पर किसानों को एकजुट होकर जल संरक्षण, भूमि सुधार और आपदा प्रबंधन के लिए कार्य करना चाहिए।

भविष्य की राह

जलवायु परिवर्तन को पूरी तरह रोका नहीं जा सकता, लेकिन इसके प्रभाव को कम किया जा सकता है। इसके लिए–

- ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन कम करना होगा।
- वनों की कटाई रोकनी होगी और अधिक पेड़ लगाने होंगे।
- अक्षय ऊर्जा (सौर, पवन, जलविद्युत) का उपयोग बढ़ाना होगा।
- किसानों को आधुनिक तकनीक और संसाधन उपलब्ध कराना होगा।

निष्कर्ष

जलवायु परिवर्तन केवल पर्यावरणीय समस्या नहीं है, बल्कि यह सामाजिक और आर्थिक संकट भी है। इसका सबसे ज्यादा बोझ किसानों पर पड़ता है, क्योंकि वे अपनी जीविका के लिए सीधे मौसम पर निर्भर हैं। यदि इस समस्या का समय पर समाधान नहीं किया गया तो भविष्य में खाद्य संकट गहरा सकता है। अतः आवश्यकता है कि सरकार, वैज्ञानिक, समाज और किसान सभी मिलकर सामूहिक प्रयास करें। जलवायु अनुकूल कृषि तकनीकों को बढ़ावा देना, प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण करना और किसानों को समय पर सहयोग देना ही इस चुनौती का समाधान है। यदि हम अभी ठोस कदम उठाते हैं तो न केवल किसान, बल्कि पूरी मानवता इस संकट से सुरक्षित रह सकती है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

समीर वर्मा पी.एच.डी. शोध छात्र फल विज्ञान विभाग
डॉ. भानू प्रताप प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष फल विज्ञान विभाग
डॉ. निरंजन सिंह असिस्टेंट प्रोफेसर फल विज्ञान विभाग
डॉ. अतुल यादव असिस्टेंट प्रोफेसर फल विज्ञान विभाग
डॉ. हितेस कुमार असिस्टेंट प्रोफेसर पोस्ट हार्वेस्ट विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रोद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज अयोध्या (उ.प्र.)

उत्तरप्रदेश के तराई क्षेत्रों में केले की खेती में इंटरक्रॉपिंग और मल्चिंग तकनीकों की भूमिका

परिचयः उत्तर प्रदेश का तराई क्षेत्र अपनी उर्वर दोमट मिट्टी, समुचित वर्षा और आर्द्र जलवायु के कारण केले (मुसा पैराडिसका एल.) की व्यावसायिक खेती के लिए अत्यंत उपयुक्त माना जाता है। यह क्षेत्र मुख्यतः लखीमपुर खीरी, बहराइच, पीलीभीत, श्रावस्ती और बलरामपुर जिलों में फैला हुआ है, जहाँ केले की खेती से किसानों की आय में निरंतर वृद्धि हो रही है। किंतु इन क्षेत्रों में अत्यधिक वर्षा, मिट्टी की नमी में असंतुलन, खरपतवार प्रकोप तथा पोषक तत्वों की असमान उपलब्धता जैसी समस्याएँ उत्पादन को प्रभावित करती हैं। ऐसी परिस्थितियों में इंटरक्रॉपिंग (अंतरफसली प्रणाली) और मल्चिंग (मिट्टी आवरण तकनीक) जैसी उन्नत कृषि तकनीकें अत्यंत लाभकारी सिद्ध हो रही हैं। इंटरक्रॉपिंग से भूमि उपयोग दक्षता बढ़ती है, मिट्टी की उर्वरता सुधरती है तथा किसानों को अतिरिक्त आय प्राप्त होती है। वहीं मल्चिंग तकनीक मिट्टी की नमी बनाए रखने, खरपतवार नियंत्रण, तथा तापमान संतुलन में सहायक होती है। इन दोनों तकनीकों का समन्वित उपयोग तराई क्षेत्र में केले की उत्पादकता, गुणवत्ता तथा आर्थिक स्थिरता को बढ़ाने की दिशा में एक प्रभावी कदम है।

इंटरक्रॉपिंग की अवधारणा : इंटरक्रॉपिंग एक उन्नत कृषि पद्धति है जिसमें मुख्य फसल के साथ एक या अधिक सहायक फसलें एक ही खेत में एक साथ उगाई जाती हैं, ताकि भूमि, जल, प्रकाश और पोषक तत्वों का अधिकतम उपयोग किया जा सके। इसका मुख्य उद्देश्य फसल विविधता बढ़ाकर उत्पादन और आय में वृद्धि करना है। केले की खेती में, जब पौधे प्रारंभिक अवस्था में होते हैं और उनके बीच पर्याप्त खाली स्थान रहता है, तब उस क्षेत्र में मूँग, उर्द, अदरक, हल्दी, प्याज जैसी अंतरफसलें लगाई जा सकती हैं। इससे मिट्टी की उर्वरता सुधरती है, खरपतवार नियंत्रण होता है और किसान को अतिरिक्त आय प्राप्त होती है। इंटरक्रॉपिंग प्रणाली कृषि को अधिक टिकाऊ, संसाधन-दक्ष और आर्थिक रूप से लाभकारी बनाती है।

उपयुक्त अंतरफसलें: ऐसी फसलें चुनें जिनका जीवनकाल कम हो और जो केले की पोषक तत्वों या प्रकाश की प्रतिस्पर्धा न करें।

क्रं.	अंतरफसल	अवधि (दिन)	विशेष लाभ
1.	मूँग / उर्द	65 से 70	नाइट्रोजन स्थिरीकरण
2.	अदरक / हल्दी	180 से 240	नमी प्रिय, उच्च लाभ
3.	प्याज / लहसुन	100 से 120	त्वरित आय, कीट नियंत्रण
4.	गेंदा / मिर्च	120	कीट प्रबंधन व सौंदर्य लाभ

इंटरक्रॉपिंग की उपयोगिताः इंटरक्रॉपिंग तकनीक किसानों के लिए अनेक दृष्टियों से उपयोगी सिद्ध होती है। सबसे पहले, यह भूमि, जल, पोषक तत्व और प्रकाश जैसे संसाधनों का अधिकतम उपयोग सुनिश्चित करती है, जिससे खेत की उत्पादकता बढ़ती है। दूसरी ओर, अंतरफसल लगाने से किसानों को मुख्य फसल के साथ अतिरिक्त आय प्राप्त होती है, जिससे उनकी आर्थिक स्थिरता में सुधार होता है। दलहनी फसलें जैसे मूँग या उर्द नाइट्रोजन स्थिरीकरण के माध्यम से मिट्टी की उर्वरता बढ़ाती हैं, जिससे अगली फसलों की पैदावार भी बेहतर होती है। इसके अतिरिक्त, अंतरफसली प्रणाली कीटों और रोगों के प्रसार को नियंत्रित करती है तथा खरपतवार वृद्धि को भी सीमित करती है। केले जैसी लंबी अवधि की फसलों में इंटरक्रॉपिंग मिट्टी की नमी बनाए रखने, पोषक तत्वों के बेहतर उपयोग, और पर्यावरणीय संतुलन में भी सहायक होती है। इस प्रकार, इंटरक्रॉपिंग तराई क्षेत्र में टिकाऊ और लाभप्रद कृषि के लिए एक प्रभावी तकनीक है।

मल्चिंग : मल्चिंग एक उन्नत कृषि तकनीक है जिसमें मिट्टी की सतह को किसी जैविक या अजैविक पदार्थ से ढक दिया जाता है ताकि मिट्टी की नमी, तापमान और उर्वरता का संरक्षण किया जा सके। जैविक मल्च में फसल अवशेष, सूखी घास, पत्तियाँ, भूसी आदि आते हैं, जबकि अजैविक मल्च में पॉलीथीन शीट या बायोफिल्म का उपयोग किया जाता है। मल्चिंग से वाष्पीकरण कम होता है, खरपतवार नियंत्रित रहते हैं, और पौधों की जड़ों को अनुकूल तापमान मिलता है। यह तकनीक न केवल मिट्टी की संरचना को सुधारती है, बल्कि फसल की गुणवत्ता और उपज में भी वृद्धि करती है।

मल्चिंग की सामग्री

क्रं.	मल्च सामग्री	प्रकार	प्रमुख लाभ
1.	काली पॉलीथीन	शीट	अजैविक नमी संरक्षण, खरपतवार नियंत्रण
2.	धान की भूसी	जैविक	मिट्टी में कार्बनिक पदार्थ वृद्धि
3.	केले के सूखे पत्ते	जैविक	सस्ता और स्थानीय विकल्प
4.	बायोडिग्रेडेबल फिल्म	अजैविक	पर्यावरण अनुकूल विकल्प

मल्चिंग तकनीक की भूमिका

नमी संरक्षण और तापमान संतुलनः तराई क्षेत्र की रेतीली दोमट मिट्टियाँ जल्दी सूख जाती हैं। मल्चिंग (जैसे पॉलीथीन शीट, धान की भूसी या सूखी घास) लगाने से मिट्टी की नमी 30 से 40ः तक अधिक बनी रहती है और जड़ क्षेत्र का तापमान संतुलित रहता है।

पोषक तत्व हानि में कमीः मल्चिंग से मिट्टी की सतह पर पानी का बहाव कम होता है जिससे पोषक तत्वों का क्षरण घटता है और फसल को निरंतर पोषण मिलता है।

फलों की गुणवत्ता पर प्रभावः मल्चिंग से फलों का आकार बड़ा, रंग आकर्षक और शर्करा प्रतिशत अधिक पाया गया है। पॉलीथीन मल्च के उपयोग से केले की उपज में 15 प्रतिशत वृद्धि देखी गई है।

इंटरक्रॉपिंग और मल्चिंग तकनीकों का संयुक्त प्रभावः इंटरक्रॉपिंग और मल्चिंग तकनीकों का संयुक्त उपयोग केले की खेती में उत्पादकता और मिट्टी की गुणवत्ता सुधारने का प्रभावी तरीका है। इंटरक्रॉपिंग से खेत के खाली स्थान का उपयोग दलहनी या कम अवधि वाली फसलों के लिए किया जाता है, जिससे भूमि की उपयोगिता और आय दोनों बढ़ती हैं। मल्चिंग मिट्टी की नमी बनाए रखती है, तापमान नियंत्रित करती है और खरपतवारों की वृद्धि को रोकती है। जब दोनों तकनीकें साथ लागू की जाती हैं, तो मिट्टी में नमी संरक्षण और जैविक पदार्थ की मात्रा बढ़ती है, जिससे पौधों को पोषक तत्व बेहतर रूप से मिलते हैं। इंटरक्रॉपिंग से प्राप्त अवशेष मल्चिंग सामग्री के रूप में उपयोग किए जा सकते हैं, जिससे लागत घटती है और मिट्टी की उर्वरता बढ़ती है। तराई क्षेत्र में यह संयोजन फसल की वृद्धि, फलन और गुणवत्ता को बेहतर बनाकर टिकाऊ एवं लाभकारी खेती की दिशा में योगदान देता है।

केले की खेती में इंटरक्रॉपिंग तकनीक कैसे अपनाएँ

1. **भूमि चयन और तैयारीः** केले की इंटरक्रॉपिंग के लिए उपजाऊ, जलनिकासी युक्त और दोमट मिट्टी का चयन करें। खेत की गहरी जुताई करके भूमि को समतल करें। केले की कतारों के बीच पर्याप्त दूरी (1.8×1.8 मीटर या 2 × 2 मीटर) रखें ताकि सहफसलों के लिए पर्याप्त स्थान मिल सके।

2. **बुवाई का समय और विधि :** केले की रोपाई के 20 से 30 दिन बाद सहफसलों की बुवाई करें ताकि पौधों को पर्याप्त प्रकाश और पोषक तत्व मिल सकें। बुवाई कतारों में करें और केले की पंक्तियों से उचित दूरी बनाए रखें।

3. **सिंचाई और पोषण प्रबंधन :** सिंचाई का समय इस प्रकार रखें कि दोनों फसलों को समान रूप से नमी प्राप्त हो। जैविक मल्च या ड्रिप सिंचाई प्रणाली का प्रयोग नमी संरक्षण के लिए करें। उर्वरक की मात्रा फसल के प्रकार के अनुसार संतुलित रूप से दें।

4. **खरपतवार और रोग नियंत्रण :** मल्चिंग या हाथ से निराई-गुड़ाई करके खरपतवार नियंत्रित करें। रोग व कीट नियंत्रण के लिए एकीकृत कीट प्रबंधन (आई पी एम) अपनाएँ ताकि पर्यावरण पर दुष्प्रभाव न पड़े।

6. **फसल कटाई और आर्थिक लाभ :** सहफसलों की कटाई उनके परिपक्व होने पर करें ताकि केले के पौधों पर कोई प्रभाव न पड़े। इंटरक्रॉपिंग से किसानों को अतिरिक्त 20 से 30 प्रतिशत आय और भूमि उपयोग दक्षता में 40 प्रतिशत तक वृद्धि हो सकती है।

सारांशः उत्तर प्रदेश के तराई क्षेत्र में केले की खेती में इंटरक्रॉपिंग और मल्चिंग तकनीकें उत्पादन बढ़ाने और खेती को स्थिर बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। इंटरक्रॉपिंग से भूमि का अधिकतम उपयोग होता है और दलहनी व सब्जी फसलों से अतिरिक्त आय मिलती है, जबकि मल्चिंग मिट्टी की नमी, तापमान और उर्वरता को बनाए रखती है तथा खरपतवारों को नियंत्रित करती है। दोनों तकनीकों का संयुक्त प्रयोग मिट्टी की गुणवत्ता सुधारता है, नमी संरक्षण बढ़ाता है और पौधों की वृद्धि एवं फल की गुणवत्ता में सुधार करता है। यह प्रणाली तराई क्षेत्र में सतत, पर्यावरण-अनुकूल और लाभकारी खेती की दिशा में उपयोगी सिद्ध हो रही है।

✍ **आशीष कुमार** (सहायक प्रोफ़ेसर),विधि विभाग, APEX UNIVERSITY जयपुर (राजस्थान)

पशुपालन और कानूनी ढांचा : पशुधन पालन, पशु चिकित्सा देखभाल, और मवेशी व्यापार के नियमों से जुड़े कानूनी मुद्दे

प्रस्तावना: पशुपालन का क्षेत्र भारत में अत्यंत महत्वपूर्ण है। यह न केवल ग्रामीण अर्थव्यवस्था का आधार है, बल्कि यह देश की खाद्य सुरक्षा, रोजगार सृजन, और सामाजिक स्थिरता का भी अभिन्न हिस्सा है। इस क्षेत्र में पशुधन का संरक्षण, पालन, और व्यापार के लिए अनेक कानूनी प्रावधान बनाए गए हैं। इन नियमों का उद्देश्य पशु कल्याण सुनिश्चित करना, अवैध व्यापार पर रोक लगाना, और किसानों एवं व्यापारियों के हितों की रक्षा करना है। इस लेख में हम विस्तार से चर्चा करेंगे कि पशुपालन और उससे जुड़े कानूनी ढांचे में कौन-कौन से नियम लागू होते हैं, और इन नियमों का पालन कैसे सुनिश्चित किया जाता है। साथ ही, हम पशु चिकित्सा देखभाल, मवेशी व्यापार, और संबंधित कानूनी मुद्दों पर भी प्रकाश डालेंगे।

पशुपालन का महत्व और कानूनी आवश्यकताएँ-पशुपालन का क्षेत्र भारत में सदियों से विकसित होता आया है। यह क्षेत्र न केवल आर्थिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है, बल्कि सामाजिक और सांस्कृतिक परंपराओं में भी इसकी गहरी छाप है। पशुपालन से जुड़े कानूनी प्रावधानों का मुख्य उद्देश्य पशु संरक्षण, स्वास्थ्य, और व्यापार के नियमों का पालन सुनिश्चित करना है। इन नियमों का उल्लंघन करने पर कड़ी सजा का प्रावधान है।

भारत सरकार ने पशुपालन को बढ़ावा देने के लिए अनेक कानून बनाए हैं। इनमें से प्रमुख हैं-पशु संरक्षण अधिनियम, 1960; पशु चिकित्सा सेवा अधिनियम, 1982; और मवेशी व्यापार (रोकथाम) अधिनियम, 1955। इन कानूनों का उद्देश्य पशु कल्याण, अवैध व्यापार पर रोक, और पशु स्वास्थ्य का संरक्षण करना है।

पशु संरक्षण अधिनियम, 1960: यह अधिनियम भारत में पशु संरक्षण का मुख्य आधार है। इसके अंतर्गत पशुओं के प्रति क्रूरता करने पर कठोर दंड का प्रावधान है। इसमें पशु क्रूरता की परिभाषा स्पष्ट की गई है, जिसमें अनावश्यक यातना, अत्याचार, और अनावश्यक वध शामिल हैं। इसके अलावा, इस अधिनियम के तहत पशु क्रूरता के खिलाफ शिकायत दर्ज कराई जा सकती है। यह अधिनियम पशु क्रूरता रोकने के लिए विभिन्न प्रावधान भी करता है। उदाहरण के लिए, पशु क्रूरता के मामलों में पुलिस और जिला मजिस्ट्रेट को कार्रवाई का अधिकार है। इसके साथ ही, पशु क्रूरता के मामलों में दोषी पाए गए व्यक्तियों को सजा दी जाती है।

पशु चिकित्सा सेवा अधिनियम, 1982:यह अधिनियम पशु स्वास्थ्य और चिकित्सा सेवाओं को मजबूत बनाने के लिए बनाया गया है। इसके तहत पशु चिकित्सकों को विशेष अधिकार प्राप्त हैं। वे पशुओं का निरीक्षण कर सकते हैं, टीकाकरण कर सकते हैं, और आवश्यक चिकित्सा सेवाएँ प्रदान कर सकते हैं। इसके अलावा, यह अधिनियम पशु चिकित्सा संस्थानों की स्थापना और संचालन के नियम भी निर्धारित करता है। पशु चिकित्सकों को अपने कर्तव्य का पालन करते हुए पशु स्वास्थ्य का संरक्षण करना अनिवार्य है। यदि कोई व्यक्ति पशु चिकित्सा सेवाओं का दुरुपयोग करता है या बिना लाइसेंस के पशु चिकित्सा कार्य करता है, तो उसके खिलाफ कड़ी कार्रवाई की जाती है।

मवेशी व्यापार (रोकथाम) अधिनियम, 1955: यह अधिनियम मवेशी व्यापार को नियंत्रित करने के लिए बनाया गया है। इसके अंतर्गत मवेशी व्यापार के नियम, लाइसेंस प्रक्रिया, और अवैध व्यापार पर रोक लगाने के प्रावधान हैं। यह कानून मवेशी व्यापार में पारदर्शिता लाने और अवैध व्यापार को रोकने का काम करता है। इसके अलावा, इस अधिनियम के तहत मवेशी व्यापार के लिए लाइसेंस आवश्यक है। बिना लाइसेंस के मवेशी का व्यापार करना अपराध है। साथ ही, इस कानून के तहत मवेशियों की खरीद-फरोख्त के दौरान उनके स्वास्थ्य और सुरक्षा का ध्यान रखना अनिवार्य है।

पशु क्रूरता और कानूनी दंड: पशु क्रूरता के मामलों में कड़ी सजा का प्रावधान है। यदि कोई व्यक्ति पशु को अनावश्यक यातना देता है या क्रूरता करता है, तो उसे जेल की सजा या जुर्माना हो सकता है। इसके अलावा, पशु क्रूरता के मामलों में दोषी पाए गए व्यक्तियों को पशु संरक्षण अधिनियम के तहत दंडित किया जाता है। यह सुनिश्चित करता है कि पशु के प्रति क्रूरता करने वालों को कठोर सजा मिले, ताकि पशु संरक्षण का उद्देश्य पूरा हो सके। साथ ही, यह कानून पशु क्रूरता के खिलाफ जागरूकता फैलाने का भी काम करता है।

पशु चिकित्सा देखभाल और नियम: पशु चिकित्सा देखभाल का क्षेत्र भी कानूनी प्रावधानों से सुरक्षित है। पशु चिकित्सकों को अपने कर्तव्य का पालन करते हुए पशुओं का उचित उपचार करना चाहिए। इसके साथ ही, पशु चिकित्सा संस्थान और क्लीनिकों को लाइसेंस प्राप्त करना आवश्यक है। पशु चिकित्सा सेवाओं में लापरवाही या अनियमितता पाए जाने पर कानूनी कार्रवाई की जाती है। उदाहरण के लिए, यदि कोई पशु चिकित्सक बिना लाइसेंस के उपचार करता है या पशु को अनावश्यक यातना देता है, तो उसके खिलाफ सख्त कार्रवाई की जाती है।

मवेशी व्यापार में कानूनी प्रावधान: मवेशी व्यापार के नियमों का उल्लंघन करने वालों पर कड़ी कार्रवाई की जाती है। यह सुनिश्चित करता है कि मवेशी का व्यापार नैतिक और कानूनी मानकों के अनुरूप हो। इसके लिए लाइसेंस आवश्यक है, और बिना लाइसेंस के व्यापार करना अपराध है। इसके अलावा, मवेशी व्यापार में पशु की सुरक्षा और स्वास्थ्य का ध्यान रखना अनिवार्य है। यदि कोई व्यापारी पशु का शोषण करता है या उसकी देखभाल में लापरवाही करता है, तो उसके खिलाफ कानूनी कार्रवाई की जाती है।

पशु संरक्षण के लिए सरकारी प्रयास: सरकार ने पशु संरक्षण के लिए अनेक योजनाएँ और कार्यक्रम शुरू किए हैं। इनमें पशु संरक्षण केंद्र, पशु चिकित्सा शिविर, और जागरूकता अभियान शामिल हैं। इन प्रयासों का उद्देश्य पशु क्रूरता को रोकना, पशु स्वास्थ्य सुधारना, और पशुपालकों को जागरूक बनाना है। साथ ही, सरकार ने पशु संरक्षण अधिनियम के तहत कठोर दंड का प्रावधान किया है। इससे पशु क्रूरता के मामलों में त्वरित न्याय सुनिश्चित होता है। इसके अलावा, विभिन्न गैर सरकारी संगठनों और स्वयंसेवी संस्थानों ने भी पशु संरक्षण के क्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

निष्कर्ष: अंत में, यह कहा जा सकता है कि पशुपालन और उससे जुड़े कानूनी ढांचे का उद्देश्य पशु कल्याण, व्यापार की पारदर्शिता, और किसानों का हित संरक्षण है। इन कानूनों का सही पालन न केवल पशु संरक्षण के लिए आवश्यक है, बल्कि यह देश की आर्थिक और सामाजिक स्थिरता के लिए भी जरूरी है। अतः, हमें चाहिए कि हम इन नियमों का सम्मान करें, उनका पालन करें, और पशु संरक्षण के प्रति जागरूकता फैलाएँ। तभी हम एक स्वस्थ, समृद्ध, और पशु प्रेमी समाज का निर्माण कर सकते हैं। पशुपालन के क्षेत्र में कानूनी जागरूकता और अनुशासन ही हमारे देश को पशु संरक्षण में अग्रणी बना सकता है।

।। श्री गणेशाय नम ।।

फक्कड़ बाबा
खाद बीज भण्डार
खाद बीज एवं कृषि कीटनाशक दवाईयों के विक्रेता

सदर बाजार गंज मुरार, ग्वालियर, मोबा. 9926988124, 9340964335
01/2025-26

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
राजस्थान

आर. एल. मीणा, महावीर नोगिया
बृजेश यादव, लाल चन्द मालव, अभिषेक जांगिड़
आर. एस. मीणा एवं मुकेश डांगी
भा.कृ.अनु.प.-राष्ट्रीय मृदा सर्वेक्षण एवं भूमि उपयोग नियोजन ब्यूरो, क्षेत्रीय केन्द्र, उदयपुर-313001 (राजस्थान)

दलहनी फसलों की मृदा सुधार एवं पर्यावरण रक्षा में भूमिका

भारत का दलहन उत्पादन में प्रथम स्थान- लगभग 5,000 से भी अधिक वर्षों से मानव दलहनी फसलों की खेती कर रहा है। ये फसलें दुनिया के अधिकांश क्षेत्रों में उगाई जाती हैं। विश्व में इनके क्षेत्रफल एवं उत्पादन में भारत का प्रथम स्थान है। ये अपेक्षाकृत कम लागत की खाद्य फसलें हैं। मूंग, उड़द, अरहर, चना, लोबिया एवं मटर मुख्य रूप से उगाई जाने वाली दलहनी फसलें हैं। ये फसलें किसानों और उपभोक्ताओं में बेहद लोकप्रिय हैं। अधिकांश किसानों को इनके पर्यावरणीय एवं मृदा उर्वरा शक्ति के लाभ के बारे में पर्याप्त जानकारी नहीं होती है।

दलहनी फसलों का पर्यावरण व मृदा सुधार में योगदान - दलहनी फसलों का खाद्य सुरक्षा के साथ-साथ पर्यावरण एवं मृदा के स्वास्थ्य सुधार में भी महत्वपूर्ण योगदान है। इन दिनों हमारी कृषि प्रणाली, अनेक समस्याओं जैसे-मृदा स्वास्थ्य, जल की कमी, वैश्विक तपन, जैव विविधता, नाइट्रोजन की कमी आदि से जूझ रही है। इनके परिणामस्वरूप कृषि उत्पादन एवं गुणवत्ता में दिनों-दिन कमी आ रही है। इन सभी समस्याओं के समाधान में ये दलहनी फसलें प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। दलहन फसल उत्पादन, मृदा उर्वरता बनाये रखने की अपनी सहज क्षमता के कारण टिकाऊ खेती में एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। इसलिए दलहन उत्पादन को बदलते परिवेश में मानव पोषण, पशुधन आहार, पर्यावरण तथा मृदा उर्वरता का टिकाऊ स्त्रोत कहा जा सकता है। इन सभी बातों को ध्यान में रखते हुए दलहन उत्पादन को बढ़ावा दिया जाना चाहिए।

दलहनी फसलों की मृदा सुधार में भूमिका

नाइट्रोजन स्थिरीकरण- मृदा में दलहनी फसलों की जड़ ग्रंथियों में राइजोबियम बैक्टीरिया पाये जाते हैं, जो इन फसलों की जड़ो में सहजीवी संबंध बनाकर वायुमंडलीय नाइट्रोजन का मृदा में स्थिरीकरण करते हैं। इससे मृदा में नाइट्रोजन की मात्रा में वृद्धि होती है। इसलिए इन फसलों को कम नाइट्रोजन की आवश्यकता होती है। इन फसलों की कटाई के बाद इनके अवशेष मृदा में नाइट्रोजन की मात्रा बनाए रखने में सहायक होते हैं। ये अग्रिम फसल के उत्पादन में नाइट्रोजन उर्वरकों की मात्रा के प्रयोग को कम कर देते हैं। इन फसलों को हरी खाद के विकल्प के तौर पर उगाया जा सकता है।

दलहनी फसलों द्वारा औसतन नाइट्रोजन स्थिरीकरण

1. मूंग- 40-100 किग्रा/हे.
2. उड़द- 50-100 किग्रा/हे.
3. चना- 60-80 किग्रा/हे.
4. अरहर- 40-70 किग्रा/हे.
5. सोयाबीन- 50-150 किग्रा/हे.
6. लोबिया- 60-90 किग्रा/हे.
7. मेथी- 30-60 किग्रा/हे.

कार्बनिक पदार्थ बढाना- दलहनी फसलों के अवशेष मिट्टी में कार्बनिक पदार्थ जोडते हैं, जो मिट्टी की संरचना और उर्वरता को बेहतर बनाता है।

मिट्टी की संरचना में सुधार- फसल चक्र में दलहनी फसलों को शामिल करने से मिट्टी की भौतिक-रासायनिक गुण सुधरते हैं, जैसे बेहतर मृदा संरचना, कम स्थूल घनत्व, और बढी हुई द्रवचालित चालकता।

सूक्ष्मजीवों की विविधता- ये फसलें मिट्टी के सूक्ष्मजीवों के लिए पोषक तत्व प्रदान करती हैं, जिससे माइक्रोबियल बायोमास और एंजाइमी गतिविधियाँ बढती हैं, जो पोषक तत्व चक्रण में सहायक होती हैं।

फसलों का कीट व रोग से बचाव- लगातार अनाज वाली फसलों को उगाने से उनमें लगने वाले कीट एवं रोगों का प्रकोप अधिक होने लगता है। सामान्यतः अनाज वाली फसलों पर लगने वाले कीट एवं रोगों का प्रकोप दलहनी फसलों पर नहीं होता है। कीट एवं रोगों के रोगजनकों को जीवनचक्र पूरा करने के लिए उचित माध्यम नहीं मिल पाता है। इसलिए इन फसलों को फसलचक्र में शामिल करने से कीट व रोगों के निवारण में सहायता मिलती है।

खरपतवार नियंत्रण- कुछ दलहनी फसलें जैसे मोठ, मूंग, चवला एवं मूंगफली आवरण फसलों की श्रेणी में आती हैं। इन फसलों को अंतरसस्य प्रणाली में शामिल करने से खरपतवारों की वृद्धि एवं विकास के लिए उचित मात्रा में प्रकाश नहीं मिल पाता है। इसके फलस्वरूप खरपतवार प्रबंधन में मदद मिलती है।

जल संरक्षण- सामान्यतः दलहनी फसलों को कम पानी की आवश्यकता होती है। इसके अतिरिक्त ये फसलें अपनी पत्तियों से भूमि की ऊपरी सतह को ढक लेती हैं, जिससे भूमि की सतह से पानी का वाष्पीकरण कम होता है।

दलहनी फसलों की पर्यावरण रक्षा में भूमिका

दलहनी फसलें (जैसे मटर, चना, अरहर, मूंग, उडद आदि) न केवल पोषण का अच्छा स्रोत हैं, बल्कि पर्यावरण की रक्षा में भी इनकी महत्वपूर्ण भूमिका होती है। इन फसलों की कुछ प्रमुख पर्यावरणीय विशेषताएँ निम्नलिखित हैं।

रासायनिक उर्वरकों में कमी- नाइट्रोजन स्थिरीकरण के माध्यम से, दलहनी फसलें सिंथेटिक उर्वरकों पर निर्भरता कम करती हैं। रासायनिक उर्वरकों का अत्यधिक उपयोग प्रदूषण और अन्य पर्यावरणीय समस्याएं पैदा कर सकता है, जिससे दलहनी फसलें एक टिकाऊ विकल्प बनती हैं।

जल संरक्षण- दलहनी फसलें, विशेष रूप से मटर और मसूर, शुष्क परिस्थितियों के प्रति सहनशील होती हैं और पानी का उपयोग अलग तरीके से करती हैं। वे मिट्टी की ऊपरी सतह से पानी को सोखती हैं और अधिक पानी को मिट्टी की गहरी परतों में छोड देती हैं, जिससे अगली फसल के लिए पानी की उपलब्धता बढ जाती है।

जैविक विविधता बढ़ाना- दलहन मिट्टी में सूक्ष्मजीवों की संख्या और विविधता को बढाते हैं। एक स्वस्थ और विविध माइक्रोबियल समुदाय मिट्टी को रोगों से लडने में मदद करता है और पारिस्थितिकी तंत्र को अधिक लचीला बनाता है।

जैविक नियंत्रण- फसल चक्रण में दलहन को शामिल करने से मिट्टी में बीमारियों को नियंत्रित करने वाले लाभकारी सूक्ष्मजीवों को बढावा मिलता है। यह प्राकृतिक रूप से कीटों और बीमारियों के प्रकोप को कम करता है।

नन्दिनी इन्टरप्राइजेज खाद बीज एवं कीटनाशक

प्रो. रामदीन कुशवाह
84610-11860
हमारे यहां सभी प्रकार के खाद बीज एवं कीटनाशक दवाईयां उचित रेट पर मिलती हैं

पता : चीनोर रोड, छीमक, जिला-ग्वालियर (म.प्र.)
04/2025-26

राजस्थान की जलवायु क्षेत्रों में जीरा की उन्नत खेती

✎अनिता सैनी (शोध छात्रा) उद्यान विज्ञान विभाग, स्वामी केशवानन्द राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर

✎दीपक कुमार सैनी (फार्म मैनेजर) कृषि महाविद्यालय, कोटपूतली

जीरा (क्यूमिनम साइमिनम एल कुल अपियासी) मसाले वाली मुख्य बीजीय फसल है। देश का 80 प्रतिशत से अधिक जीरा गुजरात व राजस्थान राज्य में उगाया जाता है। राजस्थान में देश के कुल उत्पादन का लगभग 28 प्रतिशत जीरे का उत्पादन किया जाता है तथा राज्य के पश्चिमी क्षेत्र में कुल राज्य का 80 पतिशत जीरा पैदा होता है लेकिन इसकी औसत उपज (380 कि.ग्रा. प्रति हे.) तथा गुजरात (550 कि.ग्रा. प्रति हे.) कि अपेक्षा काफी कम है। उन्नत तकनीकों के प्रयोग द्वारा जीरे की वर्तमान उपज को 25.50 प्रतिशत तक बढ़ाया जा सकता है।

जलवायुः जीरा शीत ऋतु की फसल है। मध्यम ठंडी और शुष्क जलवायु की आवश्यकता होती है। 9ए सेंटीग्रेड से 26ए सेंटीग्रेड के बीच अच्छी तरह वृद्धि करता है। 30ए सेंटीग्रेड से ऊपर और 10ए सेंटीग्रेड से कम तापमान पर अंकुरण पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। औसत वार्षिक वर्षा की आवश्यकता 30 से 270 मि.मी. होती है। बादल रहित धूप वाला वातावरण इसके विकास के लिए अनुकूल है। फूल आने के दौरान क्षेत्र गंभीर ठंड से मुक्त होना चाहिए। यह फूल आने और बीज लगने की अवस्था के दौरान नमी पसंद नहीं करता है। फूल आने और फल लगने की अवस्था के दौरान बादल छाए रहने से कीटों और बीमारियों का प्रकोप बढ़ जाता है।

भूमि एवं उसकी तैयारीः जीरे की फसल बलुई दोमट तथा दोमट भूमि अच्छी होती है। खेत में जल निकास की उचित व्यवस्था होनी चाहिये। जीरे की फसल के लिए एक जुताई मिटटी पलटने वाले हल से करने के बाद एक क्रॉस जुताई हैरो से करके पाटा लगा देना चाहिये तथा इसके पश्चात एक जुताई कल्टीवेटर से करके पाटा लगाकर मिटटी भुरभुरी बना देनी चाहिये।

उन्नत किस्में: राजस्थान में पाई जाने वाली जीरें की कुछ लोकप्रिय उन्नत किस्में नीचे दी गई है

किस्म का नाम	अवधि (दिन)	उपज (क्विं. / हे.)	विशेषताएं
आर.जेड-19	120-140	9-11	पौधे सीधे होते हैं और उनमें गुलाबी फूल और मोटे रोमिल वाले दाने होते हैं।
आर जेड-209	120-130	7-8	उकठा रोग एवं झुलसा रोग के प्रति सहनशील
आरजेड-223	120-130	6-8	बीजों में 3.23% तेल की मात्रा होती है जो उकठा रोग के प्रति भी सहनषील है।
आर.जेड. -341	120-130	5-6	वाष्पशील तेल की मात्रा अधिक होती है।
आर जेड -345	120-130	5-6	उकठा, झुलसा और पाउडरी मिल्ड्यू फूंदी के प्रति प्रतिरोध।
एसी. -01-167	120-140	5-6	उकठा रोग के प्रति प्रतिरोधी ।
GC4	110-115	6-8	यह उखटा बीमारी के प्रति रोधक तथा बीज में तेल की मात्रा 3.25 प्रतिशत

बीज उपचारः बेहतर और तेजी से अंकुरण के लिए बीजों को आठ घंटे तक पानी में भिगोना चाहिए। फसल को अंकुरित होने में 10.12 दिन लगते हैं और इसलिए अच्छे अंकुरण के लिए दो हल्की सिंचाई करनी चाहिए। अंकुरण के लिए पानी में भिगोए गए बीजों को छह दिनों तक नम स्थिति में रखना चाहिए इस प्रकार एक सिंचाई की लागत बच जाती है। ये पहले से अंकुरित बीज छह दिनों के भीतर अच्छा अंकुरण प्रदान करते हैं और बुवाई के तुरंत बाद सिंचाई की आवश्यकता होती है। बीजों को गोमूत्र में भिगोने और जैव उर्वरकों के प्रयोग से जीरे के अंकुरण और वृद्धि में बेहतर परिणाम मिलते हैं। बीज जनित रोगों से बचने के लिए ट्राइकोडर्मा 2.3 ग्राम / कि.ग्रा. बीज या बाविस्टिन 2.2ए5 ग्राम / कि.ग्रा. बीज से बीज उपचार करना चाहिए। फसल के बेहतर अंकुरण और वृद्धि के लिए बीजों को 10 ग्राम / कि.ग्रा. एजोटोबैक्टर और 10 ग्राम / कि.ग्रा. पीएसबी का उपचार करना चाहिए।

बुवाई के तरीकेः

1. **बिखेरनाः** बिखेरने के बाद बीजों को लोहे के रेक की सहायता से हल्के से मिट्टी से ढक देना चाहिए।

2. **सीड ड्रिल द्वारा पंक्ति में बुवाईः** यह विधि अंतरवर्तीय कार्यों के लिए बेहतर है। यह फसल की बेहतर वृद्धि और विकास को बढ़ावा देता है और कीटों और बीमारियों की घटनाओं को कम करता है। पंक्ति रिक्ति 20 से.मी. पौधे की दूरी 10 से.मी.। जीरे की फसल के लिए बुआई की गहराई 1.5 से.मी. से अधिक नहीं होनी चाहिए क्योंकि इससे बीजों के अंकुरण पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है।

सिंचाईः जीरे की फसल हेतु 4.6 सिंचाई उपयुक्त है। आमतौर पर किसान जीरे के लिए स्प्रिंकलर सिंचाई का उपयोग करते हैं। बुवाई के तुरंत बाद हल्की सिंचाई करनी चाहिए इसके बाद 8.10 दिन बाद सिंचाई करनी चाहिए। दूसरी सिंचाई के बाद ही अंकुरण प्रारम्भ होगा। पहली सिंचाई भारी नहीं होनी चाहिए अन्यथा बीज का असमान वितरण हो सकता है। इसके बाद फसल को 20.30 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करनी चाहिए। यह मौसम की स्थिति और मिट्टी के प्रकार पर निर्भर करता है। दाने बनने के समय आखिरी सिंचाई थोड़ी भारी होनी चाहिए जिससे फसल पकने के दौरान नमी की आवश्यकता पूरी हो जाएगी। फसल पकने की अवस्था के दौरान सिंचाई करने से बचना चाहिए क्योंकि इससे बीज की गुणवत्ता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ने की संभावना होती है। सबसे गंभीर बीमारी जैसे ब्लाइट रोग के हमले को रोकने के लिए फूलों की शुरुआत में भारी सिंचाई से बचना चाहिए।

खरपतवार नियंत्रणः जीरे की फसल में खरपतवारों का अधिक प्रकोप होता है क्योंकि प्रांरभिक अवस्था में जीरे की बढ़वार हो जाती है तथा फसल को नुकसान होता है। जीरे में खरपतवार नियंत्रण करने के लिए बुवाई के समय दो दिन बाद तक पेन्डीमैथालिन (स्टोम्प) नामक खरपतवारनाशी की बाजार में उपलब्ध 3.3 लीटर मात्रा का 500 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव कर देना चाहिये। इसके उपरान्त जब फसल 25 -30 दिन की हो जाये तो एक गुड़ाई कर देनी चाहिये यदि मजदूरों की समस्या हो तो आक्सीडाईजारिल (राफ्ट) नामक खरपतवार-नाशी की बाजार में उपलब्ध 750 मि.ली. मात्रा को 500 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव कर देना चाहिए।

फसल चक्रः एक ही खेत में लगातार तीन वर्षो तक जीरे की फसल नहीं लेनी चाहियेए अन्यथा उखटा रोग का अधिक प्रकोप होता है अतः उचित फसल चक्र अपनाना बहुत ही आवश्यक है बाजरा-जीरा-मूंग-गेहूं -बाजरा- जीरा तीन वर्षीय फसल चक्र का प्रयोग लिया जा सकता है।

पोषक तत्व प्रबंधनः भूमि की तैयारी के समय गोबर की खाद 10 टन प्रति हेक्टेयर या कम्पोस्ट 5 टन प्रति हेक्टेयर डालें। एनपीके 20:20:15 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से लगाएं (20 कि.ग्रा. नाईट्रोजन दो बराबर विभाजित मात्रा में 30 से 60 दिनों के अंतराल पर)। बेहतर अंकुरण और पौधों की वृद्धि के लिए मिट्टी में ट्राइकोडर्मा (2.5 कि.ग्रा./ हेक्टेयर) और नीम की खली (150 कि.ग्रा./ हेक्टेयर) मिट्टी में डालने की सलाह दी जाती है। इससे मृदा जनित रोगों की संभावना भी कम हो जाती है। काले चने या हरे चने जैसी फलियों के साथ फसल चक्र का पालन, क्लस्टर बीन या सेस्बानिया एक्यूलेटा के साथ हरी खाद, खाद बनाना और जैव उर्वरकों के प्रयोग से भी मिट्टी की गुणवत्ता में वृद्धि होती है। उकठा रोग के नियंत्रण हेतु बुवाई से पहले मिट्टी में सुधार करें जैसे अरंडी या सरसों की खली, पोल्ट्री खाद 25 टन प्रति हेक्टेयर की दर से उपयोग करें।

निराई-गुड़ाईः जीरे में खरपतवार प्रतिस्पर्धा की प्रांरभिक अवधि बुआई के 15 से 30 दिन के बीच होती है, इसलिए हाथ से निराई-गुड़ाई के लिए यह सबसे उपयुक्त समय है और सिंचित जीरे की फसल को खरपतवार से मुक्त रखने के लिए 2.3 बार निराई-गुड़ाई करना आवश्यक होता है।

पौध संरक्षण

एफिडः इस कीट का सबसे अधिक प्रकोप फूल आने की अवस्था पर होता है यह कीट पौधों के कोमल भागों का रस चूसकर फसल को नुकसान पहुचांता है। इस कीट के नियंत्रण हेतु एमिडाक्लोप्रिड की 0.5 लीटर या मैलाथियान 50 ई.सी. की एक लीटर या एसीफेट की 750 ग्राम प्रति हेक्टयर की दर से 500 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव कर देना चहिये आवश्यकता हो तो दूसरा छिड़काव करना चाहिये।

दीमकः दीमक जीरे के पौधों की जड़ें काटकर फसल को बहुत नुकसान पहुँचाती है। दीमक की रोकथाम के लिए खेत की तैयारी के समय अन्तिम जुताई पर क्लोरोपाइरीफॉस या क्योनालफॉस की 20 -25 कि.ग्रा.मात्रा प्रति हेक्टयर कि दर से भुरकाव कर देनी चाहिये। खड़ी फसल में क्लोरोपाइरीफॉस कि 2 लीटर मात्रा प्रति हेक्टयर कि दर से सिंचाई के साथ देनी चाहिये। इसके अतिरिक्त क्लोरोपाइरीफॉस की 2 मि.ली.मात्रा प्रति किलो बीज की दर से उपचारित कर बोना चाहिये।

उखटा रोगः इस रोग के कारण पौधे मुरझा जाते हैं तथा यह आरम्भिक अवस्था में अधिक होता है लेकिन किसी भी अवस्था में यह रोग फसल को नुकसान पहुंचा सकता है। इसकी रोकथाम के लिए बीज को टाइकोडर्मा की 4 ग्राम प्रति किलो या बाविस्टीन की 2 ग्राम प्रति किलो बीज दर से उपचरित करके बोना चाहिये। प्रमाणित बीज का प्रयोग करें। खेत में ग्रीष्म ऋतु में जुताई करनी चाहिये तथा एक ही खेत में लगातार जीरे की फसल नहीं उगानी चाहिए। खेत में रोग के लक्षण दिखाई देने पर 2.50 कि.ग्रा.ट्राइकोडर्मा कि 100 किलो कम्पोस्ट के साथ मिलाकर छिड़काव कर देना चाहिये तथा हल्की सिंचाई करनी चाहिये।

झुलसाः यह रोग फसल में फूल आने के पश्चात बादल होने पर लगता है। इस रोग के कारण पौधों का ऊपरी भाग झुक जाता है तथा पतियों व तनों पर भूरे धब्बे बन जाते है। इस रोग के नियंत्रण के लिए मैन्कोजेब की 2 ग्राम मात्रा को प्रति लीटर की दर से घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिये।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

सरसों की वृद्धि और विकास में पादप वृद्धि नियामकों की भूमिका

ललित कृष्ण मीना
इबानडलिन मावलोंग, भीरू लाल मीना,
रीमा रानी, मुरली धर मीना, विजय वीर सिंह
भाकृअनुप- भारतीय सरसों अनुसंधान संस्थान
सेवरए भरतपुर-321303 (राजस्थान)

सरसों की वृद्धि और विकास में पादप वृद्धि नियामकों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। इनके प्रयोग से पौधों के प्रकाश संश्लेषण, प्रोसेसेस के संरक्षण, संसाधन संकेत, जीनोमिक प्रक्रियाएं और पोषक तत्वों का समुचित प्राप्ति में सुधार होता है। इन नियामकों का प्रयोग पौधों के सामाजिक प्रक्रियाओं, सेल विभाजन, लम्बाई, फुलन, पुष्पण, फलन, और समापन में सुधार करने में मदद करता है। सरसों में उपयोग करने वाले विशेष पादप वृद्धि नियामकों के नाम नैफथलीन एसिटिक एसिड, सेसिलिक एसिड, गिबेरेलिक एसिड, ट्राईकोनटेनॉल, इंडोल एसिटिक एसिड, इंडोल ब्यूटिक एसिड, बेंजिल एमिनो प्युरिन, क्लोरोकोलीन क्लोराइड, किनेटिन, मिथाइल जैस्मोनेट हैं। पौधों के वृद्धि नियामक सरसों के पौधों की वृद्धि, उपज, गुणवत्ता, प्रकाश संश्लेषक दक्षता, एंटीऑक्सीडेंट प्रणाली, जड़ कोशिका व्यवहार्यता और पोषक तत्व अधिग्रहण में सुधार करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। सही ढंग से प्रयोग किए जाने पर, वृद्धि नियामक प्रक्रियाओं को प्रभावी ढंग से प्रबंधित कर सकते हैं, जिससे पौधों की समग्र सेहत, उत्पादन, और गुणवत्ता में सुधार होता है।

सरसों में उपयोग किए जाने वाले पादप वृद्धि नियामक

भारतीय सरसों में उपयोग किए जाने वाले विभिन्न प्रकार के पादप विकास नियामकों में शामिल हैं:

1. **ऑक्सिन:** ऑक्सिन विकास प्रवर्तकों का एक वर्ग है जो पौधों की वृद्धि और विकास को नियंत्रित करता है

2. **सैलिसिलिक एसिडः** सैलिसिलिक एसिड का अध्ययन उच्च तापमान तनाव सहित तनाव के प्रति पौधों की प्रतिक्रिया को बढ़ाने और भारतीय सरसों के पौधों में कार्यिकी प्रक्रियाओं में सुधार करने में इसकी भूमिका के लिए किया गया है।

3. **जिबरेलिक एसिडः** जिबरेलिक एसिड एक अन्य पौधा विकास नियामक है जिस पर भारतीय सरसों के पौधों की वृद्धि, उपज और जैव रासायनिक परिवर्तनों पर इसके प्रभावों के लिए शोध किया गया है। इस प्राकृतिक पौधे हार्मोन का उपयोग तने के विस्तार को बढ़ावा देने, फूलों की संख्या और आकार को बढ़ाने, फलों के विकास में तेजी लाने और अंततः उच्च पैदावार हेतु किया जाता है।

4. **एथेफॉन:** एक सिंथेटिक विकास नियामक जो फूलों के आगमन को उत्तेजित करता है, सरसों की फसल में फूलों की संख्या बढ़ाता है, बेहतर फल सेट को बढ़ावा देता है और फल की गुणवत्ता में सुधार करता है।

5. **बेंजाइलेडेनिन:** एक अन्य सिंथेटिक विकास नियामक जिसका उपयोग मुख्य रूप से सरसों की फसलों में फूलों की संख्या बढ़ाने, लगातार फलों के विकास को बढ़ावा देकर फलों की गुणवत्ता में सुधार करने और फलों की विकृति को कम करने हेतु किया जाता है।

ये वृद्धि नियामक भारतीय सरसों के पौधों में फूल आने की अवस्था के दौरान फूलों की गुणवत्ता, फलों के विकास और समग्र उपज को बढ़ाकर महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। पौधों की वृद्धि और स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव डाले बिना सर्वोत्तम परिणाम सुनिश्चित करने के लिए उचित आवेदन दर और समय के लिए कृषि विशेषज्ञों से परामर्श करना आवश्यक है।

सरसों में पादप वृद्धि नियामकों द्वारा प्रभावित कार्यिकी मापदण्ड: सरसों में पादप वृद्धि नियामकों द्वारा प्रभावित कार्यिकी मापदंडों में प्रकाश संश्लेषक दक्षता, एंटीऑक्सीडेंट प्रणाली, जड़ कोशिका व्यवहार्यता और पोषक तत्व अधिग्रहण शामिल हैं। ये नियामक भारतीय सरसों के पौधों की वृद्धि, उपज और गुणवत्ता को बढ़ावा देने के लिए इन कार्यिकी मापदंडों को संशोधित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

पादप वृद्धि नियामकों का सरसों की उपज एवं गुणवत्ता पर प्रभाव: सरसों की उपज विशेषताओं को प्रभावित करने में पादप वृद्धि नियामक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। ब्रैसिनोस्टेरॉइड जैसे पौधों के वृद्धि नियामकों के अनुप्रयोग से सरसों की पैदावार में इजाफा हो सकती है। यह इंगित करता है कि पादप वृद्धि नियामक सरसों फसलों की पोषक तत्व उपयोग दक्षता और समग्र उत्पादकता को बढ़ा सकते हैं। इसके अतिरिक्त, पौधों के वृद्धि नियामकों को प्रकाश संश्लेषक दक्षता, एंटीऑक्सीडेंट प्रणाली, जड़ कोशिका व्यवहार्यता और पोषक तत्व अधिग्रहण जैसे कार्यिकी मापदंडों पर प्रभाव डालते हुए दिखाया गया है, जो सभी भारतीय सरसों के पौधों की बेहतर वृद्धि, उपज और गुणवत्ता में योगदान करते हैं।

पादप वृद्धि नियामकों का सरसों की जड़ प्रणाली पर प्रभाव

पादप वृद्धि नियामक जड़ कोशिका व्यवहार्यता, पोषक तत्व अधिग्रहण और समग्र जड़ विकास को प्रभावित करके सरसों की जड़ प्रणाली को प्रभावित करते हैं। ये नियामक मिट्टी से पोषक तत्वों और पानी को अवशोषित करने में जड़ प्रणाली की दक्षता को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, जो सरसों के पौधों की वृद्धि, विकास और उत्पादकता के लिए आवश्यक है। इसके अतिरिक्त, पौधे के विकास नियामक जड़ वृद्धि और शाखाकरण को प्रोत्साहित कर सकते हैं, जिससे एक अधिक व्यापक और कुशल जड़ प्रणाली बन सकती है जो सरसों की फसलों के समग्र स्वास्थ्य और शक्ति का समर्थन करती है।

सरसों के फूल और फलन पर पादप वृद्धि नियामकों का प्रभाव: सरसों के फूल और फलने पर पादप वृद्धि नियामकों का प्रभाव महत्वपूर्ण है। फूलों के चरण के दौरान लगाए जाने पर ये नियामक फूलों की संख्या और गुणवत्ता बढ़ाने, फलों के विकास में सुधार और सरसों के पौधों में समग्र उपज बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। विशेष रूप से, जिबरेलिक एसिड जैसे विकास नियामक तने की लम्बाई को बढ़ावा देते हैं, फूलों की संख्या और आकार में वृद्धि करते हैं, फलों के विकास में तेजी लाते हैं और अंततः उच्च पैदावार की ओर ले जाते हैं। एथेफॉन, एक अन्य विकास नियामक, फूलों के आगमन को उत्तेजित करता है, फूलों की संख्या बढ़ाता है, बेहतर फल सेट को बढ़ावा देता है, और सरसों की फसलों में फल की गुणवत्ता बढ़ाता है। इसके अतिरिक्त, 6-बेंजाइलेडेनिन का उपयोग फूलों की संख्या बढ़ाने और लगातार फलों के विकास को सुनिश्चित करके और विकृति को कम करके फलों की गुणवत्ता में सुधार करने के लिए किया जाता है। फूलों के चरण के दौरान इन विकास नियामकों का सावधानीपूर्वक उपयोग करके, किसान बेहतर पैदावार और गुणवत्तापूर्ण उपज प्राप्त करने के लिए सरसों के पौधों में फूल और फलने की प्रक्रियाओं को अनुकूलित कर सकते हैं।

पादप वृद्धि नियामक भारतीय सरसों को तनाव से निपटने में साहयक: पादप वृद्धि नियामक कार्यिकी, जैव रासायनिक और विकास-संबंधी प्रक्रियाओं को विनियमित करके तनाव से निपटने के लिए सरसों की अनुकूली क्षमता को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, जिससे चुनौतीपूर्ण पर्यावरणीय परिस्थितियों में फसल के समग्र प्रदर्शन में सुधार होता है। पौधे के विकास नियामक, जैसे सैलिसिलिक एसिड, नमी तनाव की स्थिति में सरसों की वृद्धि और तनाव सहनशीलता को बढ़ा सकते हैं।

कार्यिकी प्रतिक्रिया: सैलिसिलिक एसिड जैसे पादप विकास नियामक प्रकाश संश्लेषक दक्षता, पोषक तत्व अधिग्रहण और एंजाइमेटिक गतिविधियों को बढ़ाकर नमी के तनाव के प्रति भारतीय सरसों की कार्यिकी प्रतिक्रियाओं में सुधार कर सकते हैं। ये नियामक तनावपूर्ण परिस्थितियों में भी पौधों के स्वास्थ्य और कार्य को बनाए रखने में मदद करते हैं।

जैव रासायनिक परिवर्तनः सैलिसिलिक एसिड अनुप्रयोग से एंटीऑक्सीडेंट एंजाइम और प्रोलाइन के स्तर में वृद्धि हो सकती है, जो नमी तनाव के कारण होने वाले ऑक्सीडेटिव तनाव से निपटने के लिए आवश्यक हैं। पादप विकास नियामकों द्वारा प्रेरित ये जैव रासायनिक परिवर्तन भारतीय सरसों के पौधों की समग्र तनाव सहनशीलता में योगदान करते हैं।

विकास संवर्धन: पादप विकास नियामक नमी के तनाव के संपर्क में आने वाले सरसों के पौधों में विकास, प्रकाश संश्लेषक दक्षता और एंजाइमेटिक गतिविधियों को बढ़ावा देने में सहायता करते हैं। वे पौधों की वृद्धि और विकास पर तनाव के नकारात्मक प्रभावों को कम करने में मदद करते हैं, अंततः फसल की लचीलापन में सुधार करते हैं।

सरसों में फूलों का गिरना कम करने के लिए विशिष्ट पादप वृद्धि नियामकों का उपयोग

सरसों में फूल गिरने को कम करने के लिए उपयोग किए जाने वाले विशिष्ट पौधे विकास नियामकों में शामिल हैं:

जिबरेलिक एसिडः जिबरेलिक एसिड सरसों की फसल के फूल आने की अवस्था के दौरान आमतौर पर इस्तेमाल किया जाने वाला विकास नियामक है। इसके प्रयोग से फूल की कलियाँ बनने को बढ़ावा मिलता है, फूलों का गिरना कम हो जाता है और परागण बढ़ता है, जिसके परिणामस्वरूप बीज निर्माण और उपज में वृद्धि होती है।

ऑक्सिन: ऑक्सिन, जैसे इंडोल-3-एसिटिक एसिड (आईएए), सरसों में फूल आने के दौरान उपयोग किए जाने वाले विकास नियामकों का एक और वर्ग है। वे फूलों की कलियों के निर्माण को प्रोत्साहित करने और फूल आने के समय को नियंत्रित करने में मदद करते हैं, एक साथ खिलने को सुनिश्चित करते हैं और सफल परागण को अधिकतम करते हैं

सरसों के लिए पादप वृद्धि नियामकों की अनुशंसित खुराक: सरसों के लिए पादप वृद्धि नियामकों की अनुशंसित खुराक विशिष्ट नियामक और पौधे की वृद्धि अवस्था के आधार पर भिन्न होती है। अलग-अलग सांद्रता और समय पर अलग-अलग पौधे विकास नियामकों का उपयोग किया गया था:

* बुआई के 20 और 40 दिन बाद 50 और 100 पीपीएम पर नेफथलीन एसिटिक एसिड स्प्रे किया जा सकता है।

* साइकोसेल को बुआई के 45 और 75 दिन बाद पर 50 और 100 पीपीएम पर लागू किया जा सकता है।

* 0.1 एमएम पर सैलिसिलिक एसिड (एसए), 25 पीपीएम पर जीए3, और 25 पीपीएम पर काइनेटिन का उपयोग लिया जा सकता है।

* जिबरेलिक एसिड के अनुप्रयोग का अध्ययन विभिन्न सांद्रता जैसे 0, 10-12, 10-10, 10-8ड जिबरेलिक एसिड और समय बुआई के 40 और 60 दिन बाद किया जा सकता है।

राजस्थान के शुष्क क्षेत्रों की मिट्टियों में एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन

लक्ष्मी मीणा पी.एच.डी. स्कॉलर, विस्तार शिक्षा विभाग, एम.पी.यू.ए.टी., उदयपुर (राजस्थान)

सरजीत यादव पी.एच.डी. स्कॉलर, विस्तार शिक्षा विभाग, एम.पी.यू.ए.टी., उदयपुर (राजस्थान)

डॉ. आशीष कुमार नागर विस्तार शिक्षा विभाग, सौरभ कृषि महाविद्यालय, हिण्डौन सिटी, (राजस्थान)

परिचय

राजस्थान का अधिकांश भू-भाग शुष्क और अर्ध-शुष्क क्षेत्र में आता है, जहां वर्षा सीमित, असमान और अनिश्चित रहती है। इन परिस्थितियों में फसल उत्पादन मुख्य रूप से वर्षा पर आधारित रहता है। राजस्थान के शुष्क इलाकों की मिट्टियां बनावट में हल्की होती हैं, जिनमें कार्बनिक पदार्थ और आवश्यक पोषक तत्वों की भारी कमी पाई जाती है। परिणाम स्वरूप, फसल उत्पादन कम हो जाता है और किसानों को उचित लाभ नहीं मिल पाता।इन समस्याओं से निपटने के लिए समेकित पोषक प्रबंधन (Integrated Nutrient Management) एक प्रभावी तरीका है, जो मिट्टी की उर्वरता बनाए रखते हुए पैदावार को स्थायी और और लाभकारी बनाता है।

राजस्थान की शुष्क मिट्टियों की विशेषताएँ

* **कम कार्बनिक पदार्थ :** मिट्टी में ह्यूमस और जैविक पदार्थों की मात्रा बहुत कम होती है।
* **मिट्टी में पर्याप्त जल न होना :** वर्षा का अधिकतर पानी वाष्प बनकर हवा में उड़ जाता है।
* **पोषक तत्वों की कमी :** मिट्टी में नाइट्रोजन, फास्फोरस और जिंक की भारी कमी पाई जाती है।
* **लवणीयता और क्षारीयता :** खारे भू-जल के प्रभाव से मिट्टी में नमक की मात्रा बढ़ जाती है।
* **मिट्टी का कटाव :** हवा और पानी के कारण मिट्टी की ऊपरी सतह कटती रहती है।

पोषक तत्वों की कमी और उसका प्रभाव

राजस्थान के शुष्क इलाकों में किसान हमेशा से बाजरा, मूंग, ग्वार, चना और अरहर जैसी फसलें उगाते आए हैं। क्योंकि ये फसलें सूखा झेलने की क्षमता के कारण इस क्षेत्र के लिए सबसे बेहतर मानी जाती हैं। लगातार खेती और रासायनिक उर्वरकों के असंतुलित इस्तेमाल से मिट्टी की उर्वरता धीरे-धीरे कम हो रही है। इसका सीधा असर फसलों की पैदावार और किसान की आमदनी पर दिख रहा है। इसीलिए मिट्टी की गुणवत्ता और उर्वरता बनाए रखना आज सबसे आवश्यक और चुनौतीपूर्ण हो गया है।

* **नाइट्रोजन की कमी :** पौधों की वृद्धि रुकती है और पत्तियों का रंग पीला हो जाता है।
* **फास्फोरस की कमी :** जड़ें कमजोर हो जाती हैं और दानों की संख्या कम हो जाती है।
* **जिंक/आयरन की कमी :** पत्तियाँ पीली पड़ने लगती हैं और फसल की पैदावार घट जाती है।

समेकित पोषक प्रबंधन: समेकित पोषक प्रबंधन (INM) प्रणाली में मिट्टी और फसल की सेहत बनाए रखने के लिए रासायनिक उर्वरक, जैविक खाद और जैव उर्वरकों का संतुलित इस्तेमाल किया जाता है। इसका मुख्य उद्देश्य मिट्टी की उपजाऊ क्षमता को स्थायी रूप से बनाए रखना है। INM अपनाने से फसल की पैदावार बढ़ती है और उत्पादन स्थायी बनता है। इसके परिणामस्वरूप किसान की आय में स्थिरता बनी रहती है और मिट्टी की गुणवत्ता बेहतर होती है। यह प्रणाली शुष्क क्षेत्रों की खेती- बाड़ी के लिए बेहद उपयोगी है।

INM (Integrated Nutrient Management) के प्रमुख घटक

रासायनिक उर्वरकों का संतुलित उपयोग * मिट्टी की गुणवत्ता के अनुसार NPK और सूक्ष्म पोषक तत्वों का सही उपयोग। * उर्वरकों का उचित मात्रा, समय और विधि के अनुसार प्रयोग करना चाहिए।

जैविक खाद * किसानों को गोबर की खाद, कम्पोस्ट और हरी खाद जैसे धैंचा और सनई का प्रयोग करना चाहिए। * पिछली फसल के अवशेषों को खेत में ही मिला देना चाहिए।

जैव उर्वरक (Biofertilizers) * राइजोबियम बैक्टीरिया दलहनी फसलों में नाइट्रोजन को स्थिर करने में सहायक होता है। * अजोटोबैक्टर और अजोस्पिरिलम बैक्टीरिया गैर-दलहनी फसलों में नाइट्रोजन की आपूर्ति करने में सहायक होते हैं। * PSB बैक्टीरिया मिट्टी में फास्फोरस को घुलनशील बनाने में मदद करता है। * मायकोराइजा पौधे की जड़ों को मजबूत करता है और इससे सूक्ष्म पोषक तत्वों का अवशोषण बढ़ता है।

हरी खाद और फसल चक्र: * खरीफ के मौसम में हरी खाद वाली फसलें बोकर उनकी जुताई करना। * किसानों को फसल चक्र अपनाना चाहिए, जैसे बाजरा के बाद चना या ग्वार उगाना।

मिट्टी और पानी का संरक्षण * मिट्टी और जल संरक्षण हेतु कंटूर बंडिंग, टांके, जोहड़ और नाड़ी जैसी पारंपरिक संरचनाओं का निर्माण किया जा सकता है। * मिट्टी में नमी बनाए रखने के लिए ड्रिप और स्प्रिंकलर सिंचाई तकनीक का उपयोग किया जा सकता है।

समेकित पोषक प्रबंधन (INM) से होने वाले लाभ * समेकित पोषक प्रबंधन अपनाने से मिट्टी की उर्वरता लंबे समय तक बनी रहती है। * संतुलित पोषण से फसलें अधिक उत्पादन देती हैं और उनकी गुणवत्ता में भी सुधार होता है। * समेकित पोषक प्रबंधन अपनाने से फसलों की सूखा सहन करने की क्षमता बढ़ती है। * खेती में संतुलित संसाधन उपयोग करने से कुल लागत घट जाती है। * INM तकनीक अपनाकर किसान फसल उत्पादन के साथ-साथ पर्यावरण की रक्षा भी कर सकते हैं।

राजस्थान में कुछ सफल उदाहरण

झुंझुनू और नागौर : गोबर की खाद और फसल अवशेष खेत में मिलाने से बाजरा और ग्वार की पैदावार में 15-20% की वृद्धि हुई।

जयपुर और टोंक : दलहनी फसल चक्र अपनाने से मिट्टी में नाइट्रोजन की मात्रा बढ़ गई।

बीकानेर : ड्रिप सिंचाई और INM तकनीक अपनाने से मूंगफली और मूंग की उपज में वृद्धि हुई।

निष्कर्ष: राजस्थान के शुष्क क्षेत्रों में खेती की मुख्य कठिनाई मिट्टी की उर्वरता का घट जाना और पोषक तत्वों की कमी है। ऐसे में समेकित पोषक प्रबंधन (INM) एक स्थायी और वैज्ञानिक समाधान है। किसानों द्वारा रासायनिक उर्वरकों के साथ जैविक खाद, हरी खाद और जैव उर्वरकों का संतुलित उपयोग करने से मिट्टी की सेहत सुधार सकते हैं और साथ ही उत्पादन व आय में भी स्थिरता ला सकते हैं। इस कार्य में कृषि विश्वविद्यालय, वैज्ञानिक, किसान और सरकार : सभी को मिलकर एक साथ प्रयास करना होगा। यदि राजस्थान के किसान INM को अपनी खेती में शामिल कर लें, तो वे जलवायु परिवर्तन की कठिनाइयों का सामना करते हुए आने वाली पीढ़ियों के लिए उपजाऊ और टिकाऊ कृषि सुनिश्चित कर पाएंगे।

01/2025-26

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

रासायनिक से बेहतर जैविक खेती

✍ **युवराज कुमावत** यंग प्लांट ब्रीडर, मास्टर्स इन जेनेटिक्स ऍंड प्लांट ब्रीडिंग, जोबनेर, जयपुर, (राजस्थान)

✍ **रोहित कुमावत** पशु उत्पादन विभाग, महाराणा प्रताप कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, उदयपुर, (राजस्थान)

जैविक खेती

भारत तथा विश्व समुदाय में विगत तीन-चार दशकों में बढती हुई जनसँख्या का भरण पोषण करने के लिए कृषि उत्पादन में रसायनिक खाद, जहरीले कीटनाश पदार्थो का अतिशय उपयोग एक हानिकारक स्तर पहुँच गया है, जो कि मनुष्य के स्वास्थ, मिट्टी तथा परिस्थितिकी के लिए हानिकारक है. वर्तमान में खाद्य गुणवत्ता सुनिश्चित करने के साथ-साथ पर्यावरण को स्वस्थ रखने हेतु भी जागरूकता बढ़ी है. बढती हुई जनसँख्या का स्वस्थ भरण पोषण करने तथा मानव-पर्यावरण का सामंजस्य बनाए रखने के लिए जैविक खेती एक अपरिहार्य एवं मात्र विकल्प बची है

विश्व को जैविक खेती भारत देश की देन है, यहां के किसान चार सहस्त्राब्दि के कृषि ज्ञान से परिपूर्ण किसान है और जैविक खेती ही उन्हे इतने वर्षो तक पालती पोसती रही है। सामान्य भाषा में ''जैविक खेती कृषि की वह विधा है जिसमें मृदा को स्वस्थ व जीवंत रखते हुए केवल जैव अवशिष्ट, जैविक तथा जीवाणु खाद के प्रयोग से प्रकृति के साथ समन्वय रख कर टिकाऊ फसल उत्पादन किया जाता है''. अपने पूर्ण रूप में जैविक खेती एक टिकाऊ उत्पादन प्रक्रिया है जो प्राकृतिक प्रक्रियाओं तथा संसाधनों पर आधारित है

जैविक खेती से होने वाले लाभ

* कृषकों की दृष्टि से लाभ
* भूमि की उपजाऊ क्षमता में वृद्धि हो जाती है।
* सिंचाई अंतराल में वृद्धि होती है।

जैविक बैंगन की खेती

* रासायनिक खाद पर निर्भरता कम होने से लागत में कमी आती है।
* फसलों की उत्पादकता में वृद्धि।

मिट्टी की दृष्टि से लाभ

* जैविक खाद का उपयोग करने से भूमि की गुणवत्ता में सुधार आता है।
* भूमि की जल धारण क्षमता बढ़ती है।
* भूमि से पानी का वाष्पीकरण कम होगा।

पर्यावरण की दृष्टि से लाभ

* भूमि के जल स्तर में वृद्धि होती है।
* मिट्टी, खाद्य पदार्थ और जमीन में पानी के माध्यम से होने वाले प्रदूषण मे कमी आती है।
* कचरे का उपयोग खाद बनाने में होने से बीमारियों में कमी आती है।
* फसल उत्पादन की लागत में कमी एवं आय में वृद्धि ।
* अंतर्राष्ट्रीय बाजार स्पर्द्धा में जैविक उत्पाद की गुणवत्ता का खरा उतरना।

हरित क्रांति के परिणाम

1960 के दशक में आई हरित क्रांति ने तीव्र कृषि उत्पादन, विशेष रूप से खाद्यान्न उत्पादन के एक नए युग का सूत्रपात किया। इस क्रांति का एक प्रमुख उत्प्रेरक रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग रहा। भारत तब खाद्यान्न की अत्यंत कमी से जूझ रहा था और कृषि में इन रासायनिक उर्वरकों ने सहयोगी भूमिका निभाई। रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशकों और सिंचाई में भारी निवेश ने उच्च फसल उत्पादन का लक्ष्य पूरा किया। निश्चय ही हरित क्रांति ने तात्कालिक संकट का समाधान किया। किंतु हरित क्रांति ने भविष्य के लिये एक हानिकारक पद्धति का सूत्रपात कर दिया। मृदा का क्षरण, जल-गहन और जल-प्रदूषणकारी खेती तथा पारिस्थितिकी के प्रतिकूल कृषि अभ्यास आदि से प्रत्येक रासायनिक कृषि से संबद्ध है। इस प्रकार का कृषि अभ्यास न तो कृषि की उन्नति के लिये लाभदायक है और न ही सार्वजनिक स्वास्थ्य के दृष्टिकोण से लाभकारी है। यह एक आश्चर्य का विषय है कि कृषि विशेषज्ञों, पर्यावरणविदों तथा सरकार द्वारा इसे रोकने हेतु किसी प्रकार के प्रयास नहीं किये गए। कृषि क्षेत्र में बदलाव हेतु कर्ज माफी, न्यूनतम समर्थन मूल्य, संविदा खेती जैसे प्रयासों पर बल दिया जाता रहा है, जिन्हें सतही ही कहा जा सकता है।

निष्कर्ष

भारत एवं विश्व के अन्य देशों के किसानों का अनुभव रहा हैं कि रासायनिक खेती को तत्काल छोड़कर जैविक खेती अपनाने वाले किसानों को पहले तीन सालों तक आर्थिक रूप से घाटा हुआ, चौथे साल ब्रेक-ईवन बिंदु आता है तथा पाँचवे साल से लाभ मिलना प्रारंभ होता है। भारत में जैविक खेती की संभावनाएँ तभी सफल हो सकती हैं जब सरकार जैविक खेती करने वालों को स्वयं के संस्थानों से प्रमाणीकृत खाद सब्सिडी पर उपलब्ध करवाए तथा चार साल की अवधि के लिये गारंटी युक्त आमदनी हेतु बीमा की व्यवस्था करके प्रारंभिक सालों में होने वाले घाटे की क्षतिपूर्ति करे। सरकार को पशुपालन को बढ़ावा देना चाहिये जिससे किसान जैविक खाद के लिये पूरी तरह बाजार पर आश्रित न रहें। तात्कालिक आवश्यकता यह है कि प्राथमिकताओं में परिवर्तन लाया जाए और सब्सिडी को रासायनिक कृषि से जैविक कृषि की ओर मोड़ा जाए जैसा कि सिक्किम राज्य ने किया है (सिक्किम को विश्व के प्रथम जैविक राज्य के रूप में चिह्नित किया गया है और वह यूएन फ्यूचर पालिसी अवार्ड का स्वर्ण पदक विजेता रहा, जबकि डेनमार्क को रजत पदक मिला)। पिछले वर्ष आंध्र प्रदेश द्वारा 'शून्य बजट प्राकृतिक खेती' परियोजना की शुरुआत की गई। सरकार को रासायनिक कृषि क्षेत्र को प्रदत्त अवांछित सब्सिडी को जैविक कृषि क्षेत्र की ओर मोड़ देना चाहिये और देश भर में कृषकों को प्रोत्साहित व प्रशिक्षित करना चाहिये कि वे जैविक कृषि अभ्यासों की ओर आगे बढें तथा इस प्रकार अपनी आजीविका में वृद्धि करें एवं रासायनिकों के खतरे से जीवन की रक्षा करें।

किचन गार्डनिंग: अपने आंगन में उगाएं सेहत और सुख

मीनू, आयशा बी. (शोध छात्रा) संसाधन प्रबंधन और उपभोक्ता विज्ञान विभाग , इंद्रा चक्रवर्ती सामुदायिक विज्ञान महाविद्यालय, चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार, (हरियाणा)

यशपाल यादव शोध छात्र, फार्म मशीनरी एवं पावर इंजीनियरिंग विभाग, कॉलेज ऑफ टेक्नोलॉजी एंड इंजीनियरिंग, एमपीयूएटी, उदयपुर (राजस्थान)

आज की तेज़ रफ़्तार ज़िंदगी में जब बाजार की सब्जि़यों में मिलावट, रासायनिक खाद और कीटनाशकों का उपयोग लगातार बढ़ता जा रहा है, ऐसे में किचन गार्डनिंग (रसोई बागवानी) एक नया लेकिन प्राचीन समाधान बनकर उभरा है। यह केवल पौधे उगाने की प्रक्रिया नहीं, बल्कि स्वस्थ जीवन, आत्मनिर्भरता और पर्यावरण संरक्षण का मार्ग है।

किचन गार्डनिंग क्या है?

किचन गार्डनिंग का अर्थ है घर के आस-पास या छत पर अपनी ज़रूरत की सब्ज़ियाँ, हरी पत्तियाँ, मसाले या औषधीय पौधे उगाना। इसके लिए बड़े खेत या ज़मीन की आवश्यकता नहीं होती। पुराने डिब्बे, बाल्टियाँ, बोतलें, ट्रे, प्लास्टिक के कन्टेनर और टूटे गमले तक इसमें काम आ सकते हैं। थोड़ी-सी जगह और थोड़े समय के निवेश से व्यक्ति अपने परिवार के लिए ताज़ा, स्वच्छ और पोषक भोजन उगा सकता है।

भारत के विविध जलवायु में लगभग हर मौसम के अनुरूप पौधे उगाए जा सकते हैं —

* **सर्दियों में:** पालक, मेथी, गाजर, मूली, गोभी, ब्रोकली
* **गर्मियों में:** टमाटर, मिर्च, भिंडी, लौकी, तुरई, खीरा
* **बरसात में:** धनिया, पुदीना, अदरक, हल्दी
* **औषधीय पौधे:** तुलसी, एलोवेरा, गिलोय, अजवायन, लेमनग्रास

इनसे न केवल घर की रसोई की ज़रूरतें पूरी होती हैं बल्कि यह औषधीय और पोषण लाभ भी प्रदान करती हैं।

कचरे से खाद: घर की मिट्टी का पोषण

* रसोई से निकलने वाले जैविक अपशिष्ट - जैसे सब्ज़ियों के छिलके, चाय की पत्ती, आदि को मिलाकर जैविक खाद बनाई जा सकती है।
* यह मिट्टी की उर्वरता बढ़ाने के साथ-साथ रासायनिक खादों की आवश्यकता घटाती है।
* एक साधारण बाल्टी या गड्ढे में रोज़ाना कचरे को डालते रहें, कुछ दिनों में यह प्राकृतिक खाद बन जाएगी।
* इससे घर का कचरा घटता है, पौधों की वृद्धि बढ़ती है और पर्यावरण को भी लाभ मिलता है।

पौधों की देखभाल और रखरखाव

* पौधों की वृद्धि के लिए धूप, पानी और हवा का संतुलन ज़रूरी है।
* सुबह की हल्की धूप सबसे उत्तम मानी जाती है।
* हर पौधे की ज़रूरत अलग होती है; जैसे तुलसी और टमाटर को प्रतिदिन धूप चाहिए, जबकि धनिया और मेथी आधी छाया में भी अच्छे से बढ़ते हैं।
* हर दूसरे दिन पानी देना, मिट्टी को नम रखना और महीने में एक बार खाद डालना पर्याप्त होता है।
* किचन गार्डन का नियम है: पौधों से बात करें - वे आपकी मेहनत का जवाब हरियाली से देंगे।

किचन गार्डनिंग के बहुआयामी लाभ

1. **स्वास्थ्य सुरक्षा:** ताज़ी, बिना रसायन की सब्ज़ियाँ मिलती हैं।
2. **पोषण में सुधार:** हरी पत्तेदार सब्ज़ियाँ आयरन, कैल्शियम और विटामिन का प्रमुख स्रोत हैं।
3. **मानसिक शांति:** पौधों की देखभाल से तनाव घटता है और मन प्रसन्न रहता है।
4. **पर्यावरण संरक्षण:** पौधे हवा को शुद्ध करते हैं और घर का तापमान घटाते हैं।
5. **आर्थिक बचत:** सब्ज़ियाँ और मसाले घर पर उगाने से खर्च कम होता है।
6. **परिवारिक जुड़ाव:** परिवार के सदस्य मिलकर पौधे लगाते हैं तो आपसी संबंध भी मज़बूत होते हैं।

महिलाएँ: हरित परिवर्तन की प्रेरणा

* ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में महिलाएँ किचन गार्डनिंग को अपनाकर आर्थिक और पोषण आत्मनिर्भरता की मिसाल पेश कर रही हैं।
* वे बच्चों को पौधों की देखभाल सिखाती हैं, जैविक खाद तैयार करती हैं और घर की छत या आँगन को हरा-भरा बनाती हैं।
* कई जगहों पर स्वयं सहायता समूह (Self Help Groups) महिलाओं को बीज, प्रशिक्षण और बाज़ार से जुड़ाव प्रदान कर रहे हैं, जिससे यह कार्य आय-सृजन का साधन भी बन रहा है।

निष्कर्ष: किचन गार्डनिंग केवल खेती नहीं – यह एक जीवनशैली है जो हमें प्रकृति से जोड़ती है और आत्मनिर्भर बनाती है। थोड़ी जगह, थोड़ी मेहनत और प्रकृति के प्रति प्रेम से कोई भी व्यक्ति अपने घर को हरा-भरा, स्वस्थ और सुंदर बना सकता है। हर पौधा जो हम लगाते हैं, वह हमें ऑक्सीजन, भोजन और सुख तीनों लौटाता है।

यही है असली "घर की हरियाली, घर की खुशहाली" का संदेश।

12/2025-26

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
हरियाणा

पौधों और पशुओं में जीनोम एडिटिंग: कृषि और जीव विज्ञान में नई क्रांति

डॉ. कृशानु रिसर्च फेलो भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद-केंद्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान करनाल, हरियाणा
श्वेता यादव शोध छात्रा, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद-राष्ट्रीय डेयरी अनुसंधान संस्थान, करनाल, हरियाणा
डॉ. शैलेन्द्र प्रताप सिंह सहायक प्राद्यापक IFTM यूनिवर्सिटी मुरादाबाद, उत्तर प्रदेश
डॉ. नितीश रंजन प्रकाश वैज्ञानिक, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद-केंद्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान करनाल, हरियाणा

परिचय

आधुनिक जीवविज्ञान में जीनोम एडिटिंग (Genome Editing) ने एक ऐसी क्रांति ला दी है, जिसने जीवन विज्ञान, कृषि, और चिकित्सा के क्षेत्र में नई संभावनाओं के द्वार खोल दिए हैं। यह तकनीक वैज्ञानिकों को किसी भी जीव के डीएनए (DNA) में सूक्ष्म परिवर्तन करने की सटीक क्षमता प्रदान करती है। पारंपरिक जीन संशोधन तकनीकों की तुलना में यह अधिक सटीक, तेज़ और विश्वसनीय है। साधारण शब्दों में कहा जाए तो, जीनोम एडिटिंग के माध्यम से वैज्ञानिक किसी पौधे या पशु के जीनोम में मौजूद विशेष जीन को "बदल" सकते हैं, "हटा" सकते हैं, या "जोड़" सकते हैं – जिससे जीव में मनचाही विशेषताएँ विकसित की जा सकती हैं।

पौधों में जीनोम एडिटिंग का महत्व

कृषि आज अनेक चुनौतियों का सामना कर रही है–जलवायु परिवर्तन, सूखा, बाढ़, मृदा लवणता, कीट और रोग आक्रमण जैसी समस्याएँ लगातार फसलों की उत्पादकता को प्रभावित कर रही हैं। पारंपरिक प्रजनन (breeding) विधियों से फसलों में सुधार संभव तो है, परंतु यह प्रक्रिया अत्यंत धीमी और सीमित होती है। यहीं पर जीनोम एडिटिंग ने एक नया मार्ग खोला है। विशेषकर CRISPR/Cas9 जैसी तकनीक ने पौधों के आनुवंशिक सुधार को तेज़, सरल और सटीक बना दिया है।

जीनोम एडिटिंग के प्रमुख उपयोग पौधों में

1.लवणता और सूखा सहनशील किस्में

उदाहरण: धान (Oryza sativa) और गेहूँ में जीनोम एडिटिंग द्वारा ऐसे जीन निष्क्रिय किए गए हैं जो लवणता के प्रति संवेदनशीलता बढ़ाते हैं।

2.कीट और रोग प्रतिरोधक फसलें * टमाटर, कपास और सोयाबीन में रोग प्रतिरोधक जीनों को सक्रिय कर पौधों को प्राकृतिक सुरक्षा दी गई है।

3.पोषण गुणवत्ता में सुधार * मक्का और धान में विटामिन ए, आयरन और जिंक की मात्रा बढ़ाने हेतु जीनोम एडिटिंग का उपयोग किया जा रहा है।

4.उच्च उत्पादकता और कम रासायनिक निर्भरता * यह तकनीक पौधों को कीटनाशक और उर्वरक पर निर्भरता घटाने में मदद करती है।

उदाहरण

* **धान (Rice):** OsSWEET जीन के संशोधन से बैक्टीरियल ब्लाइट प्रतिरोध विकसित किया गया।
* **टमाटर (Tomato):** SlMlo1 जीन के संपादन से पाउडरी मिल्ड्यू प्रतिरोधी किस्में तैयार की गई।
* **गेहूँ (Wheat):** TaGW2 जीन को संशोधित कर दाने के आकार और उपज में सुधार किया गया।

पशुओं में जीनोम एडिटिंग की भूमिका

पशुधन क्षेत्र में जीनोम एडिटिंग तकनीक का उपयोग अत्यधिक तेजी से बढ़ रहा है। इसका उद्देश्य न केवल पशुओं के स्वास्थ्य और उत्पादकता में सुधार करना है, बल्कि मानव रोगों की समझ और दवा विकास में भी सहायक बनना है।

प्रमुख अनुप्रयोग

1.रोग प्रतिरोधी पशु * सूअरों में PRRS वायरस प्रतिरोधी जीनोम एडिटिंग द्वारा विकसित किए गए हैं।

2.उच्च दुग्ध उत्पादन और गुणवत्ता * गायों में ß-casein जीन संशोधन से दूध की पोषण गुणवत्ता में सुधार संभव हुआ है।

3.मांस की गुणवत्ता और वृद्धि दर में सुधार * जीनोम एडिटिंग से मांस की कोमलता, प्रोटीन मात्रा और वसा प्रतिशत नियंत्रित किए जा सकते हैं।

4.मानव रोग मॉडल पशु निर्माण * मानव रोगों की चिकित्सा खोज में प्रयोग होने वाले "जीनोम एडिटेड चूहे" या "ज़ेब्राफिश मॉडल" अत्यंत उपयोगी सिद्ध हुए हैं।

प्रमुख जीनोम एडिटिंग तकनीकें

जीनोम एडिटिंग की तीन प्रमुख तकनीकें हैं –

तकनीक	विवरण	विशेषता
ZFNs (Zinc Finger Nucleases)	प्रारंभिक जीन संपादन तकनीक जिसमें डीएनए पहचान के लिए जिंक-फिंगर प्रोटीन उपयोग किए जाते हैं।	सटीक लेकिन जटिल
TALENs (Transcription Activator-Like Effector Nucleases)	डीएनए लक्ष्य पहचान के लिए TALE प्रोटीन आधारित तकनीक	उच्च विशिष्टता
CRISPR/Cas प्रणाली	RNA-गाइडेड ष्ट्ड्डह्य प्रोटीन द्वारा डीएनए को काटकर संपादन	सरल, सस्ता और अत्यंत सटीक

इनमें से CRISPR/Cas9 प्रणाली सबसे व्यापक रूप से प्रयोग की जा रही है क्योंकि यह प्रयोगशाला से लेकर फील्ड स्तर तक आसानी से लागू की जा सकती है।

नैतिक, जैव-सुरक्षा और नीतिगत पहलू

जीनोम एडिटिंग जितनी उपयोगी है, उतनी ही जिम्मेदारीपूर्ण भी। इसके नैतिक (Ethical) और जैव-सुरक्षा (Biosafety) पहलुओं पर गहन विचार आवश्यक है।

पर्यावरणीय जोखिम: जीन संपादित जीवों का पारिस्थितिकी तंत्र पर दीर्घकालिक प्रभाव अज्ञात है।

भोजन सुरक्षा (Food Safety): संपादित पौधों से प्राप्त खाद्य पदार्थों की सुरक्षा जांच आवश्यक है।

नीतिगत चुनौतियाँ: विभिन्न देशों में जीनोम एडिटिंग को लेकर नियम अलग-अलग हैं। भारत में भी बायोटेक्नोलॉजी रेगुलेटरी फ्रेमवर्क लगातार विकसित हो रहा है।

नैतिकता: मानव और पशु जीनोम संपादन को लेकर सामाजिक और धार्मिक दृष्टिकोणों में मतभेद हैं। इसलिए, वैज्ञानिकों और नीति-निर्माताओं को मिलकर इस तकनीक का जिम्मेदार और पारदर्शी उपयोग सुनिश्चित करना होगा।

भविष्य की दिशा

भविष्य में जीनोम एडिटिंग कृषि और पशुधन सुधार की रीढ़ की हड्डी बन जाएगी।

भविष्य की संभावनाएँ निम्न हैं:

* जलवायु-स्मार्ट फसलें जो चरम मौसम को झेल सकें। * सटीक पशुधन सुधार (Precision Breeding) जिससे कम संसाधनों में अधिक उत्पादन। * जैव-फार्मास्यूटिकल उत्पादन, जहाँ पशु दवाओं और टीकों के उत्पादन में प्रयोग होंगे। * AI और Omics तकनीकों के एकीकरण से नई जीन पहचान और संपादन की सटीकता और बढ़ेगी।

निष्कर्ष

जीनोम एडिटिंग केवल एक वैज्ञानिक आविष्कार नहीं, बल्कि आधुनिक हरित जैव-क्रांति का आधार है। यह तकनीक पौधों और पशुओं दोनों के लिए ऐसे नए आयाम खोल रही है जो भोजन सुरक्षा, जलवायु सहनशीलता, और सतत कृषि विकास के लिए अत्यंत आवश्यक हैं। भविष्य में जब CRISPR, AI और जैव सूचना विज्ञान (Bioinformatics) का संगम होगा, तब जीनोम एडिटिंग न केवल प्रयोगशाला तक सीमित रहेगी, बल्कि कृषि खेतों और पशुधन फार्मों में भी वास्तविक परिवर्तन लाएगी।

यह कहना उचित होगा — "जीनोम एडिटिंग वह चाबी है, जो जैविक विकास के अगले युग का द्वार खोलेगी।"

सब्ज़ी का जूस: जीवनदायी पेय या सॉफ्ट ड्रिंक: रोगों की जड़

✍ अखिलेश शर्मा, डॉ. दीपा शर्मा
✍ अंशुल शर्मा, अनुप्रिया उद्यानिकी एवं वानिकी महाविद्यालय, नेरी, हमीरपुर (हिमाचल प्रदेश)
✍ डॉ. धर्मेन्द्र कुमार कृषि विज्ञान केंद्र, चम्बा (हिमाचल प्रदेश)

प्रस्तावना: मानव जीवन में भोजन और पेय पदार्थ केवल स्वाद की पूर्ति नहीं करते, बल्कि स्वास्थ्य, ऊर्जा और दीर्घायु के लिए आधारशिला का कार्य करते हैं। बदलती जीवनशैली, व्यस्त दिनचर्या और बाजार की चमक-दमक ने आज के युवा और बच्चों को प्राकृतिक पेय पदार्थों से दूर कर दिया है। जहाँ एक ओर हमारे घर-आँगन की सब्ज़ियाँ ताजगी और पोषण का भंडार लिए बैठी हैं, वहीं दूसरी ओर कार्बोनेटेड सॉफ्ट ड्रिंक्स जैसे कोका-कोला और पेप्सी युवाओं की पहली पसंद बनती जा रही हैं।

सब्ज़ी का जूस अपने भीतर जीवनदायी तत्व छिपाए हुए है जो शरीर को रोगों से बचाते हैं और प्रतिरोधक क्षमता को मजबूत बनाते हैं। इसके विपरीत, सॉफ्ट ड्रिंक्स स्वाद और तात्कालिक ताजगी तो देते हैं, लेकिन दीर्घकाल में कई गंभीर बीमारियों का कारण बनते हैं। आज आवश्यकता है कि हम अपने चुनाव पर विचार करें–क्या हमें स्वास्थ्य की ओर ले जाने वाला सब्ज़ी का जूस चुनना चाहिए या रोगों की जड़ बनने वाले सॉफ्ट ड्रिंक्स का सेवन करना चाहिए?

सब्ज़ी के जूस का महत्व: प्राकृतिक रूप से प्राप्त सब्ज़ियाँ पोषण का खजाना मानी जाती हैं। जब इनका रस तैयार कर सेवन किया जाता है तो इनमें मौजूद आवश्यक पोषक तत्व शरीर द्वारा शीघ्र ही अवशोषित हो जाते हैं। सब्ज़ी का जूस केवल एक पेय नहीं, बल्कि संपूर्ण स्वास्थ्यवर्धक अमृत है।

1. **पोषक तत्वों का स्रोत**

विटामिन: गाजर, पालक, टमाटर और चुकंदर जैसे रस विटामिन A, C और K से भरपूर होते हैं।

खनिज तत्व: लौकी, खीरा और धनिया का रस कैल्शियम, आयरन, पोटैशियम और मैग्नीशियम प्रदान करता है।

2. **रोग-प्रतिरोधक क्षमता में वृद्धि:** सब्ज़ी जूस में मौजूद प्राकृतिक एंजाइम और विटामिन ष्ट शरीर की इम्यून सिस्टम को मजबूत बनाते हैं। नियमित सेवन से सर्दी-जुकाम, संक्रमण और मौसमी बीमारियों से बचाव होता है।

3. **पाचन और हृदय स्वास्थ्य** * लौकी और खीरे का रस पाचन तंत्र को संतुलित करता है। * चुकंदर का रस रक्त संचार को बढ़ाकर हृदय रोगों के खतरे को कम करता है। * पालक और गाजर का रस रक्तचाप को नियंत्रित रखने में सहायक है।

4. **बीमारियों से बचाव** * गाजर का रस आँखों की रोशनी बढ़ाने में सहायक है। * चुकंदर का रस एनीमिया और रक्त की कमी को दूर करता है। * करेला और लौकी का रस डायबिटीज़ रोगियों के लिए लाभकारी है।

सॉफ्ट ड्रिंक्स की वास्तविकता- आधुनिक दौर में सॉफ्ट ड्रिंक्स को "ताजगी का पेय" कहकर बेचा जाता है। टीवी, सोशल मीडिया और बड़े-बड़े खेल आयोजनों के विज्ञापन इन्हें युवाओं की जीवनशैली का प्रतीक बना देते हैं। लेकिन वास्तविकता इससे बिल्कुल विपरीत है। इन कार्बोनेटेड ड्रिंक्स में स्वाद और आकर्षण तो होता है, पर स्वास्थ्य के दृष्टिकोण से ये शरीर को धीरे-धीरे नुकसान पहुँचाते हैं।

1. **संरचना**

उच्च मात्रा में शक्कर: एक बोतल (300 ml) सॉफ्ट ड्रिंक में लगभग 7-8 चम्मच चीनी होती है, जो दिनभर की अनुशंसित मात्रा से कहीं अधिक है।

कैफीन: बार-बार सेवन से नींद की कमी, बेचैनी और लत जैसी समस्याएँ उत्पन्न होती हैं।

कार्बन डाइऑक्साइड गैस: यह पाचन तंत्र पर दबाव डालती है और पेट फूलने (Bloating) की समस्या को बढ़ाती है।

कृत्रिम रंग व फ्लेवर: इनमें प्रयुक्त रसायन दीर्घकाल में यकृत (लिवर) और गुर्दों पर नकारात्मक प्रभाव डालते हैं।

2. **तात्कालिक प्रभाव:** सॉफ्ट ड्रिंक पीने के तुरंत बाद व्यक्ति को कृत्रिम ताजगी और थोड़ी देर के लिए ऊर्जा का अहसास होता है। यह प्रभाव कैफीन और चीनी के कारण होता है, लेकिन कुछ ही समय में यह ऊर्जा घटकर थकान और चिड़चिड़ापन उत्पन्न करती है।

3. **दीर्घकालिक दुष्प्रभाव**

मोटापा और मधुमेह: अधिक चीनी शरीर में वसा जमा करती है और इंसुलिन असंतुलन पैदा करती है।

हृदय रोग और उच्च रक्तचाप: लंबे समय तक सेवन से हृदय संबंधी रोगों का खतरा बढ़ जाता है।

लत: कैफीन और अधिक चीनी मिलकर सॉफ्ट ड्रिंक की लत पैदा कर देते हैं, जिससे प्राकृतिक पेय की ओर रुझान घट जाता है।

4. **बच्चों और युवाओं पर असर:** बच्चों में यह मोटापा, दाँतों की समस्या और ध्यान केंद्रित करने की क्षमता पर नकारात्मक प्रभाव डालता है। युवाओं में यह एनर्जी ड्रिंक के रूप में इस्तेमाल होकर धीरे-धीरे गंभीर स्वास्थ्य जोखिम उत्पन्न करता है।

वैज्ञानिक व चिकित्सीय दृष्टिकोण: स्वास्थ्य पर पेय पदार्थों के प्रभाव को समझने के लिए केवल अनुभव ही नहीं बल्कि वैज्ञानिक अध्ययन और चिकित्सीय साक्ष्य भी महत्वपूर्ण हैं। जब हम सब्ज़ी के रस और सॉफ्ट ड्रिंक्स की तुलना करते हैं, तो वैज्ञानिक शोध स्पष्ट रूप से इनके बीच अंतर बताते हैं।

1. विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) की सिफ़ारिशें

* WHO के अनुसार, एक व्यक्ति को प्रतिदिन अपनी कुल कैलोरी का 10% से अधिक चीनी से नहीं लेना चाहिए।

* सॉफ्ट ड्रिंक की एक बोतल ही इस सीमा को पार कर जाती है, जबकि सब्ज़ी का रस इसमें प्राकृतिक शर्करा के साथ आवश्यक विटामिन और खनिज भी देता है।

2. **भारतीय चिकित्सा अनुसंधान परिषद (ICMR) के निष्कर्ष**

* ICMR रिपोर्ट के अनुसार भारत में बढ़ता मोटापा और मधुमेह का प्रमुख कारण शर्करा युक्त पेय पदार्थों का बढ़ा हुआ सेवन है। * वहीं, सब्ज़ियों और उनके रस का नियमित सेवन इन बीमारियों से बचाव में सहायक सिद्ध हुआ है।

3. **बच्चों और किशोरों पर वैज्ञानिक अध्ययन**

* विभिन्न शोध बताते हैं कि सॉफ्ट ड्रिंक का सेवन करने वाले बच्चों में मोटापे की संभावना 60% अधिक होती है।

* इसके विपरीत, सब्ज़ी के रस का सेवन करने वाले बच्चों में रोग प्रतिरोधक क्षमता बेहतर पाई गई है।

4. **चिकित्सकों की राय-** चिकित्सक मानते हैं कि रोग-प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने, रक्तचाप नियंत्रित रखने और पाचन को मजबूत करने के लिए सब्ज़ी का रस एक प्राकृतिक औषधि है। वहीं, सॉफ्ट ड्रिंक्स को "Lifestyle Diseases" यानी जीवनशैली जनित रोगों का प्रमुख कारण माना जाता है।

निष्कर्ष: मानव स्वास्थ्य का आधार प्राकृतिक आहार और पेय हैं। सब्ज़ी का रस जहाँ शरीर को पोषण, ऊर्जा और रोगों से लड़ने की शक्ति देता है, वहीं सॉफ्ट ड्रिंक्स केवल कृत्रिम स्वाद और तात्कालिक ताजगी देकर बीमारियों की जड़ साबित होते हैं।

आज आवश्यकता है कि हम अपनी जीवनशैली में सुधार करें और "स्वस्थ भारत" का सपना साकार करने के लिए सॉफ्ट ड्रिंक्स छोड़कर सब्ज़ी जूस और अन्य प्राकृतिक पेय अपनाएँ। यही वास्तविक जीवनदायिनी राह है।

12/2025-26

✍ **महिमा सामंत** (सहायक प्रोफेसर)
वीवीआईटी, (बेंगलुरु)

मिट्टी का रसायन: फसलों की जीवनरेखा

एक दिन किसान खेत में खड़ा सोचने लगा: "मैं साल दर साल खाद डाल रहा हूँ, लेकिन मिट्टी मुझे फसल क्यों नहीं दे रही? गलती कहाँ है?" इसका उत्तर मिट्टी के रसायन में छिपा है। मानव जीवन की सारी नींव मिट्टी पर टिकी है। भोजन, पानी, सांस लेने की हवा, औषधि–सब कुछ मिट्टी से ही आता है। फिर भी हमें मिट्टी बहुत सामान्य, हर जगह मिलने वाली वस्तु जैसी लगती है। पर वास्तव में मिट्टी एक जीवंत प्रणाली है। यह सिर्फ धूल या रेत नहीं है; इसमें अनेक रासायनिक प्रक्रियाएँ, सूक्ष्मजीवों की गतिविधियाँ, खनिजों की परस्पर क्रियाएँ होती रहती हैं। मिट्टी के भीतर लाखों सूक्ष्मजीव, केंचुए, कीट पर्यावरण संतुलन बनाए रखते हैं। इन्हें ही "मिट्टी के मौन श्रमिक" कहा जा सकता है। इनके बिना फसल जीवन असंभव है। मिट्टी अपने भीतर संग्रहित पोषक तत्वों से फसलों को जीवन देती है, जलचक्र को नियंत्रित करती है और पर्यावरण में संतुलन बनाए रखती है। इस दृष्टि से मिट्टी के रसायन को समझना सिर्फ वैज्ञानिक अनुसंधान तक सीमित नहीं, बल्कि किसान के दैनिक जीवन से भी जुड़ा है। मिट्टी का स्वास्थ्य सुरक्षित रखना मतलब हमारे भोजन की सुरक्षा, पर्यावरण की शुद्धता और भविष्य की जीवन-शक्ति को बचाना है।

मिट्टी की संरचना और रासायनिक गुण: मिट्टी विभिन्न घटकों से बनी होती है। इसमें खनिज, कार्बनिक पदार्थ, पानी और हवा सब शामिल हैं। इन घटकों का अनुपात और संतुलन ही मिट्टी की गुणवत्ता तय करता है। मिट्टी का pH यानी अम्लीयता और क्षारीयता यह निर्धारित करता है कि फसलें किस हद तक पोषक तत्व ग्रहण करेंगी। अम्लीय मिट्टी में लौह (Fe), मैंगनीज आदि अधिक मिलते हैं; क्षारीय मिट्टी में कैल्शियम, मैग्नीशियम अधिक उपलब्ध होते हैं। मिट्टी में मौजूद कार्बनिक पदार्थ पौधों को आवश्यक कार्बन प्रदान करते हैं और नमी बनाए रखने में मदद करते हैं। मिट्टी में कितनी चिकनी मिट्टी (clay), दोमट (loam) और रेत (sand) है, उसी पर निर्भर करता है कि वह पानी को कितना रोक पाएगी और खाद का कितना असर होगा।

मिट्टी का स्वभाव और pH-मिट्टी के स्वास्थ्य का तापमान मापक ही pH है। यह मिट्टी की अम्लीयता या क्षारीयता बताता है। pH सीधे पौधों में पोषक तत्वों की उपलब्धता को प्रभावित करता है। यानी pH सही हो तो फसल अच्छी, गलत हो तो नुकसान। सामान्यतः 6.0 से 7.5 के बीच का श्व्रा फसलों के लिए सर्वोत्तम माना जाता है। मिट्टी का pH किन बातों पर निर्भर करता है–वर्षा की मात्रा, मूल शिला (parent rock), सिंचाई के पानी की गुणवत्ता, उर्वरकों का प्रयोग और पौधों के अवशेषों का विघटन। इसलिए किसानों के लिए मिट्टी का श्व्रा नियमित रूप से जांचना बहुत ज़रूरी है। सही श्व्रा होने पर फसल अच्छी बढ़ती है और भोजन की गुणवत्ता भी सुधरती है।

मिट्टी की अम्लीयता

किसान का सवाल: "घर की खाद डालने पर भी फसल क्यों नहीं हो रही?" अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में मिट्टी अधिक अम्लीय हो जाती है। जब मिट्टी का pH 7 से कम हो जाता है तो नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटाश पौधों को नहीं मिलते। इससे जड़ें कमजोर हो जाती हैं। ऐसी मिट्टी को सुधारने हेतु चूना (lime) डाला जाता है, जो अम्लीयता को कम करके फसलों को जीवन देता है।

मिट्टी की क्षारीयता

किसान की चिंता: "खाद डालने पर भी पत्ते पीले क्यों हो जाते हैं?" मरुस्थल या पानी की कमी वाले क्षेत्रों में मिट्टी अधिक क्षारीय हो जाती है। pH 8 से ऊपर हो जाने पर लौह, जस्ता जैसे सूक्ष्म पोषक तत्व उपलब्ध नहीं हो पाते और पौधे पीले पड़ जाते हैं। ऐसी स्थिति में जिप्सम या गंधक डालकर मिट्टी की क्षारीयता घटाई जाती है।

सोडिसिटी: किसान की परेशानी: "मिट्टी इतनी कठोर हो गई है कि पानी ही नहीं जा रहा।" मिट्टी में सोडियम अधिक हो तो उसे "सोडिक मिट्टी" कहते हैं। इसमें पानी का प्रवेश मुश्किल होता है। बीज अंकुरित होने के बाद भी जड़ें मज़बूत नहीं हो पातीं। समाधान है जिप्सम का प्रयोग और सही सिंचाई पद्धति।

लवणता: तटीय क्षेत्रों या कम निकास वाले खेतों में लवणता अधिक होती है। मिट्टी में नमक बढ़ने पर पौधों की जड़ें पानी नहीं खींच पातीं। हरा खेत सफेद नमक से ढका हुआ लगता है। इसे सुधारने हेतु "लीचिंग" यानी मिट्टी में अधिक साफ पानी प्रवाहित कर नमक को नीचे धकेला जाता है।

नाइट्रोजन चक्र और उसका प्रभाव: मिट्टी का नाइट्रोजन चक्र कृषि जीवन का हृदय है। पौधों की वृद्धि के लिए ज़रूरी प्रोटीन नाइट्रोजन से ही बनते हैं। वायुमंडल में प्रचुर मात्रा में मौजूद नाइट्रोजन गैस को पौधे सीधे उपयोग नहीं कर सकते। मिट्टी के सूक्ष्मजीव इसे पहले अमोनिया, फिर नाइट्राइट और अंततः नाइट्रेट में बदलते हैं। यही नाइट्रेट रूप पौधों द्वारा ग्रहण किया जाता है। फसल कटने पर या पौधे सूखने पर यह पुनः मिट्टी में लौट आता है। लेकिन रासायनिक खाद के अत्यधिक प्रयोग से नाइट्रोजन बहकर भूजल को प्रदूषित करता है और प्राकृतिक संतुलन बिगाड़ता है। इसका समाधान है कार्बनिक खाद, जैव खाद और हरी खाद का उपयोग। ये नाइट्रोजन चक्र को स्वाभाविक रूप से बनाए रखते हैं।

कार्बन चक्र और मिट्टी की जीवनशक्ति: कार्बन चक्र मिट्टी की उर्वरता की रीढ़ है। फसल अवशेष, गोबर, पत्तियाँ और अन्य जैविक पदार्थ सड़कर ह्यूमस बनाते हैं, जो मिट्टी को कार्बन से समृद्ध करते हैं। सूक्ष्मजीव इस कार्बन को तोड़कर पौधों के लिए आवश्यक पोषक तत्व उपलब्ध कराते हैं। मिट्टी का कार्बन उसकी संरचना को बेहतर बनाता है, पानी रोकने की क्षमता बढ़ाता है और उसे सूखा तथा कटाव जैसी समस्याओं के प्रति अधिक मजबूत बनाता है। लेकिन अत्यधिक रासायनिक खेती, वनों की कटाई और जलवायु परिवर्तन मिट्टी के कार्बन को घटा रहे हैं, जिससे उपजाऊ भूमि धीरे-धीरे बंजर होती जा रही है। जैविक खेती, कम्पोस्ट का प्रयोग और ढकाव वाली फसलों (cover crops) की खेती कार्बन चक्र को पुनर्जीवित करती है और मिट्टी के दीर्घकालिक स्वास्थ्य को सुनिश्चित करती है।

अन्य पोषक तत्वों के चक्र

फास्फोरस चक्र : जड़ों की वृद्धि में सहायक। मिट्टी में अधिक होने पर भी तुरंत उपलब्ध नहीं होता, कुछ जीवाणु इसे उपलब्ध कराते हैं।

पोटाशियम चक्र : फल और फूल की गुणवत्ता बढ़ाने में मुख्य। यह खनिजों से धीरे-धीरे निकलता है।

इन चक्रों को बनाए रखने के लिए कम्पोस्ट और हरी खाद का प्रयोग आवश्यक है।

पोषक तत्वों की आवश्यकता: मिट्टी के पोषक तत्व पौधों के जीवन के लिए अत्यंत आवश्यक हैं। नाइट्रोजन पत्तों और तनों की वृद्धि में सहायक है, फास्फोरस जड़ों के विकास में, पोटाशियम फूल और फलों की गुणवत्ता बढ़ाने में। गंधक, जस्ता, बोरॉन जैसे सूक्ष्म पोषक तत्व भी पौधों के स्वास्थ्य के लिए ज़रूरी हैं। ये सभी तत्व प्राकृतिक चक्र के माध्यम से मिट्टी में घूमते रहते हैं और सूक्ष्मजीवों की मदद से पौधों को उपलब्ध होते हैं।

मिट्टी का स्वास्थ्य और परीक्षण की आवश्यकता: मिट्टी जीवित है या मृत, यह जानने के लिए परीक्षण आवश्यक है। परीक्षण से पता चलता है कि कौन से पोषक तत्व कम या अधिक हैं और pH कितना है। इससे किसान सही उर्वरक उचित मात्रा में डाल सकते हैं। इससे फसल उत्पादन बेहतर होता है और खाद की बर्बादी भी घटती है। हाल ही में भारत सरकार ने 'मिट्टी स्वास्थ्य कार्ड योजना' शुरू की है। इसके अंतर्गत किसानों को मिट्टी की रिपोर्ट मिलती है, जिसमें बताया जाता है कि किस मिट्टी में कौन सी फसल और कौन सा खाद उपयुक्त है।

मिट्टी की क्षति और संरक्षण: अत्यधिक रासायनिक खाद, कीटनाशक, लगातार एक ही फसल, पानी का अति प्रयोग–इनसे मिट्टी धीरे-धीरे कमजोर हो रही है। मिट्टी के सूक्ष्मजीव मर रहे हैं। पर समाधान भी है–हरी खाद (सेसबेनिया, मेथी), गोबर, पुआल, कम्पोस्ट वापस मिट्टी में डालना, ढकाव वाली फसल (cover crop) बोना, ढाल पर खेती (contour farming), वृक्षारोपण। इससे मिट्टी में फिर से जीवन लौट सकता है।

जैविक खेती: भविष्य का रास्ता: रासायनिक खाद और कीटनाशकों के अत्यधिक प्रयोग से मिट्टी अपनी मूल जीवशक्ति खो रही है। सूक्ष्मजीवों की सक्रियता घट रही है, कार्बन की मात्रा कम हो रही है और मिट्टी ÷बंजर÷ बन रही है। इसका विकल्प है जैविक खेती। गाँव की गोबर खाद, हरी खाद, जैविक कीटनाशक इस्तेमाल करने से मिट्टी फिर जीवंत हो जाती है। कार्बनिक पदार्थ मिट्टी में कार्बन प्रतिशत बढ़ाते हैं, जिससे नमी रोकने की क्षमता भी बढ़ती है। जैविक खेती से पौधे अधिक रोग-प्रतिरोधक बनते हैं।

मिट्टी सिर्फ किसान के लिए ही नहीं, हर व्यक्ति के जीवन का आधार है। मिट्टी के रसायन को समझना मतलब जीवन के रहस्यों को समझना है। मिट्टी स्वस्थ है तो अन्न, पानी, हवा–सब शुद्ध हैं। पोषक तत्वों को बचाना, नाइट्रोजन चक्र का संतुलन बनाए रखना, मिट्टी का परीक्षण करना और जैविक खेती अपनाना–ये सब आने वाले कल के लिए ज़रूरी कदम हैं। जलवायु परिवर्तन से मिट्टी की गुणवत्ता बदल रही है। अस्थिर वर्षा pH बिगाड़ती है, सूखा लवणता बढ़ाता है। मिट्टी का संरक्षण जलवायु परिवर्तन का उत्तर है। आज की पीढ़ी का कर्तव्य है मिट्टी को बचाना; तभी अगली पीढ़ी को हरित और शक्तिशाली पृथ्वी मिलेगी। "मिट्टी बची तो जीवन बचेगा" यह सिर्फ नारा नहीं–हमारे अस्तित्व की चेतावनी है। मिट्टी को बचाना मतलब भविष्य को बचाना।

लेखिका परिचय: महिमा सामंत एक इंजीनियरिंग कॉलेज में रसायन शास्त्र की प्राध्यापिका हैं, जिनकी गहरी रुचि मूल्य-आधारित शिक्षा, छात्र व्यक्तित्व निर्माण और समाजोन्मुखी शोध में है। शिक्षण कार्य के साथ-साथ वे साहित्य, लेखन और अनुसंधान में भी समान रूप से सक्रिय हैं। अब तक उन्होंने कई समीक्षात्मक शोध-पत्र प्रकाशित किए हैं और Springer तथा American Chemical Society के अंतर्गत आने वाली प्रतिष्ठित शोध पत्रिकाओं की समीक्षक के रूप में कार्य कर रही हैं। उनके लेखन में शिक्षा के अदृश्य भावनात्मक एवं नैतिक पहलुओं की गहरी समझ, संवेदनशील दृष्टिकोण और अनुभवजन्य दृष्टि स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। वे मानती हैं कि शिक्षा केवल ज्ञान का हस्तांतरण नहीं, बल्कि मूल्य, प्रेरणा और जीवन-दृष्टि देने की प्रक्रिया है।

उनकी रचनाएँ विभिन्न प्रतिष्ठित मंचों पर प्रकाशित हुई हैं—"एक मौन मार्गदर्शक" (साहित्य कुंज), "पहला क़दम भी न मिले तो अनुभव की राह कैसे चले" (हिन्दी कुंज), "रिश्तों में फूल खिले जब सास-बहू बने माँ-बेटी" (परिकल्पना समय), "BE और MSc शिक्षा के स्तर नहीं, सोच के आईने हैं" (प्रवक्ता), "चेहरे से स्क्रीन तकः रिश्तों की बदलती तस्वीर" (नई गूँज), "मौन की धोरियाँ: जब अजनबी अपने बन गए" (नई गूँज),"हिन्दी: अतीत की विरासत, वर्तमान की शक्ति और भविष्य का स्वप्न" (देशबन्धु राष्ट्रीय समाचारपत्र, नई दिल्ली)। इसके अलावा उनके कुछ लेख अंग्रेज़ी और कन्नड़ में भी प्रकाशित हुए हैं।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

आलोक कुमार, कालीकांत चौधरी
प्रमोद कुमार तिवारी
जिला कृषि पदाधिकारी,सहायक परियोजना निदेशक (आत्मा) एवं प्रखण्ड कृषि पदाधिकारी (आत्मा),
जिला कृषि कार्यालय सिवान, कृषि विभाग बिहार

गुणवत्तापूर्ण हरे चारे हेतु रिजका की वैज्ञानिक खेती

महत्वः रिजका शुष्क जलवायु क्षेत्रो के लिए एक महत्वपूर्ण चारे वाली फसल है। इसमें सूखे को सहने की अद्भुत क्षमता पाई जाती है। इसलिए इसे शुष्क जलवायु में भी आसानी से उगाया जा सकता है। कम लागत में अच्छी पैदावार देने के कारण इसे शुष्क क्षेत्रो के किसानो के लिए वरदान माना जाता है। हरे चारे में सामान्यतः 15-20 प्रतिशत प्रोटीन, 1.5 प्रतिशत कैल्शियम, 0.2 प्रतिशत फ़ास्फ़रोस तथा विटामिन ए, बी, डी, प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। इस फसल में एकवर्षीय एवं बहुवर्षीय दोनों प्रकार की किस्मे पाई जाती है। इन्हीं लाभदायक गुणों के कारण इसे चारे फसलो की रानी भी कहा जाता है।

भारत में क्षेत्रफल और विस्तारः भारत में रिजका का क्षेत्रफल लगभग दस लाख हेक्टेयर है जो मुख्यतः राजस्थान, पंजाब, हरियाणा, बिहार, उत्तरप्रदेश, गुजरात, महाराष्ट्र और तमिलनाडु में पाया जाता है।

मृदा एवं जलवायुः रिजके को विभिन्न प्रकार की मृदाओ पर उत्पादित किया जा सकता है, परन्तु अच्छी निकासी वाली रेतीली दोमट मिट्टी इसके लिए सर्वश्रेष्ठ है। क्षारीय मृदा इसके लिए उपयुक्त नहीं मानी जाती है, पर अम्लीय मृदा पर चुने के प्रयोग द्वारा सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है। अच्छी बढवार के लिए 20-25 डिग्री तापमान उपयुक्त रहता है।

महत्वपूर्ण सस्य प्रणालीः भारत में लूसर्नकी खेती शीतकालीन ऋतु में होती है। इस फसल का अधिक उत्पादन लेने हेतु की महत्वपूर्ण सस्य प्रणाली इस प्रकार से है।

बाजरा-लूसर्न, मक्का-लूसर्न, चावल- लूसर्न, ज्वार-लूसर्न, सोयाबीन-लूसर्न , लोबिया+मक्का-लूसर्न

खेत की तैयारीः पलेवा करने के बाद मिट्टी

पलटने वाले हल से एक बार जुताई करनी चाहिए। इसके उपरांत दो बार देसी या कंट्री हल से जुताई करें। ज़मीन को समतल बनाने के लिए सुहागा अवश्य लगाएं। अच्छे अंकुरण के लिए मिटटी का भुरभुरा होना अतिआवश्यक है।

बीज दर एवं बिजाईः छिटकाव विधि द्वारा 20-25 किलो बीज प्रति हेक्टेयर उपयुक्त है। इसका बीज बहुत ही छोटा होता है,इसलिए अधिक गहराई पर बीज का अंकुरण नही हो पाता है। बीज की गहराई 1.5 सेंटीमीटर से अधिक नही होनी चाहिए। भारी मिट्टी में मेंढ़ पर छिडकाव किया जाना चाहिए। बिजाई का उपयुक्त समय अक्टूबर का दूसरा पखवाडा है। इसके पश्चात बिजाई करने से पैदावार में कमी आती है।

खाद एवं उर्वरकः फलीदार पौधा होनेके कारण यह वायुमंडलीय नत्रजन को स्थिरीकरण करने में सक्षम है। इसके लिए बीजो को राइजोबियम मेलिलोटी प्रजाति द्वारा उपचारित करना चाहिए। आखिरी जुताई के समय 20 किलो नत्रजन, 60-75 किलो फ़ास्फ़रोस और 40 किलो पोटाश प्रति हेक्टेयर मिटटी में अच्छी तरह से मिला दें। अच्छी प्रकार से सड़ी गोबर की खाद का प्रयोग (20 टन प्रति हेक्टेयर) करना फसल के लिए लाभदायक रहता है। रेतीली मिटटी में बोरोन की कमी पाई जाती है जिसके कारण "लूसर्नयेलो" नामक विकार देखा जा सकता है, जिसके कारण पत्तियां पीली पड़ जाती है। इसके बचाव के लिए 0.2 प्रतिशत बोरेक्स का छिडकाव अनुमोदित है। नत्रजन स्थिरीकरण को बढ़ाने के लिए मोलिबिडेनम 2 किलो प्रति हेक्टेयर की दर से उपयोग करें।

जल प्रबंधनः अच्छे अंकुरण के लिए पलेवा करना आवश्यक है। रिजके को स्थापित होने में समय लगता है। इसलिए शुरुआती दिनों में सिंचाई का होना अति आवश्यक है। शुरुआत के दिनों में सिंचाई का अंतराल 7-10 दिन होना चाहिए। जड़ विकसित होने के बाद यह अंतराल 25-30 दिन कर देना चाहिए। एक किलो सुखा चारा पैदा करने के लिए लगभग 850-900 लीटर पानी की आवश्यकता होती है।

खरपतवार नियंत्रणः अमरबेल इस फसल का मुख्य परजीवी खरपतवार है। इसके बचाव के लिए परजीवी रहित बीज की बुवाई करें। फसल चक्र को बढ़ावा दें। पूर्णतः सड़ी खाद का प्रयोग करें। ग्रीष्मकालीन ऋतु के दौरान गहरी जुताई अवश्य करें। खेत को साफ़ रखें। इसके नियंत्रण के हेतु पेंडीमैथलीन (1-1.5 किलो)(बिजाई के बाद या जमाव से पहले) या प्रोनामीड 2 किलो प्रति हेक्टेयर 20 दिन बाद छिड़काव करें। जैव खरपतवारनाशी कोलेटोट्राईकम ग्लोईस्पोरोईडस का प्रयोग अमरबेल को नियंत्रित करने के लिए किया जा सकता है।

उन्नत प्रभेद

क्रमांक	प्रभेद का नाम	अनुशंसा क्षेत्र	हरे चारे की पैदावार(टन/है.)
1.	सिरसा 8	उत्तरी भारत	80-85
2.	आनन्द 2	गुजरात, मध्य प्रदेश, राजस्थान	80-100
3.	आनन्द 3	पहाड़ी क्षेत्रो के लिए	60-65
4.	आनन्द लूसर्न 3	गुजरात, महाराष्ट्र, राजस्थान	90-100
5.	आनन्द लूसर्न 4	गुजरात, महाराष्ट्र, राजस्थान	80-90
6.	एल.एल.कम्पोजिट5	पंजाब, हरियाणा, राजस्थान	70-80
7.	को.1	तमिलनाडु, कर्नाटक	80-90
8.	आर.एल.88	सभी क्षेत्रो के लिए	70-80
9.	चेतक (एस.244)	मध्य प्रदेश,राजस्थान,उत्तर प्रदेश	140-150
10.	एन.डी.आर.आई.सिलेक्शन 1	उत्तरी क्षेत्रो के लिए	90-100
11.	को.2	तमिलनाडु. कर्नाटक	85-90
12.	सिरसा टाइप 9	राजस्थान, हरियाणा, पंजाब,उत्तर प्रदेश	80-85

रोग प्रबंधन

रतुआः यह रिजके का एक सामान्य रोग है। छोटे भूरे रंग के धब्बे पतियों पर देखने को मिलते हैं। पैदावार में कमी देखने को मिलती है। इसके रोकथाम हेतु 1-2 मिली प्रति लीटर पानी या डाईथेन एम 45 के 0.25% घोल का बीमारी दिखने के पश्चात छिड़काव करें।

कटाईः पहली कटाई बुवाई के 50-55 दिन उपरांत करें। अन्य कटाईयाँ पहली कटाई के 25-35 दिन उपरांत करें। एक वर्ष में 7-8 कटाईयाँ ली जा सकती है। सामान्यतः एक हेक्टेयर से 70-80 टन हरा चारा प्राप्त किया जा सकता है।

बीज उत्पादनः पश्चिमी एवं दक्षिणी माध्यम भारत बीज उत्पादन के लिए उपयुक्त है। बीज उत्पादन के लिए अंतिम कटाई जनवरी में लें। फूलों के पूर्णतः खुल जाने पर सिंचाई रोक देनी चाहिए। बीज उत्पादन हेतु पंक्ति से पंक्ति की दूरी 50 सेंटीमीटर होनी चाहिए। 0.5 प्रतिशत बोरेक्स का स्प्रे बीज उत्पादन के लिए लाभदायक रहता है। फलियों के सूख जाने पर बीज के लिए कटाई करें। इससे सामान्यतः 200-300 किलो प्रति हेक्टेयर बीज प्राप्त किया जा सकता है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

बेकरी इकाई : ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्र के लिए आय का एक अच्छा श्रोत

✍ **डॉ. मो. इरफ़ान अहमद अंसारी** सहायक प्राध्यापक सह कनीय वैज्ञानिक, पी.आई.,ए. आई. सी. आर. पी. ऑन पी. एच. ई. टी, कृषि अभियंत्रण विभाग, बिरसा कृषि विश्वविद्यालय, राँची-834006 (झारखण्ड)

✍ **ई. अगुस्टीन गुड़िया** एस. आर. एफ़., ए. आई. सी. आर. पी. ऑन पी. एच. ई. टी. कृषि अभियंत्रण विभाग, बिरसा कृषि विश्वविद्यालय, राँची-834006 (झारखण्ड)

✍ **डॉ. पर्व नायक** सहायक प्राध्यापक सह कनीय वैज्ञानिक, कृषि अभियंत्रण विभाग बिरसा कृषि विश्वविद्यालय, रांची-834006

बेकरी इकाई एक ऐसी इकाई है जिसकी सहायता से ब्रेड, केक, कुकीज, बिस्किट्स, पेस्ट्रीज, पाई आदि बनाया जाता है। बेकरी व्यवसाय खाद्य प्रसंस्करण का एक अहम हिस्सा है। हमारे देश में बेकरी खाद्य बहुत लोकप्रिय है। बेकरी खाद्य दुनिया भर में खाए जाने वाले सबसे लोकप्रिय खाद्यों में से एक है। इसकी माँग सम्पूर्ण भारत में बढ़ती जा रही है। भारत बेकरी उत्पादन में अमेरिका तथा चीन के बाद तीसरे स्थान पर है। भारत में बेकरी उत्पादों का बाजार 2023 में लगभग 12.6 बिलियन U.S डॉलर (www.imarcgroup.com) थी और यह सालों-साल बढ़ती जा रही है। अनुमान लगाया जाता है कि 2032 तक बेकरी उत्पादों का बाजार 29.4 U.S बिलियन डॉलर (www.imarcgroup.com) बढ़ सकती है। बेकरी उद्योग एक बड़ा उद्योग है, जिसमें बहुत से लोग कार्यरत है। लगभग 10 लाख से अधिक असंगठित छोटे पैमाने की बेकरी और 2000 से अधिक संगठित या अर्ध- संगठित बेकरी उद्योग भारतीय खाद्य प्रसंस्करण उद्योग का सबसे बड़ा खंड है। इन सभी कारणों से बेकरी उत्पादों का बाजार में हिस्सेदारी बढ़ रही है। बेकरी उत्पाद को प्रत्येक घर, होटल, रेस्तरां, कैंटीन तथा अन्य क्षेत्रों मे भी होता है। सुबह के नाश्ते से लेकर शाम के नाश्ते तक, पार्टी, उत्सव में भी बिस्कुट, कुकीज़, एवं अन्य बेकरी आइटम्स का प्रचालन बहुत अधिक होता जा रहा है। बेकरी खाद्य सामग्री की बात करें तो यह ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्रों में प्रति दिन एक अभिन्न हिस्सा का भाग होता जा रहा हैं। बढ़ती आबादी और बदलती जीवन शैली भारतीय बेकरी बाजार कों बढ़ावा दे रही है क्योंकि लोगों को ताजा केक, बिस्किट्स, कुकीज और पेस्ट्रीज आदि पसंद होता है। ये उत्पादें विभिन्न प्रकार के अनाज जैसे राई, गेहूँ, बाजरा, मडुआ, ज्वार, और जई के आटा का उपयोग करके तैयार किया जाता हैं जो बाजारों में आसानी से उपलब्ध है। इन अनाजों से बना उत्पाद आवश्यक पोषक तत्व प्रदान करता हैं जैसे, कैल्शियम, फायबर, लौह, ऊर्जा, वसा, प्रोटीन, विटामिन, खनिज आदि। बेकरी उद्योग स्थापित करने में कम लागत लगती है और लाभ ज्यादा होती है। इस व्यापार को घर से शुरू कर सकते हैं। इस व्यापार की खास बात यह भी है कि यह गांव, कस्बे, नगर और महानगर जैसे सभी जगहों पर चलती है। बेकरी व्यवसाय की मार्केटिंग के लिए सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म का प्रयोग किया जा सकता है। उद्योगों को बढ़वा देने के लिए सरकार भी कई तरह की सुबिधा प्रदान कर रही है जैसे, सबसिडी लोन प्रदान करना जिससे बेकरी इकाई स्थापित करने में दिक्कत ना हो। ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्र में बेकरी इकाई स्थापित कर सभी आयुवर्ग के लोग अपनी आय को बढ़ा सकते हैं। इस इकाई को स्थापित करने के लिए प्लेनेटरी मिक्सर, सिंगल डेक बेकिंग ओवन (दो ट्रे सहित), वजन करने का मशीन, बैंड सीलर, पिसाई करने की मशीन (ग्रैनडिंग मशीन) इत्यादि मशीनों की जरूरत होती है। बेकरी उत्पाद को बनाने में साधारणतः मैदा, आटा, खाने का तेल, घी, चीनी, नमक, प्रीमिक्स, रिफाइन तेल, काजू, किशमिश, टूटी फ्रूटी (चेरी), मिल्क एसेंस, वेनिला एसेंस, बेकिंग पाउडर, बेकिंग सोडा, पैकेट बनाने की सामग्री इत्यादि का प्रयोग किया जाता है। बेकरी खाद्य सामग्री में सभी खर्च काटने के बाद 1 ग्राम बेकरी उत्पाद में अनुमानित 10-30 रुपया तक की बचत हो सकता है। इससे यह पता चलता है कि बेकरी उद्योग से अच्छी कमाई किया जा सकता है। बेकरी खाद्य सामग्री बनाने में प्रयुक्त मशीनों से संबंधित दी गई जानकारी उन किसानों एवं युवाओं के लिए मददगार साबित हो सकता है जो स्थानीय स्तर पर बेकरी इकाई को स्थापित करने में अभिरुचि रखते हैं। लगभग एक से दो लाख रूपये की लागत से यह इकाई स्थापित किया जा सकता है। इस उद्योग से किसान, बेरोजगार महिला, युवा अपना आय का श्रोत बना सकते हैं। स्वरोजगार को बढ़ावा देने के लिए अखिल भारतीय समन्वित अनुसंधान परियोजना, कटाई उपरांत अभियांत्रिकी एवं प्रौद्योगिकी, अनुसंधान निदेशालय, बिरसा कृषि विश्वविद्यालय, कांके, राँची, के अंतर्गत बेकरी इकाई की स्थापना किया गया है। इच्छुक किसान भाइयों, महिलाएँ तथा युवाओं को इस इकाई को चलाने के लिए प्रशिक्षण भी दिया जाता है।

बेकरी प्रसंस्करण इकाई के प्रयोग में आने वाले विभिन्न मशीनों का विवरण निम्नलिखित है:

प्लेनेटरी मिक्सर: प्लेनेटरी मिक्सर एक बहुउद्देश्यीय उपकरण है विभिन्न प्रकार के आंटे को गुथने के लिए किया जाता है तथा अच्छी तरह से सामग्रियों को मिलाने के लिए किया जाता है। ग्रहीय मिक्सर का उपयोग विशेष रूप से पेस्ट, उच्च चिपचिपाहट, उच्च घनत्व वाली सामग्री को घोलने, मिश्रण करने, सानने और पोलीमराइजेशन और बहुत कुछ के लिए किया जाता है। इसमें तीन प्रकार के ब्लेड उपलब्ध है, जिसे अलग-अलग प्रकार के मिश्रण को गुथने में प्रयोग किया जाता है। इस मशीन में स्पीड कंट्रोलर लगे होते हैं जिससे मशीन की स्पीड कम या अधिक किया जाता है। इस मशीन के प्रयोग से श्रम जरूरत को कम किया जा सकता है। इस मशीन के प्रयोग से कम समय मे ज्यादा मिल हुआ आट तैयार कर सकते हैं। इस मशीन को संचालित करना आसान है तथा न्यूनतम रख रखाव की आवश्यकता होती है।

क्षमता: 10 लीटर अनुमानित मूल्यः रु. 28000/-
पावरः 0.5 एचपी

सिंगल डेक बेकिंग ओवन (दो ट्रे सहित): डेक ओवन एक ऐसा ओवेन है जिसका उपयोग विभिन्न प्रकार के बिस्कुट, केक, इत्यादि को बनाया जाता है। यह मशीन बिजली से संचालित होता है। इसमे एलेक्ट्रिकक हीटर लगा होता है जो बेकिंग कक्ष में उपस्थित हवा को गर्म करता है। डेक ओवन तेजी से ट्रे में रखे हुए सामग्री को समान रूप से पकता है। प्लेनेटरी मिक्सर के द्वारा तैयार किया गया विभिन्न प्रकार के

सामग्री को विभिन्न आकृति में काट कर ओवन में अलग-अलग तापमान पर पकाया जाता है। पके हुए खाद्य सामग्री को निकाल कर ठंडा किया जाता है और उसे पैक कर के बाजार मे बेचा जाता है। इस मशीन मे तापमान नियंत्रण लगे होते है जिसकी सहायता से इसका इस्तेमाल करना आसान हो जाता है। इसके अलावा इस मशीन में हीट इंडिकेटर, पावर इंडिकेटर और ओवर हीट प्रोटेक्शन लगे होते हैं। इस मशीन को संचालित करना आसान है तथा न्यूनतम रख रखाव की आवश्यकता होती है।

अनुमानित मूल्यः रु. 40000/- तापमानः अधिकतम 300°c

बैंड सीलर मशीनः प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थ को ज्यादा दिन तक सुरक्षित रखने के लिये पैक किया जाता है। पैक किये हुए खाद्य पदार्थ को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने में भी सहूलियत होती है। बैंड सीलर का प्रायोग बेकरी उत्पाद तथा अन्य खाद्य पदार्थो से भरे

पैकेट कों सील करने में किया जाता है। यह बिजली से चलने वाली मशीन है जो विभिन्न साइज तथा मोटाई के प्लास्टिक या लैमिनेटेड प्लास्टिक को सील करती है। अलग-अलग मोटाई के प्लास्टिक को सील करने के दौरान अलग-अलग तापमान की आवश्यक्ता होती है और इसके लिए मशीन में तापमान नियंत्रण इकाई भी लगी होती है। इस मशीन को संचालित करना आसान है तथा न्यूनतम रख रखाव की आवश्यकता होती है।

सीलिंग क्षमता: 400 - 500 पैकेट/ घंटा, अनुमानित मूल्य: 25000/- पावर: 80 वाट

किसान, बेरोजगार महिलाओं, युवा आदि को प्रशिक्षण

देने के लिए कई बेकरी उत्पादों को बनाने का तकनीक विकसित किया गया है जिसमें कुछ उत्पादों को बनाने की जानकारी नीचे दिया गया है।

वेनिला केक बनने का विधि (एक किलोग्राम)

सामग्री:

(i) प्रीमिक्स - 500 ग्राम
(ii) रिफाइन तेल - 50 मि. ली.
(iii) काजू - 50 ग्राम
(xi) किशमिश - 50 ग्राम
(vi) टूटी फरुटी (चेरी)- 50 ग्राम
(v) मिल्क एसेंस - 05 बूँद
(vi) वेनिला एसेंस - 05 बूँद
(vii) बेकिंग पाउडर - 05 ग्राम
(viii) बेकिंग सोडा - 02 ग्राम
(x) पानी - 250 मि. ली.

विधि: 1.प्रीमिक्स और रिफाइन तेल को मिक्सर में 2-3 मिनट तक अच्छे से मिलाएँ। 2.अब इसमें पानी को मिक्सर में 5-8 मिनट तक मिलाएँ जब तक हवा के बुलबुले पूरी तरह खतम ना हो जाए। 3.इसके बाद मिल्क एसेंस और वेनिला एसेंस को 2-3 मिनट तक मिलाएँ। 4.इसके बाद बेकिंग सोडा और बेकिंग पाउडर को 2-3 मिनट तक मिलाएँ। 5.अब काजु, किशमिश, टूटी फ्रूटी (चेरी) को मिलाएँ जिससे एक अच्छा मिश्रण तैयार हो जाए। 6.एक 6 इंच या 8 इंच का बेकिंग पैन (गोलकार या चौकोर) लें। बेकिंग पैन के अंदर के सतह को तेल से चिकना कर लें। 7.बेकिंग पैन के अंदर निचली सतह पर बटर पेपर रखें 8.बेकिंग पैन में मिश्रण डालें 9.बेकिंग पैन को ओवन में 160-170°C तापमान पर 35-40 मिनट तक रखें जब तक ऊपरी साथ भूरी ना हो जाए 10.इस तरह बेक्ट केक तैयार हो जाता है। 11.तैयार किए हुए केक को पैक करके रखें।

मल्टीग्रेन बिस्किट्स बनाने का विधि (एक किलोग्राम)

सामग्री:

(i) बाजरा का आटा - 250 ग्राम
(ii) मडुआ का आटा - 250 ग्राम
(iii) मक्खन (बटर) - 250 ग्राम
(vi) चीनी पाउडर - 250 ग्राम
(v) दूध पाउडर - 25 ग्राम
(vi) कस्टर्ड पाउडर - 20 ग्राम
(vii) बेकिंग पाउडर - 05 ग्राम
(viii) बेकिंग सोडा - 02 ग्राम
(ix) मिल्क एसेंस - 05 बूँद
(x) वेनिला एसेंस - 05 बूँद
(xi) पानी - अवश्यकता अनुसार

विधि:

1. सबसे पहले मक्खन और चीनी पाउडर को मिक्सर में 5 मिनट तक अच्छे से मिलाएँ ताकि कोई लम्प नहीं रहे।
2. अब इसमें मिल्क पाउडर और कस्टर्ड पाउडर को मिक्सर में 2-3 मिनट तक मिलाएँ।
3. इसके बाद मिल्क एसेंस और वेनिला एसेंस को 2-3 मिनट तक मिलाएँ।
4. इसके बाद बाजरा का आटा, मडुआ का आटा, बेकिंग पाउडर और बेकिंग सोडा को 5-8 मिनट तक मिलाएँ।
5. अगर नरम डो नहीं बन रहा है तो थोड़ा-थोड़ा पानी मिलाएँ जब तक नरम डो ना हो जाए।
6. डो तैयार हो जाने के बाद डो को बेल कर शीट तैयार करें।
7. अब शीट को कटर से मनचाहे आकार मे काट लें।
8. काटे गए आकार को ट्रे में रख कर 35 - 40 मिनट तक 160 -170 °C तापमान पर ओवेन में रखें।
9. इस तरह बिस्कुट तैयार हो जाता है और तैयर बिस्कुट को ठंडा करने के बाद पैक करके रखें।

मिट्ठा बिस्किट्स बनाने की विधि (एक किलोग्राम)

सामग्री:

(i) मैदा - 500 ग्राम
(ii) मक्खन (बटर) - 250 ग्राम
(vi) चीनी पाउडर - 250 ग्राम
(iii) दूध पाउडर - 25 ग्राम
(v) कस्टर्ड पाउडर - 20 ग्राम
(vi) इलायची पाउडर - 10 ग्राम
(vii) बेकिंग पाउडर - 05 ग्राम
(viii) बेकिंग सोडा - 02 ग्राम
(xi) मिल्क एसेंस - 05 बूँद
(x) वेनिला एसेंस - 05 बूँद

विधि:

1. सबसे पहले मक्खन और चीनी पाउडर को मिक्सर में 5 मिनट तक अच्छे से मिलाएँ ताकि कोई लम्प नहीं रहे।
2. अब इसमें मिल्क पाउडर और कस्टर्ड पाउडर को मिक्सर में 2-3 मिनट तक मिलाएँ।
3. इसके बाद मिल्क एसेंस और वेनिला एसेंस को 2-3 मिनट तक मिलाएँ।
4. इसके बाद मैदा, इलायची पाउडर, बेकिंग पाउडर और बेकिंग सोडा को 5-8 मिनट तक मिलाएँ।
5. अगर नरम डो नहीं बन रहा है तो थोड़ा-थोड़ा पानी मिलाएँ जब तक नरम डो ना हो जाए।
6. डो तैयार हो जाने के बाद डो को बेल कर शीट तैयार करें।
7. अब शीट को कटर से मनचाहे आकार मे काट लें।
8. काटे गए आकार को ट्रे में रख कर 25 -30 मिनट तक 160 -170°C तापमान पर ओवेन में रखें।
9. इस तरह बिस्कुट तैयार हो जाता है और तैयर बिस्कुट को ठंडा करने के बाद पैक करके रखें।

नमकीन बिस्किट्स बनाने का विधि (एक किलोग्राम)

सामग्री

(i) मैदा - 500 ग्राम
(ii) मक्खन (बटर) - 250 ग्राम
(iii) दूध पाउडर - 25 ग्राम
(iv) कस्टर्ड पाउडर - 20 ग्राम
(v) चीनी पाउडर - 125 ग्राम
(vi) बेकिंग पाउडर - 05 ग्राम
(vii) बेकिंग सोडा - 02 ग्राम
(viii) मिल्क एसेंस - 05 बूँद
(ix) वेनिला एसेंस - 05 बूँद
(x) रोस्ट जीरा - 10 ग्राम
(xi) नमक - 08 ग्राम
(xii) पानी - अवश्यकता अनुसार

विधि:

1. सबसे पहले मक्खन और चीनी पाउडर को मिक्सर में 5 मिनट तक अच्छे से मिलाएँ ताकि कोई लम्प नहीं रहे।
2. अब इसमें मिल्क पाउडर और कस्टर्ड पाउडर को मिक्सर में 2-3 मिनट तक मिलाएँ।
3. इसके बाद मिल्क एसेंस और वेनिला एसेंस को 2-3 मिनट तक मिलाएँ।
4. इसके बाद मैदा, नामक (अवश्यकता अनुसार) बेकिंग पाउडर और बेकिंग सोडा को 5-8 मिनट तक मिलाएं।
5. अगर नरम डो नहीं बन रहा है तो थोड़ा-थोड़ा पानी मिलाएँ जब तक नरम डो ना हो जाए।
6. डो तैयार हो जाने के बाद डो को बेल कर शीट तैयार करें।
7. अब शीट को कटर से मनचाहे आकार मे काट लें।
8. काटे गए आकार में भुना हुआ जीरा छिड़क कर आकार को ट्रे में रख कर 25 -30 मिनट तक 160 -170° C तापमान पर ओवेन में रखें।
9. इस तरह बिस्कुट तैयार हो जाता है और तैयर बिस्कुट को ठंडा करने के बाद पैक करके रखें।

बेकरी व्यवसाय शुरु करने के लिए किसान भाई, बहन तथा युवाओं को भारत सरकार के एम एस एम ई (MSME) के अंतर्गत पंजीकृत करा सकते हैं। इसके बाद व्यापारिक संस्था के नाम से बैंक खाता तथा पैन कार्ड बनवाने की आवश्यकता होती है। बेकरी उत्पाद का परीक्षण करा कर FSSAI का लाइसेंस भी प्राप्त करना होता है। इसके साथ-साथ स्थानीय नगर निगम से स्वास्थ्य लाइसेंस की भी जरुरत होती है। इस प्रकार बेकरी व्यवसाय इकाई को सुचारु रूप से चलाया जा सकता है। किसान भाई इस इकाई को स्थापित कर बेकरी से इकाई स्थापित कर अपनी आय को बढ़ा सकते हैं। यह इकाई रोजगार का एक अच्छा साधन बन सकता है।

आलू चिप्स प्रसंस्करण इकाई : ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्र के लिए आय का एक अच्छा श्रोत

✍डॉ. मो. इरफ़ान अहमद अंसारी सहायक प्राध्यापक सह कनीय वैज्ञानिक, पी.आई.,ए. आई. सी. आर. पी. ऑन पी. एच. ई. टी, कृषि अभियंत्रण विभाग, बिरसा कृषि विश्वविद्यालय, राँची–834006 (झारखण्ड)

✍डॉ. छाया सहायक प्राध्यापक सह कनीय वैज्ञानिक कृषि अभियंत्रण विभाग, बिरसा कृषि विश्वविद्यालय, राँची–834006 (झारखण्ड)

✍ई. अगुस्टीन गुड़िया एस. आर. एफ़., ए. आई. सी. आर. पी. ऑन पी. एच. ई. टी. कृषि अभियंत्रण विभाग, बिरसा कृषि विश्वविद्यालय, राँची–834006 (झारखण्ड)

✍डॉ. पर्व नायक सहायक प्राध्यापक सह कनीय वैज्ञानिक, कृषि अभियंत्रण विभाग बिरसा कृषि विश्वविद्यालय, राँची–834006

भारत देश आलू के सबसे बड़े उत्पादक देशों में एक है। जिन स्थानों पर आलू की खेती हेतु अनुकूल वातावरण पाया जाता है वहाँ खेती के मौसम में आलू का उत्पादन अत्यधिक मात्रा में होता है परन्तु उसका खपत तुरंत नहीं हो पाता। अतः आलू को लम्बे समय तक बचा कर रखने के लिए उसके भंडारण या प्रसंस्करण एवं मूल्य संवर्धन की आवश्यकता होती है। आलू का उत्पादन जहां भी होता है, मुख्यतः वहाँ आलू स्थानीय बाजार में कम दाम में ही बेच दिया जाता है। यदि आलू को स्थानीय स्तर पर प्रसंकृत कर बाजार में बेचा जाए तो किसानों की आमदनी भी बढ़ेगी और आलू के कटाई उपरांत होने वाले नुकसान को भी कम किया जा सकता है। आलू का इस्तेमाल न केवल एक दैनिक भोजन के रूप में विभिन्न सब्जियों को तैयार करने में होता है बल्कि आलू आज तेजी से चिप्स या वेफर्स के रूप में स्नैक फूड की तरह भी उपयोग होने लगा है। आलू के चिप्स प्रत्येक घर, होटल, रेस्तरां, कैंटीन तथा अन्य क्षेत्रों मे भी होता है। वर्तमान में अनेक बड़े एवं छोटे उद्योग आलू के चिप्स के निर्माण मे कार्यरत हैं। आलू के चिप्स दुनिया भर में खाये जाने वाले सबसे लोकप्रिय स्नैक फूड में से एक है। हमारे देश मे भी आलू चिप्स बहुत लोकप्रिय है। इसकी माँग सम्पूर्ण भारत में बढ़ती जा रही है। भारत में आलू चिप्स का बाजार सालों-साल बढ़ती जा रही है। इन्ही सभी कारणों से आलू के चिप्स का बाजार में हिस्सेदारी बढ़ रही है। आलू चिप्स उद्योग स्थापित करने में कम लागत लगती है और लाभ ज्यादा होता है, साथ ही साथ इससे कई लोगों को रोजगार भी मिलता है। उद्योगों को बढ़ावा देने के लिए सरकार भी कई तरह की सुबिधा प्रदान कर रही है जैसे सबसिडी लोन प्रदान करना जिसे आलू चिप्स प्रसंस्करण इकाई स्थापित करने मे दिक्कत ना हो। ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्र में आलू चिप्स प्रसंस्करण इकाई से सभी आयुवर्ग के लोग लगा कर अच्छी कमाई कर अपनी आय बढ़ा सकते हैं। आलू चिप्स प्रसंस्करण इकाई में साधारणतः पोटैटो प्रीलर (आलू छीलने की मशीन), पोटैटो स्लाइसर (आलू काटने की मशीन), पोटैटो चिप्स हाइड्रो ड्रायर, ट्रे ड्रायर (सुखाने का मशीन), इलेक्ट्रिक डीप फायर मशीन, आलू चिप्स स्वाद मशीन तथा पैकेजिंग मशीन का प्रयोग किया जाता है। साधारणतः लगभग 4-5 kg आलू से 1 kg फ्राई चिप्स (www.quora.com) तैयार किया जा सकता है। आलू के चिप्स में सभी खर्च काटने के बाद 1 ग्राद् में 30-40 रुपया तक की बचत होती है। इससे यह पता चलता है कि आलू चिप्स प्रसंस्करण कर अच्छी कमाई किया जा सकता है। आलू चिप्स बनाने में प्रयुक्त मशीनों से संबंधित दी गई जानकारी उन किसानों एवं युवाओं के लिए मददगार साबित हो सकता है जो स्थानीय स्तर पर आलू चिप्स प्रसंस्करण की लघु इकाई को स्थापित करने में अभिरुचि रखते हैं। लगभग एक से दो लाख रूपये की लागत से प्रसंस्करण इकाई स्थापित किया जा सकता है। आलू चिप्स बनाने के लिए सफेद आलू का प्रयोग किया जाता है जो किसानों से आसानी से प्राप्त हो सकता है और मंडी से भी खरीदा जा सकता है।

आलू से आलू चिप्स बनाने का सम्पूर्ण प्रक्रिया का चार्ट

कच्चे आलू, आलू को साफ करना, पीलिंग (आलू को छीलना), स्लाईसिंग (आलू को काटना), हाइड्रो ड्रायर (आलू स्लाइस को सुखाना) आलू स्लाइस ब्लानचिंग, चिप्स को फ्राई करना डीहाईड्रेशन (आलू स्लाइस को सुखाना), फ्लेभरिंग (स्वादनुसार नमक तथा मसाला मिलाना) चिप्स को फ्राई करना,आलू चिप्स फ्लेभरिंग (स्वादनुसार नमक तथा मसाला मिलाना), पैकेजिंग आलू चिप्स स्टोरेज (संग्रह करना)पैकेजिंग स्टोरेज (संग्रह करना)

आलू चिप्स प्रसंस्करण के दौरान प्रयोग में आने वाले विभिन्न मशीनों का विवरण निम्नलिखित है:

पोटैटो पीलर (आलू छीलने वाला मशीन) : आलू के बाह्य आवरण (छिलके) को हटाने के लिए पोटैटो पीलर का प्रयोग किया जाता है। इस मशीन का आंतरिक हिस्सा (बैरल) सैंड पेपर बोर्ड/एमरी रोलर से बना होता है जो आलू के छिलके को आसानी से छील कर अलग कर देता है तथा छिले हुए आलू को तुरंत पानी में डुबा कर रखा जाता है ताकि आलू में भूरा रंग न बन सके। इस मशीन में एक बार में 8-10 kg आलू रख कर दो से तीन मिनट तक चलाने पर छिलका निकल जाता है। आलू छीलते समय थोड़ा-थोड़ा पानी डालते रहना है ताकि आलू का छिलका अच्छी तरह से निकल सके। स्टैनलेस स्टील से निर्मित होने के कारण इस मशीन में उच्च दक्षता एवं मजबूत स्थिरता पायी जाती है। आलू को छीलने हेतु यह मशीन बहुत उपयुक्त है । इस मशीन को संचालित करना आसान है तथा न्यूनतम रख रखाव की आवश्यकता होती है। **क्षमता:** 50-60 किलोग्राम/ घंटा, अनुमानित मूल्यः रु. 24000/- पावरः 0.5 एचपी

पोटैटो स्लाइसर (आलू काटने की मशीन) : आलू चिप्स बनाने के लिए, पोटैटो स्लाइसर की सहायता से छिले हुए आलुओं को 1.5 से 3 मि.मी. की मोटाई में समान रूप से काटा जाता है। परंतु आवश्यकतानुसार स्लाइस की मोटाई को बढ़ाया या घटाया जा सकता है। इस मशीन से प्लेन तथा धारीदार स्लाइस काटा भी जाता है। इसके लिए मशीन में विभिन्न प्रकार के ब्लेड (कटर) को लगाने का प्रावधान है। आवश्यक्ता अनुसार ब्लेड का चयन कर अलग- अलग प्रकार के स्लाइस काटे जा सकते हैं। इस मशीन मे फ्रेंच फ्राई बनाने के लिए भी छिला हुआ आलू को काटा जा सकता है। इस मशीन को संचालित करना आसान है तथा न्यूनतम रख रखाव की आवश्यकता होती है। **क्षमता:** 200-150 किलोग्राम/ घंटा, अनुमानित मूल्य : रु. 25000/- पावरः 0.5 एच.पी.

पोटैटो स्लाइस हाइड्रो ड्रायर : पोटैटो स्लाइस हाइड्रो ड्रायर का प्रयोग कटे एवं धुले हुए आलू के स्लाइस को सुखाने के लिये होता है। इस इकाई में जालीदार बर्तन उच्च गति से घूमता है। आलू के स्लाइस को इस जाली पर रखकर तीव्र घुमाव दिया जाता है, जिससे सतह पर उपस्थित जल स्लाइस से अलग होकर बाहर निकल जाता है। परिणामस्वरूप स्लाइस की नमी में कमी आती है, जिससे चिप्स तलने में ऊर्जा तथा तेल की खपत कम हो जाती है। इस मशीन को संचालित करना आसान है तथा न्यूनतम रख रखाव की आवश्यकता होती है। **क्षमता:** 200-150 किलोग्राम/ घंटा, अनुमानित मूल्य : रु. 25000/- पावरः 0.5 एचपी

ट्रे ड्रायर (सुखाने का मशीन)

इस मशीन की सहायता से पोटैटो स्लाइस को सुखाया जाता है। पोटैटो स्लाइसर से कटे हुए स्लाइस को उबलते हुए पानी मे नमक डालकर 2 से 3 मिनट गर्म करते हैं। गर्म करने के बाद स्लाइस को पानी से छान कर निकाल देते हैं। उसके बाद स्लाइस को ट्रे ड्रायर (सुखाने का मशीन) में 50 °C – 60 °C तापमान पर सुखाते हैं। सूखे हुए चिप्स को फ्राई किया जाता है।ट्रे की संख्याः 6 अनुमानित मूल्य : रु. 60000 /-

इलेक्ट्रिक डीप फ्राईंग मशीन

इस मशीन का उपयोग सूखे हुए आलू चिप्स को तलने के लिए किया जाता है। इसमें स्टेनलेस स्टील का एक जार होता है, जिसमें तेल को उचित तापमान तक गर्म किया जाता है। जार के आकार के अनुरूप एक जालीदार टोकरी लगी होती है, जिसमें सूखे आलू चिप्स डालकर तलने की प्रक्रिया की जाती है। इस मशीन में तापमान नियंत्रक लगा होता है, जिससे संचालन सरल और सुरक्षित हो जाता है। साथ ही इसमें हीट इंडिकेटर, पावर इंडिकेटर तथा ओवरहीट प्रोटेक्शन जैसे सुरक्षा तंत्र भी उपलब्ध रहते हैं। अच्छी तरह से तले हुए चिप्स में अंत में स्वादनुसार नमक व अन्य मसाले मिलाकर पैकेजिंग हेतु तैयार किया जाता है। यह प्रक्रिया आलू चिप्स फ्लेवरिंग मशीन की सहायता से भी की जा सकती है। क्षमताः लीटर 6 अनुमानित मूल्यः रु. 4000/- तापमान रेंज : 30°C - 200°C

बैंड सीलर : प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थो को अधिक समय तक सुरक्षित रखने तथा परिवहन में सुविधा हेतु पैकेजिंग की जाती है। बैंड सीलर का उपयोग पोटैटो चिप्स तथा अन्य खाद्य पदार्थों से भरे पैकेटों को सील करने के लिए किया जाता है। यह बिजली से संचालित मशीन है, जो विभिन्न आकार एवं मोटाई वाले प्लास्टिक तथा लेमिनेटेड पैकेज को प्रभावी रूप से सील करने में सक्षम होती है। अलगङ्अलग मोटाई के पैकेट को सील करने के लिए तापमान में परिवर्तन किया जाता है, जिसके लिए मशीन में तापमान नियंत्रण इकाई उपलब्ध रहती है। इस मशीन से नाइट्रोजन गैस सिलिंडर को भी जोड़ा जा सकता है। चिप्स को नाइट्रोजन गैस के साथ या बिना नाइट्रोजन गैस के पैक किया जा सकता है। बिना नाइट्रोजन वाले पैकेट में चिप्स की उपयोग अवधि कम होती है, जबकि नाइट्रोजन पैकिंग से चिप्स का स्वाद, ताजगी और सुगंध लंबे समय तक सुरक्षित रहती है, क्योंकि नाइट्रोजन एक अक्रियाशील गैस है और पैकेट के अंदर किसी प्रकार की रासायनिक प्रतिक्रिया नहीं होने देती। यह मशीन सरल संचालन, उच्च दक्षता एवं न्यूनतम रख-रखाव की आवश्यकता के कारण उद्योगों में व्यापक रूप से उपयोग की जाती है। **सीलिंग क्षमता:** 400 - 500 पैकेट/ घंटा, अनुमानित मूल्यः रु. 25000/- पावरः 80 वाट

आलू चिप्स का व्यवसाय प्रारंभ करने के लिए किसान भाई भारत सरकार की एमएसएमई (MSME) योजना के अंतर्गत उद्योग का पंजीकरण करा सकते हैं। पंजीकरण के पश्चात व्यापारिक संस्था के नाम से बैंक खाता तथा पैन कार्ड बनवाना आवश्यक होता है। चिप्स का परीक्षण कराकर स्नस्फ्ल्ल लाइसेंस प्राप्त करना होता है तथा स्थानीय नगर निगम/नगर पंचायत से स्वास्थ्य लाइसेंस भी लेना अनिवार्य है। इन सभी औपचारिकताओं को पूरा करने के उपरांत आलू चिप्स उत्पादन इकाई को सुचारू रूप से संचालित किया जा सकता है। किसान भाई इस इकाई की स्थापना कर आलू का मूल्य संवर्द्धन करते हुए अपनी आय में उल्लेखनीय वृद्धि कर सकते हैं। साथ ही यह इकाई स्थानीय स्तर पर रोजगार उपलब्ध कराने में भी एक प्रभावी साधन सिद्ध हो सकती है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

लोबिया के प्रमुख रोग एवं उनका प्रबंधन

उमा पंत, अंजना सुरेश, स्वागत रंजन बेहेरा
सब्जी विज्ञान विभाग, कृषि महाविद्यालय, गोविन्द बल्लभ पंत कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, पंतनगर, (उत्तराखण्ड)

प्रगती नेगी सब्जी विज्ञान विभाग, बागवानी महाविद्यालय, वीर चंद्र सिंह गढ़वाली उत्तराखंड औद्यानिकी और वानिकी विश्वविद्यालय, भरसार, (उत्तराखण्ड)

लोबिया भारत तथा अन्य उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में उगाई जाने वाली सबसे महत्वपूर्ण फलीदार फसलों में से एक है। यह एक बहुउद्देशीय फसल है जिसका उपयोग हरे रंग की फली, सूखे बीज, चारा और मिट्टी के संवर्धन के लिए किया जाता है। पोषण से यह प्रोटीन, विटामिन और खनिजों में समृद्ध है, जो इसे लाखों लोगों के लिए पोषण का एक किफायती स्रोत बनाता है। सूखे तथा खराब मिट्टी के लिए इसकी अनुकूलन क्षमता के बावजूद लोबिया कई रोगों के लिए अतिसंवेदनशील है जो इसके उपज और गुणवत्ता को कम करते हैं। रोगों के लक्षणों व प्रबंधन पद्धतियों की एक अच्छी समझ किसानों को उनकी फसल की रक्षा करने तथा बेहतर फसल को सुरक्षित करने में मदद कर सकती है।

प्रमुख रोग एवं प्रबंधनः कॉलर रॉट यह एक फफूँद जनित रोग है जो भूमि जनित फफूँद के कारण होता है और पौधे के तने के निचले हिस्से (जहाँ वह मिट्टी से मिलता है) में सड़न पैदा करता है। पौधा पीला पड़ने लगता है और फिर सूख जाता है। इस रोग से पत्तियाँ मुरझाने लगती हैं, पौधा मुरझा जाता है और अंततः मर जाता है। गंभीर मामलों में पौधा आसानी से उखाड़ा जा सकता है। प्रबंधन बुआई से पूर्व बीजों का उपचार ट्राइकोडर्मा 5 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से करना चाहिए। बुआई से पूर्व ट्राइकोडर्मा कल्चर को 2.5 कि.ग्रा. प्रति 50 कि.ग्रा. अच्छी तरह से सड़ा हुआ गोबर की खाद में मिलाकर भूमि में डालना भी प्रभावी होता है। बुआई के 20 दिनों उपरांत ट्राइकोडर्मा 10 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर जड़ों को तर करना चाहिए। खरपतवार नियंत्रण समय-समय पर करते रहना चाहिए। त्वरित रोग नियंत्रण के लिए संध्या के समय कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 4 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर कॉलर क्षेत्र (जहाँ तना मिट्टी को छूता है) के समीप जड़ों को तर करना चाहिए। पत्ती धब्बा (लीफ स्पॉट) रोग लोबिया में यह रोग फफूँद या जीवाणु के कारण हो सकता है, जिससे पत्तियों पर छोटे- छोटे, भूरे रंग के अनियमित या गोलाकार धब्बे, जो बीच में भूरे या धूसर रंग और किनारों पर लाल-जामुनी रंग के होते हैं, दिखाई देते हैं। कभी-कभी, फलियों पर भी छोटे, गोलाकार धब्बे दिखाई दे सकते हैं, जिससे फलियां गिर सकते हैं। गंभीर मामलों में पत्तियाँ मुड़ जाती हैं, भूरे रंग की होकर सूख जाती हैं और समय से पहले झड़ जाती हैं, जिससे उपज कम हो जाती है। यह रोग गर्म और नम मौसम में अधिक पनपता है, जहाँ हवा और बारिश के छींटों से रोगजनक फैलते हैं। दूषित पानी, कीटों, हाथों और औजारों के जरिए भी यह एक पौधे से दूसरे पौधे तक फैल सकता है। प्रबंधन संक्रमित पत्तियों और पौधों के अवशेषों को हटाकर नष्ट कर देना चाहिए। पौधों के बीच पर्याप्त जगह छोड़ना चाहिए ताकि हवा का संचार बेहतर हो सके। इस रोग को नियंत्रित करने के लिए डाइफेनोकोनाजोल 1 मिलीलीटर प्रति लीटर या थायोफैनेट मिथाइल 1 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर 10 दिनों के अंतराल पर दो बार छिड़काव करना चाहिए। रस्ट (रतुआ) यह एक फफूँद जनित रोग है जो पत्तियों के ऊपरी भाग पर छोटे, लाल-भूरे रंग के उभरे हुए धब्बे (फफोल) के रूप में दिखाई देता है। जैसे-जैसे रोग बढ़ता है, पत्तियाँ पीले पड़ जाती हैं और गिर जाती हैं, जिससे पौधा कमजोर होने लगता है। तने पर साधारणतः लम्बे उभरे हुए धब्बे बनते हैं। गंभीर मामलों में यह रोग पूरे पौधे में फैल जाता है, जिससे पौधे की वृद्धि रुक जाती है और विकृति आ जाती है। प्रबंधन स्वर्ण हरिता एवं स्वर्ण सुफला जैसे रोग प्रतिरोधी किस्मों का उपयोग करना चाहिए। खेत में औसतन दो धब्बे प्रति पत्तियों के दिखने पर फफूँदनाशक जैसे बेयलेटन 1 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर 10 दिनों के अंतराल पर छिड़काव करते रहना चाहिए। कटाई उपरांत संक्रमित फसल के अवशेषों को हटा देना चाहिए। एन्थ्रेक्नोज (श्यामवर्ण रोग) यह एक फफूँद जनित रोग है जो पत्तियों, तनों और फलियों पर काले धब्बे पैदा करती है। पत्तियां मुड़ने लगती हैं और शिराएं भूरी हो जाती हैं। तनों और फलियों पर छोटे, काले धब्बे दिखने लगते हैं। बहुत अधिक संक्रमित फलियों में छोटे, फफूँद लगे हुए बंजर बीज पैदा होते हैं। पौधों की वृद्धि रुक जाती है, उपज कम हो जाती है और बीजों की गुणवत्ता खराब हो जाती है। प्रबंधन रोग प्रतिरोधी किस्मों के उच्च गुणवत्ता वाले, प्रमाणित बीजों का ही उपयोग करना चाहिए। पौधों के बीच पर्याप्त दूरी रखना चाहिए ताकि हवा का संचार हो सके। इस रोग को नियंत्रित करने के लिए फफूँदनाशक जैसे डाइथेन एम-45 का 2 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए। पाउडरी मिल्ड्यू (खस्ता फफूंदी) इस फफूँद जनित रोग का पहला लक्षण पत्तियों की ऊपरी सतह पर छोटे, सफेद या भूरे रंग के चूर्ण जैसे धब्बों की उपस्थिति है। संक्रमित पत्तियाँ पीले, फिर भूरे रंग की हो जाती हैं, मुड़ जाती हैं तथा विकृत हो जाती हैं और अंततः समय से पहले सूख जाती हैं। गंभीर संक्रमण से पत्तियाँ पूरी तरह से गिर जाती हैं। सफेद चूर्ण जैसे धब्बे कलियों, तनों और फलियों पर भी दिखाई देते हैं। पौधे कमजोर हो जाते हैं और उनका समग्र विकास रुक जाता है। फूलों और फलों का विकास बाधित होता है और वे छोटे या खराब हो जाते हैं। संक्रमण की गंभीरता और चरण के आधार पर उपज में 20-60 प्रतिशत की हानि हो सकती है। प्रबंधन पूसा कोमल जैसे प्रतिरोधी किस्मों का उपयोग करना चाहिए। वायु परिसंचरण में सुधार और आर्द्रता को कम करने के लिए पौधों के बीच उचित रिक्ति को बनाए रखना चाहिए। रोग के लक्षणों की पहली उपस्थिति दिखने पर घुलनशील गंधक (3 ग्राम प्रति लीटर पानी) या हेक्साकोनाजोल (0.05 प्रतिशत) जैसे फफूँदनाशकों का छिड़काव 10-15 दिनों के अंतराल पर करना आवश्यक है। स्क्लेरोटिनिया ब्लाइट यह एक फफूँद जनित रोग है जो लोबिया की फसल को काफी हानी पहुँचाता है। इसका पहला लक्षण मुख्य शाखाओं का मुरझाना और पीला पड़ना है। बीमारी आमतौर पर मृदा रेखा के पास तनों के आधार पर शुरू होती है। निचले तनों के रोगग्रस्त क्षेत्रों के आसपास रूई जैसी, धूसर-सफेद फफूँदीदार वृद्धि (माइसीलियम या कवकजाल) विकसित होती है। प्रभावित तनों पर मृत क्षेत्र (घाव) विकसित होते हैं, जो जल्दी से बढ़ते हैं। पौधे के तने और पत्तियों पर स्क्लेरोटिनिया की छोटी, काली, बीज-जैसी जीवित और अनियमित आकार की संरचनाएँ (स्क्लेरोटिया) दिखाई देती हैं। स्क्लेरोटिनिया ब्लाइट का एक विशिष्ट लक्षण तने का टूटना है। रोगग्रस्त तने के ऊतक अंगूठे और उंगलियों के बीच घुमाने पर आसानी से टूट जाते हैं। संक्रमण प्रायः फूलों से शुरू होकर हैं बाद में फलियों तक पहुँच जाता है। संक्रमित फलियाँ सिकुड़े हुए बीज और खराब गुणवत्ता दिखाते हैं। प्रबंधन संक्रमित खेतों से निकलने वाले ट्रैक्टर, हल, कंबाइन और अन्य कृषि उपकरणों को साफ खेतों में प्रवेश करने से पहले सावधानीपूर्वक धोया जाना चाहिए। प्रत्येक सिंचाई पर पर्याप्त पानी डालना चाहिए ताकि अगली बार डालने से पहले मिट्टी की सतह पूरी तरह और लंबे समय तक सूख जाए। पौधों में पुष्प धारण के समय फफूँदनाशक जैसे कार्बेडाजिम (1 ग्राम प्रति लीटर पानी) या मैंकोजेब (2.5 ग्राम प्रति लीटर पानी) या कार्बेडाजिम मैंकोजेब (1.5 ग्राम प्रति लीटर पानी) के घोल का छिड़काव 7-10 दिनों के अंतराल पर क्रमशः करना आवश्यक है।

बैक्टीरियल ब्लाइट (जीवाणु जनित अंगमारी) यह रोग पत्तियों पर पानी से लथपथ पीले घेरे वाले विभिन्न आकार एवं नाप के गहरे भूरे या काले धब्बे बनाता है। यह धब्बे पत्ती के किनारे से शुरू होकर अंदर की ओर बढ़ते हैं, जिससे पत्ती के बड़े हिस्से सूख जाते हैं। गंभीर मामलों में पत्तियाँ समय से पहले गिरने लगती हैं। पत्तियों और फूलों के ऊतक गल जाते हैं, और फूल भी काले पड़कर सूख जाते हैं। वर्षा ऋतु में फलियों पर भी छोटे धब्बे बनते हैं, और बाद में फसल की उपज कम हो जाती है। प्रबंधन रोग प्रतिरोधी किस्मों के प्रमाणित एवं स्वच्छ बीजों का उपयोग करना चाहिए। बीजों को स्ट्रेप्टोसाइक्लिन के 100 पी.पी.एम. घोल में 30 मिनट के लिए भिगाने के उपरांत बुआई करनी चाहिए। लोबिया की खेती के बीच में अन्य फसलें बोकर खेत को खाली रखने से मिट्टी में जीवाणु की मात्रा कम होती है। कॉपर-आधारित जीवाणुनाशक जैसे कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (0.3 प्रतिशत) को संक्रमण के प्रारंभिक चरणों में छिड़काव करना चाहिए। गोल्डन या पीला मोजेक यह एक विषाणु जनित रोग है। यह रोग मुख्य रूप से सफेद मक्खी द्वारा फैलता है। यह कीट पत्तियों का रस चूसती हैं और संक्रमण को एक पौधे से दूसरे पौधे तक फैलाती हैं। पत्तियों पर हल्के और गहरे हरे रंग के मोजेक पैटर्न दिखाई देते हैं, और बाद में अधिकांश पत्तियाँ पूर्णतः पीली पड़ जाती हैं। कुछ पत्तियाँ विरूपण और आकार में कमी दिखाते हैं। कुछ पत्तियाँ गंभीर संक्रमण के परिणामस्वरूप मुड़ी हुई, सिकुड़ी हुई और खुरदरी हो जाती हैं। पौधे छोटे रह जाते हैं और उनकी बढ़वार रुक जाती है। फूल जल्दी गर्भपात करते हैं, जिससे फलियों की संख्या कम हो जाती है। संक्रमित फलियाँ अक्सर छोटे व विकृत होते हैं, और साधारणतः हरे रंग से पीली पड़ जाती हैं। संक्रमण की गंभीरता और चरण के आधार पर उपज में 30-70 प्रतिशत की हानि हो सकती है। प्रबंधन रोग प्रतिरोधी या सहिष्णु किस्मों का उपयोग करना चाहिए। रोगग्रस्त पौधों को प्रारंभिक चरण में खेत से हटाकर नष्ट कर देना चाहिए। रोग चक्र को तोड़ने के लिए शुरुआती बुवाई तथा गैर-फलीदार फसलों के साथ फसल चक्र का अभ्यास करना चाहिए। इस रोग को नियंत्रित करने के लिए कार्बोफ्यूरान 1.5 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर की मिट्टी में मिलने के उपरांत बुआई करनी चाहिए। फूल लगने के समय से ही थियामेथोक्सम 1 मिलीलीटर प्रति 3 लीटर पानी में घोल बनाकर 7-10 दिनों के अंतराल पर छिड़काव करते रहना चाहिए।

आत्मनिर्भर कृषि
आत्मनिर्भर मध्यप्रदेश

विकसित भारत अभियान

मध्य भारत में राष्ट्रीय कृषि व
उद्यानिकी तकनीकी प्रदर्शनी

G20

Azadi Ka Amrit Mahotsav

10th INTERNATIONAL AGRI & HORTI TECHNOLOGY EXPO

26-27-28 DECEMBER 2025

CIAE Ground, Navi Bagh, Berasia Road, Bhopal, M. P.

India's Leading Exhibition on
Agriculture, Horticulture, Floriculture, Organic Farming, Dairy & Food Technology

'विकसित कृषि
संकल्प अभियान'

ORGANIZE BY
BME
Bharti Media & Events Pvt. Ltd.

CONFERENCE PARTNER

PLATINUM SPONSOR
BKT
GROWING TOGETHER

MEDIA PARTNERS
कृषक भारती, KRISHI JAGRAN, कृषि तहलका, कृषक जगत, कृषक दूत, KhetiGaadi, Kisaan Helpline

For more information: +91-92122 71729, 83686 10550
E-mail: iahtbhopal@gmail.com, www.iahtexpo.com

Postal Regd. No.: Gwalior/40020242/2025-27

R.N.I. Regd. No.: MPHIN/2006/16946

मध्य भारत कृषक भारती

नवम्बर -2025

KRUSHIPARV

INTERNATIONAL AGRICULTURE EXHIBITION AND CONFERENCE

26 - 29 December 2025

India's Premier International Agriculture
Exhibition And Conference

Nemane Estate, Kedgaon Rd, Ahilya Nagar, Maharashtra - 414005, India.

Soil to Soul : India's Green Power

BE there
BE seen

Organised By | Knowledge Partner | Media Partner | Associate Partner

EXPO INDIAN OCEAN PVT LTD
ONE STEP FOR BUSINESS

TAURAN ADVISORS

GrowthAgri

www.krushiparva.org

स्वामी, मुद्रक, प्रकाशक राजू सिंह गुर्जर द्वारा कंचन ऑफसेट, चिंतामणि शास्त्री की गली, सात भाई की गोठ, लक्कडखाना,ग्वालियर, म.प्र.-474001 से मुद्रित
एवं ई.एम.-120, कुशवाह मार्केट के पास, दीनदयाल नगर, ग्वालियर, म.प्र.-474005 से प्रकाशित। संपादक : राजू सिंह गुर्जर (मोबा. 9425101132, 0751-4070802)